

THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

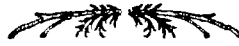
-The TFIC Team.

* श्रीनेमिनाथाय नमः *

जिनवाणी संग्रह

अर्थात्

बृहद् जैन सिद्धान्त संग्रह ।



सम्पादक—

व्याकरण रत्न, पं० सतीशचन्द्र जैन, न्यायतीर्थ ।

पं० कस्तूरचंद छावड़ा “विशारद”

.....

प्रकाशक—

दुलीचंद पन्नालाल, परवार

मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

बड़ाबाजार, कलकत्ता ।

द्वितीय संस्करण १५०० } दीपावली २४५२ { मूल्य सवा दो रुपया ।

प्रकाशक—

दुलीचंद पन्नालाल परवार

मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

पो० ब० ६७४८ कलकत्ता ।

प्रथम खंड हनुमान प्रेसमें तथा द्वितीय खंड
लक्ष्मीप्रिंटिंग वर्क्स प्रेसमें छपा है ।

मुद्रक :—

भोलानाथ बर्मन

लक्ष्मी प्रिंटिंग वर्क्स,

३८०, अपरचितपुर रोड, कलकत्ता ।

प्रकाशकीय वक्तव्य ।

बन्धुओ ! हम आपकी गहरी सहानुभूतिका अनुभव करते हुए सिर्फ तीन हो महिनेमें यह द्वितीयावृत्ति लेकर सेवामें उपस्थित हो रहे हैं । हमें स्वप्नमें भी ऐसी आशा नहीं थी कि आप लोग इतना प्रेम दिखावेंगे । सिर्फ २-२॥ महिनेमें प्रथमावृत्ति खप गई, यह आनंद की बात है । इस नई आवृत्तिमें हमने अरहंतपाशा केवली, शिखर महात्म्य, विद्यावती कृत अनेक पद, संसार दुःख दर्पण, अठारह नाते की कथा आदि और भी बहुतसे आवश्यक विषयोंका समावेश कर दिया है । इससे संग्रह की महत्वता और भी बढ़ जाती है ।

जिन जिन महाशयोंके प्रकाशित विषयोंका हमने इसमें समावेश कर दिया है उन उन महाशयोंके प्रति हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं ।

श्रीमान् परोपकारी बन्धु बा० छोटेलाल जी जैन एम० आर० ए० एस० ने सदैवकी भांति अपनी शुभ सम्मति द्वारा हमें पूर्ण सहायता दी है इस महिती कृपाके लिये कृतज्ञ हैं ।

सम्पादक महाशयोंको भी हम धन्यवाद दिये वगैर नहीं रह सके कि जिनने अपना अमूल्य समय दे कर हमें उपकृत किया है ।

प्रथमावृत्ति की आलोचना जैनमित्र, जैनजगत, परवार बन्धु, खंडेलवाल जैन हितेच्छु आदि प्रसिद्ध पत्रोंने विस्तृत रूपसे खूब ही उत्तम की थी इस कृपाके लिये भी कार्यालय उनका आभारी है । आशा है आप सज्जन इसी तरह कृपा दृष्टि रखेंगे ।

दीपावली—घोर सं० २४५२ } निवेदक—
लीचन्द पन्नालाल, देवरी सागर

बड़ामारी सुभीता ।

१) एक रुपया प्रवेश फी जमा करा देने से हम अपने छपाये तमाम ग्रन्थ पौनी कीमत में दिया करते हैं । नवीन ग्रन्थ जब तैयार होता है वग़ावर १५ दिन पहिले खबर दी जाती है, जिन्हें नहीं लेना होता है उनका पत्र आनेसे नहीं भेजा जाता । अब बताइये कितना लाभ है ?

आजही पत्र लिखकर ग्राहक बन जावें
अगर आप स्वयं ग्राहक हों तो अपने इष्ट
मित्रों को बनाने की कृपा करें ।

“मैनेजर”



जैनधर्म और जैन जातिके परम उपकारी श्रीमान् जैनधर्म-
भूषण, धर्मदिवाकर श्रीब्रह्मचारी शोतलप्रसादजी
सम्पादक—“जैनमित्र और वीर”

के :—

कर कमलों में तुच्छ भेंट यह सादर अर्पण करता हूँ ।
जैनधर्मके नावक पर यह प्रेम पुष्प सर धरता हूँ ॥
प्रेम आपसे बाल बृद्ध, गुण मुग्ध, सभ्य जन करते हैं ।
धर्म स्वरूप समझ कर सच्चा सत्य सौख्य यश भरते हैं ॥
हे शांत हृदय ! अहं पूज्यवर कृपा से अपनाइये ।
कर कमलों में ग्रहण कर सत्य मार्ग दिखलाइये ॥

विनीत—

“सम्पादक”

मंदिरों के लिये बड़ाभारी सुभोता ।

काश्मीरी केशर ।

पवित्र केशर हमारे यहां हर समय तैयार रहती है बहुत ही कम नफा लेकर बेजी जाती है एक बार परीक्षा अवश्य कीजिये । ३) तोला ।

स्फटिक की मालायें ।

चमकती हुई सुन्दर मालायें, हमारे यहां से मंगाईये ।
१) की ४ तथा २५) रुपया सैकड़ा ।

दशांग धूप ।

पवित्रता के साथ तैयार की हुई यह दशांग धूप बहुत ही उत्तम और सुगंधित है दाम ५) रुपया सेर आधपाव का डब्बा ॥२)

हमारा पता—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

बड़ाबाजार—कलकत्ता ।

* श्रीपरमात्मने नमः *

जिनवाणी संग्रह

पहला अध्याय

१ णमोकार मंत्र

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।

इस णमोकार मन्त्रमें पांच पद, पैंतीस अक्षर, अष्टावन मात्राएं हैं ॥

२ णमोकार मन्त्रका माहात्म्य

णमोकार है मंत्र सब पापोंका हर्ता ।

मंगल सबसे प्रथम यही शुचि ज्ञान सुकर्ता ॥

संसार सार है मन्त्र जगतमें अनुपम भाई ।

सर्व पाप अरिनाश मंत्र सबको सुखदाई ॥ १ ॥

संसार छेदके लिये मन्त्र है सर्व प्रधाना ।

बिषको अमृत करे जगतने यह सब माना ॥

कर्म नाश कर ऋद्धि सिद्धि शिव सुखका दाता ॥

मंत्र प्रथम जिन मंत्र सदा तू क्यों नहिं ध्याता ॥२॥

सुर सम्पत्ति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती ।
 सबे विपत्ति विनाश ज्ञानकी ज्योती होती ॥
 पशु पक्षी नर नारि श्वपच जो धारण करते ।
 ज्ञान, मान, धन, धान्य और सुख सम्पत्ति भरते ।
 जीवन्धर थे स्वामि एक जन करुणा धारी ।
 कुत्तेको दे मन्त्र शीघ्र गति भली सुधारी ॥
 मंत्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये ।
 ध्याये जो जन उसे सर्व सुख हों मनचाये ॥४॥

“सतीश”

३ पञ्च परमेष्ठिके नाम

अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधु ।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

नोट—अ सि आ उ सा नाम पञ्च परमेष्ठिका हैं । ॐ में
 पञ्च परमेष्ठिके नाम ही २४ तीर्थङ्करोंके नाम गमित हैं ।

४ चौबीस तीर्थङ्करोंके नाम

१ ऋषभदेव,	२ अजितनाथ,	३ संभवनाथ,
४ अभिनन्दननाथ,	५ सुमति नाथ,	६ पद्मप्रभ,
७ सुपार्श्वनाथ,	८ चन्द्रप्रभ,	९ पुष्पदन्त,
१० शीतलनाथ,	११ श्रेयांशनाथ,	१२ वासुपूज्य,
१३ विमलनाथ,	१४ अनन्तनाथ,	१५ धर्मनाथ,
१६ शांतिनाथ,	१७ कुन्थुनाथ,	१८ अरनाथ,
१९ मल्लिनाथ,	२० मुनिसुव्रतनाथ,	२१ नमिनाथ,
२२ नेमिनाथ,	२३ पार्श्वनाथ,	२४ वर्द्धमान ।

श्रीसमन्तभद्र स्वामी विरचित ।

५ श्रीरत्नकरण्ड श्रावकाचार

नमः श्री वर्द्धमानाय निधूतकलिलात्मने ।
 सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्यादर्पणायते ॥ १ ॥
 देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणम् ।
 संसारदुःखतः सत्त्वान्यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥
 सद्बुद्धिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः ।
 यदीयप्रत्यनोकानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ ३ ॥
 श्रद्धानं परमार्थानां माऽप्तागमतपोभृताम् ।
 त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥
 आप्तं नोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना ।
 भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥ ५ ॥
 श्रुतिपासाजरातङ्कजन्मांतकमयस्मयाः ।
 न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥ ६ ॥
 परमेष्ठो परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती ।
 सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥
 अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सनो हितम् ।
 ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शनमुरजः किमपेक्षते ॥ ८ ॥
 आप्तोपन्नमनुलुङ्घ्यमद्रष्टे प्रविरोधकम् ।
 तत्त्वोपदेशकृत्सार्व शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥ ९ ॥
 विषयाशावशातोतो निरारम्भोऽपरिग्रहः ।
 ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥ १० ॥

इदमेवेदृशमेव तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा ।
 इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसंशया रुचिः ॥ ११ ॥
 कर्मपरवशे सांते दुःखेरन्तरिनोदये ।
 पापबीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकाङ्क्षा क्षणा स्मृता ॥ १२ ॥
 स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते ।
 निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्गता निर्विचिकित्सिता ॥ १३ ॥
 कापथे पथि दुःखानां कापथस्थेऽप्यसम्मतिः ।
 असंपृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा द्वष्टिरुच्यते ॥ १४ ॥
 स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयाम् ।
 वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगृह्णन् ॥ १५ ॥
 दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलैः ।
 प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितिकरणमुच्यते ॥ १६ ॥
 स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथापेतकैतवा ।
 प्रतिपत्तिर्यथायौग्यं वान्सत्यमभिलष्यते ॥ १७ ॥
 अज्ञाननिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम् ।
 जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥ १८ ॥
 तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनन्तमतीस्मृता ।
 उदायनस्तृतीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥
 ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः ।
 विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥ २० ॥
 नाङ्गहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिम् ।
 न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहन्ति विषवेदनाम् ॥ २१ ॥
 आपगासत्तारस्नानमुच्चयः सिकताश्मनाम् ।

गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥
 वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलोमसाः ।
 देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥ २३ ॥
 सग्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्त्तवर्त्तिनाम् ।
 पाखण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम् ॥ २४ ॥
 ज्ञानं पूजां कुलं जातिं बलमृद्धिं तपो वपुः ।
 अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥ २५ ॥
 स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः ।
 सोऽत्येति धर्ममात्मोयं न धर्मौ धार्मिकैर्विना ॥ २६ ॥
 यदि पापनिरोधोऽन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ।
 अथ पापान्नरोऽस्त्यन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ॥ २७ ॥
 सम्यग्दर्शनसम्पन्नमपि मानङ्गदेहजम् ।
 देवा देवं विदुर्मस्मगूढाङ्गारान्तरौजसम् ॥ २८ ॥
 श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकित्विषात् ।
 कापि नाम भवेदन्या सम्पद्वर्माच्छरीरिणाम् ॥ २९ ॥
 भयाशास्नेहलोमाश्च कुदेवागमलिङ्गिनाम् ।
 प्रणामं विनयं चैव न कुर्युः शुद्धद्वष्टयः ॥ ३० ॥
 दर्शनं ज्ञानचारित्रात्साधिमानमुपाश्रुते ।
 दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गं प्रवक्ष्यते ॥ ३१ ॥
 विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः ।
 न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥ ३२ ॥
 गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् ।
 अतगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥ ३३ ॥

आलोच्य सर्वमेनः कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजं ।
 आरोपयेन्महाव्रतमामरणस्थायि निश्शेषं ॥ १२५ ॥
 शोकं भयमवसादं क्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा ।
 सत्त्वोत्साहमुदीयं च मनः प्रसाद्यं श्रुतैरमृतैः ॥ १२६ ॥
 आहारं परिहाप्य क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम् ।
 स्निग्धं च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥ १२७ ॥
 खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
 पंचनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्सर्वेयत्नं ॥ १२८ ॥
 जीवितमरणाशंसे भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः ।
 सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः ॥ १२९ ॥
 निःश्रयमभ्युदयं निस्तोरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् ।
 निष्पवति पीतधर्मा सर्वैर्दुःखैरनालोदः ॥ १३० ॥
 जन्मजरामयमरणः शाकं दुःखैर्भेयैश्च परिमुक्तम् ।
 निर्वाणं शुद्धसुखं निःश्रयसमिष्यते नित्यम् ॥ १३१ ॥
 विद्यादर्शनशक्तिस्वास्थ्यप्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः ।
 निरतिशया निरवधयो निःश्रयसमावसन्ति सुखं ॥ १३२ ॥
 काले कल्पशतेऽपि च गते शिवानां न विक्रिया लक्ष्या ।
 उत्पातोऽपि यदि स्यात् त्रिलोकसम्भ्रान्तिकरणपटु ॥ १३३ ॥
 निःश्रेयसमधिगन्नास्त्रैलोक्यशिखामणिश्रियं दधते ।
 निष्किल्बिकालिकाच्छविचामोकरभासुरात्मानः ॥ १३४ ॥
 पूजार्थाज्ञैश्चर्यैर्बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठैः ।
 अतिशयितभुवनमद्भुतमभ्युदयं फलति सद्धर्मः ॥ १३५ ॥
 श्रावकपदानि देवैरेकादश देशितानि येषु खलु ।

खगुणाः पूर्वगुणैः सह संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥ १३६ ॥
 सम्यग्दर्शनशुद्धः संसारशरीरभोगनिर्विण्णः ।
 पञ्चगुरुचरणशरणो दर्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः ॥ १३७ ॥
 निरतिक्रमणमणुव्रतपञ्चकमपि शीलसमकं चापि ।
 धारयते निःशल्यो योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः ॥ १३८ ॥
 चतुरावर्त्त त्रितयश्चतुष्प्रणामः स्थितो यताजातः ।
 सामयिको द्विनिषद्यस्त्रियोगशुद्धस्त्रिसन्ध्यमभिवन्दो ॥ १३९ ॥
 पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगृह्य ।
 प्रोषधनियमविधध्यायी प्रणधिपरः प्रोषधानशनः ॥ १४० ॥
 मूलफलशाकशाखाकरीरकन्दप्रसूनबीजानि ।
 नामानि योऽस्ति सोऽयं सचित्तविरतो दयामूर्तिः ॥ १४१ ॥
 अन्नं पानं खाद्यं लेह्यं नाशनाति यो विभावयाम् ।
 स च रात्रिभुक्तिविरतः सत्त्वेष्वनुकम्पमानमनाः ॥ १४२ ॥
 मलबीजं मलयोनिं गलन्मलं पूतिगन्धिबीभत्स ।
 पश्यन्नुमनङ्गाद्विरमति यो ब्रह्मचारी सः । ॥ १४३ ॥
 सेवाकृषिवाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपारमति ।
 प्राणातिपातहेतोर्योऽसावारम्भविनिवृत्तः ॥ १४४ ॥
 बाह्ये पुदशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्गमत्वरतः ।
 स्वस्थः सन्तोषपरः परिचित्तपरिग्रहाद्विरतः ॥ १४५ ॥
 अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहिकेषु कर्मसु वा ।
 नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स मन्तव्यः ॥ १४६ ॥
 गृहतो मुनिव्रतमिवा गुरुपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य ।
 भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखण्डधरः ॥ १४७ ॥

पापमरातिधर्मो बन्धुर्जोवस्य चेति निश्चिन्वन् ।
 समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति ॥ १४८ ॥
 येन स्वयं बीतकलंकविद्या दृष्टिक्रियारत्नकरण्डभावम् ।
 नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिषुविष्टेषु ॥ १४९ ॥
 सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव
 सुनमिव जननो मां शुद्धशीला भुनक्तु ।
 कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनोता-
 ज्जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ॥ १५० ॥

६ द्रव्यसंग्रह

जीवमजीवं द्रव्यं जिनवरवसहेण जेण णिहिट्ठं । देविन्द्विंदं
 वंदं वदे तं सर्व्वदा सिरसा ॥ १ ॥ जीवो उवओगमओ अमुत्ति
 कत्ता सदेह परिमाणो । भोत्ता संसारत्थो सिद्धा सो विस्ससाढ-
 गई ॥ २ ॥ तिक्काले चट्ठपाणा इंदिय बलमाउ आणपाणोय ।
 ववहारा सो जावो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स ॥ ३ ॥ उवओगो
 दुवियप्पो दंसण णाणं च दंसणं चट्ठधा । चक्खु अचक्खू ओही
 दंसणमध केवलं णेयं ॥ ४ ॥ णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदि ओही
 अणाणणाणाणि । मणपज्जय केवलमवि पञ्चक्खपरोक्खभेयं च
 ॥ ५ ॥ अट्ठचट्ठपाणाणंदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं । ववहारा
 सुट्ठणया सुट्ठं पुण दंसणं णाणं ॥ ६ ॥ वण्ण रस पञ्च गंधा दो
 फासा अट्ठ णिच्चया जीवे । णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति
 बंधादो ॥ ७ ॥ पुग्गलक्कम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णियच्चयदो ।
 चेदणक्कम्माणादा सुट्ठणया सुट्ठभाषाणं ॥ ८ ॥ ववहारा सुहदुक्खं

पुगलकम्मफलं पभुंजेदि । आदाणिच्चयणयदो चेदणभावं खु
 आदस्स ॥ ६ ॥ अणुगुरुदेहपमाणा उवसंहारप्पसप्पदो चेदा ।
 असमुहदा ववहारा णिच्चयणयदो असङ्खुदेसो वा ॥ १० ॥ पुढविज-
 लते उवाऊवणफफदी विवहथावरेइंदी । विगतिग चदुपञ्चस्वा तस-
 जीवा होंति संखादि ॥ ११ ॥ समणा अमणा णेया पञ्चो दिव णिम्मणा-
 परे सव्वे । वादरसुइमेइंदो सव्वे पज्जत्त इदराय ॥ १२ ॥ मगणगुण-
 ठाणेहिं य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया । विण्णेया ससारी
 सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥ १३ ॥ णिकम्मा अट्टगुणा किंचूणा चरमदेह-
 दो सिद्धा । लोयगगिदा णिच्चा उप्पादवयेहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥
 अज्जीवो पुण णेओ पुगल धम्मो अधम्म आयासं । कालो पुगल
 मुत्तो रुवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥ १५ ॥ सदो वन्थो सुहमो
 थूलो सण्ठाणभेदतमछाया । उज्जोदादवसहिया पुगलदव्वस्स
 पज्जाया ॥ १६ ॥ गइपरिणयाण धम्मो पुगलजीवाण गमणसहयारी
 तोयं जह मच्छाणं अच्छंताणेव सो णेई ॥ १७ ॥ ठाणजुदाण
 अधम्मो पुगलजीवाण ठाणसहयारी । छाया जह पहियाणं गच्छं-
 ता णेव सो धरई ॥ १८ ॥ अवगासदाणजोगं जीवादीणं वियाण
 आयासं । जेणं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १९ ॥
 धम्माधम्मा कालो पुगलजीवा य संति जावदिये । आयासे सो
 लोगो तत्तो परदो अलोमुत्तो ॥ २० ॥ दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो
 हवेइ ववहारो । परिणामादो लक्खो वट्टणलक्खो य परमट्टो ॥ २१ ॥
 लोयायासपदेसे इक्के के जे द्विया हु इक्केका । रयणाणं रासोमिव
 ते कालाणू असंखदव्वणि ॥ २२ ॥ एवं छब्भेयमिदं जीवाजवप्पभेददो
 दव्वं । उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पञ्च अत्थिकाया दु ॥ २३ ॥ संति

जदो तेणेदे अत्थीति भणंति जिणवरा जम्हा । काया इव बहुदेसा
तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४॥ होंति असंखा जीवे धम्म-
धम्म अणंत आयासे । मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण
सो काओ ॥२५॥ एयपदेसो वि अणू णाणाखंधपपदेसदो होदि ।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वणहु ॥२६॥ जावदिअं
आयासे अविभागी पुग्गलाणुवट्ठं । तं खुपदेसं जाणे सव्वाणु-
ट्ठाणदाणरिहं ॥२७॥ आसवबंधणसंवरणिज्जर मोक्खा सुपुण्णपावा
जे । जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पमणामो ॥२८॥ आसवदि
जेण कम्मं परिणामेणप्पणो स विण्णोओ । भावासवो जिणुत्तो
कम्मासवणं परो होदि ॥२९॥ मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहाद-
ओऽथ विण्णोया । पण पण पणदह तिय चट्ठ कमसो भदा दु
पुव्वस्स ॥३०॥ णाणावरणादीणं जोगं जं पुग्गलं समासवदि ।
दव्वासवो स णोओ अणेयभेदो जिणक्खादो ॥३१॥ बज्झदि कम्मं
जेण दु चेदणभावेण भावबधो सो । कम्मादपदेसाणं अण्णोण-
पवेसणं इदरो ॥३२॥ पयडिद्विदिअणुमागापपदेसभेदा दु चट्ठविधो
बंधो । जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुमागा कसायदो होंति ॥३३॥
चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ । सो भावसंवरो
खलु दव्वासवरोहणअण्णो ॥ ३४ ॥ वदसमिदीगुत्तोओ धम्माणु-
पिहा परोसहजओ य । चारित्तं बहुमेयं णायव्वा भावसंवरविसे-
सा ॥३५॥ जहकालेण तवेण य भुत्तरत्तं कम्मपुग्गलं जेण । भावेण
सड्दि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ॥३६॥ सव्वस्स
कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो दु परिणामो । णोओ स भावमोक्खो
दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो ॥३७॥ सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं

न्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकांतासुव-
र्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः
पूर्वा पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरि-
वृता गंगासिन्धवादयो नद्यः ॥ २३ ॥ भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनश-
तविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागायोजनस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुणद्विगु-
णविस्तारा ॥ २५ ॥ वषधरवर्षा विदेहान्ताः उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥
भरनैरावतयोर्वृद्धिहासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिर्णयवसर्पिणीभ्याम्
॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥ एकद्वित्रिपत्योपमस्थि-
नयो हैमवनकहारिवर्षकटैवकुरवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु
सङ्ख्येयकाला ॥ ३१ ॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशत-
भागः ॥ ३२ ॥ द्विर्द्वातकीखण्डे ॥ ३३ ॥ पुष्करार्द्धं च ॥ ३४ ॥ प्राङ्मानु
षोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरनैरावतविदेहाः
कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुस्तत्तुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थितौ परावरे त्रिप-
त्योपमान्तमुद्धते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मान्नगास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेभ्यः ॥ २ ॥
दशाष्टपञ्चदशविकल्पाः कल्पोपपन्नपट्यन्ताः ॥ ३ ॥ इन्द्रसामानिक-
त्रायस्त्रिंशत्परिपदात्तरक्षलोकपालनीकप्रकीर्ण कामियोग्यकिल्बि-
षिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवज्र्याव्यन्तरज्योतिष्काः
॥ ५ ॥ पूर्वयाद्वेन्द्राः ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ पेशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः
स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचारा ॥ ८ ॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥ भवनवासि-
नोऽसुरनागविद्युत्सु पर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥ १० ॥
व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः

॥ ११ ॥ ज्योतिष्काः सूर्यावन्दमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतराकश्च
 ॥ १२ ॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालवि-
 भागः ॥ १४ ॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥ कल्पोपपन्ना
 कल्पानीताश्च ॥ १७ ॥ उपर्युपरि ॥ १८ ॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमा-
 हेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्ठशुक महाशुक शतारसहस्रारं प्वान-
 तप्राणतयोरा रणाच्युतयोर्नवसुध्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापरा-
 जितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभावसुबद्धु तिलेश्याविशुद्धी-
 न्द्रियावधिविषययोऽधिकाः ॥ २० ॥ गतिशरीरपरिग्रहाऽभिमानतो
 हीनाः ॥ २१ ॥ पीतपद्मशुक्लेश्याद्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः
 कल्पाः ॥ २३ ॥ ब्रह्मलोकालयालौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादि
 त्यवहृयरुणगर्दतोयतुषिताव्यावाधारिष्ठाश्च ॥ २५ ॥ विजयादिषु
 द्विचरमाः ॥ २६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनमयः ॥ २७ ॥
 स्थितिरसुरनागसुपर्णाद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धही-
 नमिताः ॥ २८ ॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥ २९ ॥ सान-
 त्कुमारमाहेन्द्रयोः सम ॥ ३० ॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चद-
 शभिर्धिकांस्तु ॥ ३१ ॥ आरणाच्युतादूर्द्धमेकैकेन नवसुध्रैवेयकेषु
 विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरापल्योपममधिकम्
 ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तरा ॥ ३४ ॥ नारकाणां च
 द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥ भव
 नेषु च ॥ ३७ ॥ व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥ परापल्योपममधिकम् ॥ ३९ ॥
 ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥ लौकान्तिकाना-
 मष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥
जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रुपिणः पुद्गलाः
॥ ५ ॥ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥
असङ्ख्येयाः प्रदेशाः धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्यानन्ताः
॥ ९ ॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥
लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदे-
शादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम्
॥ १५ ॥ प्रदेशसंहार विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥ १६ ॥ गति स्थित्यु-
पग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥
शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुखदुःखजीवितमरणो-
पग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परुपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्त्तनापरिणा-
मक्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्ग-
लाः ॥ २३ ॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायाऽऽतपोद्यो-
तवन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवःस्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्प-
द्यन्ते ॥ २६ ॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥
सद्व्यलक्षणम् ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौवयुक्तं सत् ॥ ३० ॥
तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पित सिद्धेः ॥ ३२ ॥ स्वध-
रुक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ नजघन्यगुणानाम् ॥ ३४ ॥ गुणसाम्ये स-
दृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौ
पारिणामिकौ च ॥ ३७ ॥ गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च
॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥ ४० ॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥ ४१ ॥
तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाभिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनः कर्मयोगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः
 पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकषायाकषाययोः साम्पराधिके-
 र्थापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशति-
 संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीये
 विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाऽजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं
 संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्च
 तुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निवर्तनानिक्षेपसंयागनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः
 परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिहवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदशो-
 नावरणयोः ॥ १० ॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनबधपरिदेवनान्यात्मपरो-
 भयस्थानान्यसद्देयस्य ॥ ११ ॥ भूतवृत्त्यनुकम्पादान सरागसंयमा-
 दियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्देयस्य ॥ १२ ॥ केवलेश्रुतसङ्ख्यभ्रमं
 देवावणोवादो दशेनमाहस्य ॥ १३ ॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारि-
 त्रमाहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥ माया-
 तैर्यग्यानस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥ स्वमा-
 वमादेवं च ॥ १८ ॥ निःशीलव्रततत्त्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥ सरागसंय-
 मसंयमासंयमाऽकामनिज्ज राबालतर्पांसि दैवस्या ॥ २० ॥ सम्यक्त्वं च
 ॥ २१ ॥ यागवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥ तद्विपरातं
 शुभस्य ॥ २३ ॥ दशेनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नताशीलव्रतेष्वनतोचाराऽ
 भाक्षणज्ञानोपयोगसंवेगौशक्तितस्त्यागतपसा साधुसमाधिर्वैयानृत्य
 करणमहदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिमार्गप्रभावना
 प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे
 सदसद्गुणोच्छादनोद्भावेन च नोर्चर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥ तद्विपर्ययौ नीचै-
 वृत्युनुत्सेकौचोत्तरस्य ॥ २६ ॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिव्रतम् ॥ १ ॥ देशसर्व-
तोऽणुमहती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्-
मनोगुप्तोर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभाजनानि पञ्च ॥ ४ ॥
क्राधलोभभोर्वहस्यप्रत्याख्यानान्यनुवोचिभाषणं च पञ्च ॥ ५ ॥
शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माऽविसंवादः
पञ्च ॥ ६ ॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वैरतानुस्मरण-
वृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय-
विषयरोगद्वेषवर्जनानि पञ्च ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्श-
नम् ॥ ९ ॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि
च सत्त्वगुणाधिककृद्भिः विनयेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ
वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा
॥ १३ ॥ असदभिमानमनृतम् ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥
मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥ मूर्छा परिग्रहः ॥ १७ ॥ निःशल्यो व्रती
॥ १८ ॥ अगाथेनगारश्च ॥ १९ ॥ अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥
दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमा-
णातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणान्तिकी सल्लेखनां
जोषिता ॥ २२ ॥ शङ्काकांक्षावचिकित्साऽन्यद्वृष्टिप्रशंसासंस्तवाः
सम्यग्दृष्टे रतीचाराः ॥ २३ ॥ व्रतशौलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ॥ २४ ॥
बन्धवद्यच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेश-
रहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥
स्तेनप्रयोगतदाहतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरु-
पकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीताऽपरिगृहीता
गमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्य-

महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
 महापराक्रमोऽनंतो महाकोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥ महाभवाश्विसंतारिर्महा-
 मोहाद्रि सूदनः । महागुणाकरः क्षांतो महायोगेश्वरः शमो ॥ ६ ॥
 महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिहात्मज्ञो महा-
 देवो महेशिता ॥ ७ ॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्ये
 योऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥ ८ ॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः
 श्रुतात्मा विष्टरश्चवाः । दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः
 ॥ ९ ॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिपरमः परमोदयः । प्रक्षीणबंधकामारिः
 क्षेमकृत्क्षेमवासनः ॥ १० ॥ ऽणवः प्रणयः प्राणः प्रणादः प्रणतेश्वरः
 प्रमाणं प्रणिभिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युश्चरः ॥ ११ ॥ आनन्दो नंदनो नंदो
 वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः । कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिजयः ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥ ६ ॥

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत् । अंतकृत्कांतगुःकां-
 तश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥ १ ॥ अजितो जितकामारिरमितोऽमितशास-
 नः । जितकोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ॥ २ ॥ जिनेन्द्रः
 परमानन्दो मुतोन्द्रो दुन्दुमिस्वतः । महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतोन्द्रो
 नाभिनन्दनः ॥ ३ ॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुवतो मनुस्त्वतः । अभे-
 द्योऽनत्योनश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ॥ ४ ॥ सुमेधा विक्रमो म्बामो
 दुराधर्षो निरुत्सुकः । विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्ट प्रत्ययः कर्मणोऽनघः
 ॥ ५ ॥ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षयः क्षेमधर्मपतिः क्षमो । अप्राह्यो ज्ञाननि
 प्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥ ६ ॥ सुकृतो धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुरा-
 ननः । श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्थश्चतुर्मुखः ॥ ७ ॥ सत्यात्मा सत्व-
 विज्ञानः सत्यवाकसत्यशासनः सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः

सत्यपरायणः॥८॥ स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्द्वीयान्दूरदर्शनः । अणो
रणोयाननणुर्गुरुर्यो गरीयसाम् ॥९॥ सदायोगः सदाभोगः सदा
तृप्तः सदाशिवः । सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥
सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तागुप्तिभृद्गोप्त
लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥७॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः । मनीषिधिपणो
धोमाञ्छेमुपीशो गिरांपतिः ॥ १ ॥ नैकरूपो नयस्तुङ्गो नैकात्मा
नैकधर्मकृत् । अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥ २ ॥
ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्मगर्भो जगद्गर्भो
हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥ लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो द्वितीयानिर्देशि-
ता । मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ॥४॥ धर्मयूपो दया-
यागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः । धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः
॥५॥ अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरूपः सुभगस्त्या-
गो समयज्ञः समाहितः ॥६॥ सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को
निरुद्धवः । अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥
वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःस्पृहो जितेन्द्रियः । प्रशान्तोऽनन्तधाम-
विर्मङ्गलं मलहानघः ॥ ८ ॥ अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्देवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानेकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्मगम्यो
गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः । सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविष-
यार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः शबदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥ ११ ॥ त्रिजगद्ब्रह्मोऽभ्य-
र्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः । त्रिजगत्पतिपूजाङ्घ्रिस्त्रिखिलोकाग्रशिखा-
मणिः ॥ १२ ॥ इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शो लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः । सर्वलोकार्तिगः
 पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १ ॥ पुण्यपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
 आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥ युगमुख्यो युगज्येष्ठो
 युगादिस्थितिदेशकः । कल्याणवर्णः कल्याणः कलयः कल्याणलक्षणः
 ॥ ३ ॥ कल्याणप्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्मा विकल्मषः । विकलङ्कुः कला-
 तीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्गन्धुर्जगद्विभुः ।
 जगद्वितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगद्व्रजः ॥ ५ ॥ चराचरगुरुर्गोप्यो
 गूढात्मा गूढगोचरः । सद्योजानः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः
 ॥ ६ ॥ आदित्यवर्णो भर्माभिः सुप्रभः कनकप्रभः । सुवर्णवर्णो रुक्माभिः
 सूर्यकोटिसप्रभः ॥ ७ ॥ तमनीयनिभस्तुङ्गो बालार्कभोऽनलप्रभः ।
 संध्याभ्रवभ्रुर्हर्माभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ ८ ॥ निष्ठप्रकनकच्छायः कन-
 त्काञ्चनसन्निभः । हिरण्यवर्णः स्वर्णाभिः शातकुम्भनिभप्रभः ॥ ९ ॥
 द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजाम्बूनदद्युतिः । सुधौतकलधौतश्रोःप्रदीप्तो
 हाटकद्युतिः ॥ १० ॥ शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षक्षमः । शत्रु-
 ष्णोप्रतिशोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥ ११ ॥ शान्तिनिष्ठो
 मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः । शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्ति-
 मान्कामितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरग्निष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
 सुस्थितः स्थावरः स्थाणुः प्रथोयान्प्रथितः पृथुः ॥ १३ ॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥ ६ ॥

दिवासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः निष्कञ्चनो
 निराशंसो ज्ञातचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥ तेजोराशिनिरन्तोजा ज्ञानाब्धिः
 शीलसागरः । तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥ जग-
 च्छूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः । कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोका-

लोकप्रकाशकः ॥३॥ अनिद्रालुप्तन्द्रालुर्जागरूकःप्रभामयः । लक्ष्मी-
पतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥ मुमुक्षुर्वन्धमोक्षज्ञो जिता-
श्चो जितमन्मथः । प्रशान्तरसैशूलूपो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥
मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः । आमो वागेश्वरः श्रेया-
ञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥ ६ ॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विभ-
भाववित् । सुननुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हनदुनयः ॥ ७ ॥ श्रीशः श्री-
श्रिनपादाब्जो वीतपीरभयङ्कुरः । उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो
लोकवत्सलः ॥ ८ ॥ लोकोत्तरो लोकपतिलोकचक्षुरपारधीः । धीर-
धोर्बुद्धिसन्मार्गः शुद्धः सूनूनपूतवाक् ॥ ९ ॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो
यतिर्नियमितेन्द्रियः । भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षे वरप्रदः ॥ १० ॥
समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः । कमण्यः कर्मठः प्रांशुर्हे-
यादेयविचक्षणः ॥११॥ अनन्त शक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १२ ॥ समन्तभद्रः शां-
तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शो जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः
॥१३॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः । धर्मपालो जग-
त्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥ १० ॥

धाम्नांपते तवामृनि नामान्यागमकोविहैः । समुच्चितान्यनुध्या-
यन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥ १ ॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवागो-
चरो मतः । स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं भवेत् ॥२॥
त्वमतोऽसि जगद्भवन्पुस्त्वमतोऽसि जगद्विषक् । त्वमतोऽसि जग-
द्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥३॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्वि-
रूपोपयोगभाक् । त्वं त्रिरूपेकमुक्त्यङ्गं सोत्थानन्तचतुष्टयः ॥ ४ ॥

त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्च कल्याणनायकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं
समनयसंग्रहः ॥५॥ दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिविक्रः । दशा-
वतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥ ६ ॥ युष्मन्नामावलीढूयविल-
सत्सोत्रमालया । भवन्तं वरिषस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥ ७ ॥
इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति शक्तिकः । यः स पाठं पठत्येनं स
स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥ ततः सदेहं पुण्यार्थो पुमान्पठति पुण्य-
धीः । पोरूहूर्ती श्रियं प्राप्नुं परमामभिलाषुकः ॥९॥

इति भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितादिपुराणान्तर्गतं
जिनसहनश्रामस्तवनं समाप्तम् ।

१२ एकोभाक्स्तोत्रम् ।

(श्रीवादिराजप्रणीतम्)

एकोभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो घोरं दुःखं भव-
भवगतो दुर्निवारः करोति । तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे भक्तिरु-
न्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तथा कोपरस्तापहेतुः ॥ १ ॥
ज्योतीरुरं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं त्वामेवाहुर्जिनवर ! चिरं
तात्वविद्याभियुक्ताः । चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्गासमानस-
स्मिन्नहः कथमिव तमो वस्तुनो वस्तुमोष्टे ॥ २ ॥ आनन्दाश्रुस्त-
पितवदनं गद्गद चाभिजल्पन्त्यश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमन्त्रै-
र्भवन्तम् । तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्तिष्का-
स्यन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥ ॥ प्रागेवेह त्रिदिवभव
नादेध्यता भव्यपुण्यात्पृथ्वीव क्रं कनकमयतां देव नित्ये त्वयेदम् ।
ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्वान्तगोहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन ! वपुरिदं

कुंथगिरि सोय ॥ कुलभूषण देशभूषण नाम । तिनके चरणन करूँ ह
प्रणाम ॥ १७ ॥ जसस्थराजाके सुत कहे । देशकलिंग पांचसौ लहे ॥
कोटि शिला मुनि कोटिप्रमान । बंदन करूँ जोर जुगपान ॥ १८ ॥
समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद । रेसंदीगिरि नयनानन्द ॥ वरदत्तादि
पंच ऋषिराज । ते वंदौं नित धरमजिहाज ॥ १९ ॥ तीन लोकके
तीरथ जहां । नित प्रति वंदन कीजे तहां । मन वच कायसहित
सिर नाय । वंदन करहिं भविक गुण गाय ॥ २० ॥ संवत सतरहसौ
इकताल । अश्विन सुदि दशमो सुविशाल ॥ “मैया” वंदन करहि
त्रिकाल जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥ २१ ॥

इति निर्वाणकांड भाषा ।

१६ महावीराष्टकस्तोत्रम् ।

शिवरिणी छन्दः ।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः । समं भांति ध्रौव्य-
व्ययजनिलसन्तोऽन्तरहिताः ॥ जगत्साक्षो मार्गप्रकटनपरो भानु-
रिव यो । महावीरस्वामी नयनपथगामो भवतु मे (नः) ॥ १ ॥ अताम्रं
यञ्चभ्रुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं । जानान्कोपापायं प्रकटयति
वाभ्यन्तरमपि ॥ स्कूटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला ।
महावीर० ॥ २ ॥ नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं । लस-
त्पादाभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां ॥ भवज्ज्वाला शान्त्यै प्रमथति
जल वा स्मृतमपि । महावीर० ॥ ३ ॥ यदर्द्धाभावेन प्रमुदितमना
ददुर इह । क्षणादासीत्स्वर्गो गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥ लभन्ते
सद्गताः शिवसुखसमाजं किमु तदा । महावीर० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णा-

भासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धा-
 र्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रोमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः । महावीर०
 ॥ ५ ॥ यदीया चाग्ङ्गा विविधनयकल्लोलविमला । बृहज्ज्ञानाम्भो-
 मिर्जगति जनतां या लपयति ॥ इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः
 परिचिता । महावीर० ॥ ६ ॥ अनिवारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम-
 सुभटः । कुमारवस्थायामपि निजवलाद्येन विजितः ॥ स्फुरन्नि-
 त्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनः । महावीर० ॥ ७ ॥ महामोहा-
 तङ्कुप्रशमनपराकस्मिकमिषग् । निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मङ्ग-
 लकरः ॥ शरण्यः साधूनां भवभयभृत्तामुत्तमगुणो । महावीर०
 ॥ ८ ॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् । यः पठेच्छु-
 ण्याश्चापि स याति परमां गतिम् ॥ ९ ॥

१७ महावीराष्टक भाषा

पं० गजाधरलालजी, न्यायतीर्थ

जिन्होंकी प्रज्ञामें, मुकुरसम चैतन्य जड़ भी, स्थिती नाशोत्पत्ती,
 युत भलकते साथ सब ही । जगद्ज्ञाता मार्ग, प्रकट करते सूर्य-
 सम जो, महावीरस्वामी, द्रश हमको दें प्रकट वे ॥ १ ॥ जिन्होंके
 दो चक्षू, पलक अरु लाली रहित हो, जनोंको दर्शाते, हृदयगत
 क्रोधातिलयको । जिन्होंकी शांतात्मा, अतिविमलमूर्ती स्फुटमहा,
 महावीरस्वामी, द्रश हमको दें प्रकट वे ॥ २ ॥ नमते इंद्रोंके, मुकुट-
 मणिकी कांति धरता, जिन्होंके पादोंका युग, ललित, संतत
 जनको । भवाग्नीका हर्ता, स्मरण करते ही सुजल है, महावीर-
 स्वामी, द्रश हमको दें प्रकट वे ॥ ३ ॥ जिन्होंकी पूजासे, मुदित-

मन हो मेंढक जवै, हुआ स्वर्गो ताहो, समय गुणधारो अति-
सुखी । लहै जो मुक्तीके, सुख भगत तो विस्मय कहा, महावीर-
स्वामी, द्रश हमको दें प्रगट वे ॥ ४ ॥ तपे सोने ज्यों भी, रहित
बपुसे, ज्ञानगृह हैं, अकेले नाना भी, नृपतिवर सिद्धार्थ सुन-हैं ।
न जन्मे भी श्रीमान्, भवरत नहीं अद्भुतगती, महावीरस्वामी द्रश
हमको दें प्रकट वे ॥ ५ ॥ जिन्होंकी वाग्गंगा, अमल नयकलोल
धरती, न्हावाती लोगोंको, सुविमल महा ज्ञान जलसे । अभी
भी संते हैं, बुधजन महाहंस जिसको, महावीरस्वामी, द्रश
हमको दें प्रकट वे ॥ ६ ॥ त्रिलोकीका जेता, मदनभट जो दुर्जय
महा, युवावस्थामें भी, वह दलित कीना स्वबलसे । प्रकाशी
मुक्तीके, अतिसुखदाता जिनविभू, महावीरस्वामी, द्रश हमको
दे प्रकट वे ॥ ७ ॥ महामोहव्याधो, हरणकरता वैद्य सहज, बिना
इच्छा बंधू, प्रथितजग कल्याण करता । सहारा भव्योंको सकल
जगमें उत्तम गुणी, महावीरस्वामी, द्रश हमको दें प्रकट वे ॥ ८ ॥

संस्कृत वीराष्टक रच्यो, भागवद् रुचिवान ।

तस भाषा अनुवाद यह, पढ़ि पावै निर्वान ॥ ६ ॥

१८ अकलंक स्तोत्र ।

शार्दूल विक्रीडित छन्द ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सलोकमालोकितम् । साक्षा-
द्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि ॥ रागद्वेषभया मया-
न्तकजरा लोलबलोभादयो, नालं यत्पदलघनाय स महादेवो मया
वन्द्यते ॥ १ ॥ क्षयं येन पुरत्रयं शरभवा तीव्राविषा बन्धिना ।

यो वा ब्रूयति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः ॥ सोऽयं किं
मम शङ्करो भयतृषारोषार्तिमोहक्षयं । कृत्वा यः स तु सर्ववित्तनुभृ-
तां क्षेमंकरःशङ्करः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्देत्येन्द्रवक्षः-
स्थलम् । सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥ नासौ
विष्णुरनेककालविधयं यज्ज्ञानमव्याहृतम् । विश्वं व्याप्य विजृम्भते
स तु महाविष्णुः सद्गुणो मम ॥ ३ ॥ ऊर्वश्यामुदपादि रागवहुलं
चेतो यदीयं पुनः । पात्री दण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थि-
तिम् ॥ आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशाम् । श्रुत-
ष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥ ४ ॥ योज्यध्वा-
पिशितं समत्स्यकवलं जीवंच शून्यं बद्धम् । कर्त्ता कर्मफलं न भुंक्त
इति यो बक्ता स बुद्धः कथम् ॥ यज्ज्ञानं क्षणवर्ति वस्तु सकले ज्ञातुं
न शक्तं सदा । यो जानन्पुण्यपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धो मम ॥ ५ ॥

स्वर्गधरा छन्द-ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूल-
पाणिः कथं स्यात् । नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः
सात्मजश्च ॥ आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मा-
न्तरायः । सक्षपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धामानुपास्ते
॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेग विभ्रान्तचेताः । शम्भुः
खड्गवाङ्मधारीगिरिपतितनयापांग लीलानुविद्धः । विष्णुश्चकाधिपः
सन्दुहितरमगमेद्रोपनाथस्य मोहादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः
कोऽयमेवाप्तनाथः ॥ ७ ॥

शार्दूल विक्रोडित छन्द-एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रं
सहस्रं भुजानेकः शेषभुजङ्गभोगशयने व्याधाय निद्रायते । दृष्टुं
चारुतिलोत्तमामुखमगा देकश्चतुर्वक्त्रता । मेते मुक्तिपथं वदन्ति वि-
दुषा मित्येतदत्यद्भुतम् ॥ ८ ॥

रयं विहताधिकारः । मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजात्त्रिधा
 धृतधनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥ २६ ॥ स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन-
 कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन । माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन
 सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥ २७ ॥ दिव्यस्रजो जिन नमस्त्रि-
 दशाधिपानामुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान् । पादौ श्रयन्ति
 भवतो यदि वा परत्र त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ २८ ॥
 त्वं नाथ जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि यत्तारयस्त्यसुमतो निज-
 पृष्ठलग्नान् । युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव चित्रं विभो
 यदसि कमविपाकशून्यः ॥ २९ ॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुः-
 तस्त्वं किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश । अज्ञानवत्यपि सदैव
 कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतुः ॥ ३० ॥ प्रा-
 ग्भारसम्भृतनमांसि रजांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन
 यानि । छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो शस्तस्त्वमीभिर-
 यमेव परं दुरात्मा ॥ ३१ ॥ यद्गर्जद्गूर्जितघनौघमदभ्रभीमं
 भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारम् । दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि
 दध्रे तेनैव तस्य जिन दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ ३२ ॥ ध्वस्तोर्ध्व-
 केशविकृताकृतिमत्येमुण्डप्रालम्बभृद्वयदवकत्रविनिर्यदग्निः । प्रेन-
 व्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःख-
 हेतुः ॥ ३३ ॥ धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसन्ध्यमाराधयन्ति
 विधिर्वद्विभुतान्यकृत्वाः । भक्तयोऽसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः पाद-
 द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥ ३४ ॥ अस्मिन्नपारभववा-
 रिनिधौ मुनीश ! मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि आकर्णिते
 तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे किं वा विपद्विषयरी सबिधं समेति ॥ ३५ ॥

जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव ! मन्ये मया महितमीहितदान-
दक्षम् । तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां जातो निकेतनमहं म-
थिताशयानाम् ॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन पूर्वं विभो
सकृदपि प्रविलोकितोऽसि । मर्माविधा (भिदो) विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ ३७ ॥ आकर्णितोपि महितोऽपि
निरीक्षितोपि नूनं न चेतसि मया बिभृतोऽसि भक्त्या । जातोऽ-
स्मि तेन जनबाधव दुःखपात्रं यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-
शून्याः ॥ ३८ ॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य कारुण्यपुण्यवसते
वशिनां वरेण्य । भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय दुःखाङ्कुरो-
द्गलनतत्परतां विधेहि ॥ ३९ ॥ निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्यमा-
साद्य सादितरिपुप्रथितावदानम् । त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानव-
न्ध्यो वन्ध्योऽस्मि तद्वुवनपावन हा हतोऽस्मि ॥ ४० ॥ देवेन्द्रवन्द्य
विदिताखिलवस्तुसार संसारतारक विभो भुवनाधिनाथ । त्राय-
स्व देव करुणाहृद मां पुनीहि सीदन्तमद्य भयदव्यसनान्वुराशः ॥ ४१ ॥
यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रिसरोरुहाणां भक्तेः फलं किमपि सन्ततस-
ञ्चितायाः । तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव
भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥ ४२ ॥ इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र
सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागाः । त्वद्विम्बनिर्मलमुखाम्बुजव-
दलक्ष्याः ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ॥ ४३ ॥ जननयन-
कुमुदचन्द्र—प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा । ते विगलितमलनि-
चया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥ ४४ ॥



२१ कल्याण मन्दिर (भाषा)

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।

बंदू परमानन्दमय, घट घट अन्तर लीन ॥

चौपाई ।

निर्भय करण परम परधान । भव समुद्र जल तारण यान ॥
 शिव मन्दिर अग्रहरण अनिन्द । बन्दू पाश्वे चरण अरविन्द ॥१॥
 कमठ मान भञ्जन बरवीर । गरिमा सागर गुण गम्भीर ॥
 सुर गुरु पारि लहै नहिं जासु । मैं अजान गुण जम्पू तासु ॥२॥
 प्रभु स्वरूप अति अगम अथाह । क्यों हमसे यह होय निबाह ॥
 ज्यों दिन अन्ध उलूको पोत । कहि न सकै रवि किरण उद्योत ॥३॥
 मोह होन जानै मन माहिं । तोहि न तुल गुण बरणे जाहिं ॥
 प्रलय पयोधि करै जल बौन । प्रगटहि रत्न गिने तिहि कीन ॥४॥
 तुम असंख्य निर्मल गुण खान । मैं मनिहीन कहौं निज बान ॥
 ज्यों बालक निज बाहिं पसार । सागर परिमित कहे बिचार ॥५॥
 जो योगोन्द्र करहिं तप खेद । तेउ न जानहिं तुम गुण भेद ॥
 भक्ति भाव मुझ मन अभिलाष । ज्यों पक्षी बोलैं निज भाष ॥६॥
 तुम यश महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन आधार ॥
 आवै पवन पद्म सर होय । ग्रीष्म तपन निवारि सोय ॥७॥
 तुम आवत भविजन मन मांहिं । कमं निबन्ध शिथिल हो जाहिं ॥
 ज्यों चन्दन तरु बोलैं मोर । डरहिं भुजङ्ग चलैं चहुं ओर ॥८॥
 तुम निरखत जन दोन दयाल । सङ्कट तैं छूटै तत्काल ॥
 ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर । ते तज भागहिं देखत भोर ॥९॥

तुम भविजन तारक किम होय । ते बितधार तिरहि ले तोय ॥
 यह ऐसे कर जान स्वभाव । तरहिं मशक ज्यों गर्भित बाव ॥१०॥
 जिन सब देव किये वश वाम । तिन छिनमें जीतो सो काम ।
 ज्यों जल करै अग्नि कुल हान । बड़वानल पीवै सोपान ॥११॥
 तुम अनन्त गुरुवा गुण लिये । क्यों कर भक्त धरै निज हिये ॥
 है लघु रूप तरहिं संसार । यह प्रभु महिमा अगम अपार ॥ १२ ॥
 क्रोध निवार कियो मन शान्ति । कर्म सुभट जीते केहि भांति ॥
 यह पटुनर देखहु संसार । नील वृक्ष ज्यों दहै तुषार ॥ १३ ॥
 मुनि जन हिये कमल निज टोहि । सिद्धस्वरूप सम ध्यावै तोहि ॥
 कमल कणिङ्का बिन नहिं और । कमल बीज उपजनकी ठौर ॥१४॥
 जब तुम ध्यान धरै मुनि कोय । तब विदेह परमात्म होय ॥
 जैसे धातु शिला तनु त्याग । कनक स्वरूप धरै जब आग ॥१५॥
 जाके मन तुम करहु निवास । बिलय जाय सब विग्रह तास ॥
 ज्यों महन्त बिब आवै कोय । विग्र मूल निवारै सोय ॥१६॥
 करहिं विविध जो आत्म ध्यान । तुम प्रभाव तें होय निदान ॥
 जैसे नीर सुधा अनुमान । पीवत विष विकारकी हान ॥ १७ ॥
 तुम भगवन्त विमल गुण लीन । समल रूप मानहिं मतिहीन ॥
 ज्यों नलिया रोग दूग गहै । वर्ण विवर्ण शङ्क सो कहै ॥ १८ ॥

दोहा—निकट रहित उपदेश सुन, तखर भयो अशोक । ज्यों
 रवि उगते जीव सब, प्रगट होत भुवि लोक ॥ १९ ॥ सुमन वृष्टि
 ज्यों सुर करहिं, हेठ बोठ मुख सोय । त्यों तुम सेवत सुमन जन
 बन्ध अधोमुख होय ॥२०॥ उपजी तुम हिय उदधि तें वाणी सुधा
 समान । जिहिं पीवत भविजन लहै, अजर अमर पदधान ॥ २१ ॥

पन्थ भक्ति रचना कर पूरे । पञ्च कल्याणक ऋद्धि पाय निश्चै
दुख चूरै ॥ २४ ॥ अहो जगत्पति पूज्य अवधि ज्ञानी मुनि हारे ।
तुम गुण कीर्तन माहिं कौन हम मन्द विचारे ॥ थुति छल सो
तुम विषै देव आदर विस्तारे । शिव सुख पूरण हार कल्पतरु
यही हमारे ॥ २५ ॥ बादराज मुनिराज शब्द विद्याके स्वामी ।
बादराज मुनिराज तर्क विद्यापति नामी ॥ बादराज मुनिराज काव्य
करता अधिकारी । बादराज मुनिराज बड़े भवजन उपकारी ॥ २६ ॥

मूल अर्थ बहु विधि कुसुम, भाषा सूत्र मभार ।

भक्तिमाल भूदर करो, करो कण्ठ सुखकार ॥ १ ॥

तीसरा अध्याय

२४ इष्ट छत्तीसी ।

सोरठा—प्रणमूँ श्री अरहंत, दयाकथित जिन धर्मको । गुरु
निरग्रंथ महंत, अवरन मानूँ सर्वथा ॥ १ ॥ बिन गुणकी पहिचान
जानै वस्तु समानता । तार्ते परम बखान, परमेष्टी गुणको कहूँ ॥ २ ॥
रागद्वेषयुत देव, मानै हिंसाधर्म पुनि । सग्रन्थगुरुको सेव, सो
मिथ्याती जग भ्रमै ॥ ३ ॥

अरहंतके ४३ मूल गुण ।

दोहा—चौतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ ।

अनंत चतुष्टय गुणसहित, छीयालीसों पाठ ॥ ४ ॥

अर्थ—३४ अतिशय, ८ प्राणिहार्य, ४ अनंतचतुष्टय ये अरहंत-
नके ४६ मूलगुण होते हैं। अब इनका भिन्न २ वर्णन करते हैं।

जन्मके १० अतिशय।

अतिशय रूप सुगन्ध तन, नाहिं पसेव निहार। प्रियहिमवचन
अतौल बल, रुधिर श्वेत आकार। लच्छन सहसर आठ तन,
समचतुष्कसंठान। वज्रवृषभनाराच युत, ये जनमन दश जान ॥६॥

अर्थ—१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर,
पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हित मितप्रियवचन
बोलना, ६ अतुल बल, ७ दुग्धवन् श्वेत रुधिर, ८ शरीरमें एक
हजार आठ लक्षण, ९ समचतुस्त्रसंस्थान १० वज्रवृषभनाराचसं-
नन ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही उत्पन्न होते हैं।

केवलज्ञानके १० अतिशय।

योजन शत इकमें सुभिक्ष, गगनगमन मुख चार। नहिं, अदया
उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार ॥ सब विद्या ईश्वरपनों, नाहिं बढ़े
नख केश। अनिमिष दृग छायारहित, दश बंवलके वेश ॥८॥

अर्थ—१ एक सौ योजनमें सुभिक्षता; अर्थात् जिस स्थानमें
केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ योजनमें सुकाल होता है, २
आकाशमें गमन, ३ चार मुखोंका दोखना, ४ अदयाका अभाव,
५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्या-
ओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना ९ नेत्रोंकी पलकें
नहीं झपकना, १० छायारहित शरीर। ये १० अतिशय केवल-
ज्ञान उत्पन्न होनेसे प्रगट होते हैं ॥८॥

देवकृत १४ अतिशय।

देवरचित है चार दश, अर्द्धमागधी भाष । आपस मांहीं मित्रता
निरमल दिश आकाश ॥१॥ होत फूल फल ऋतु सबे, पृथ्वी काच
समान । चरण कमलतल कमल है, नभ ते जय जय बान ॥१०॥
मन्द सुगन्ध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि । भूमिविषे कंटक नहीं,
हर्षमयी सब सृष्टि ॥११॥ धर्मचक्र आगे रहे, पुनि वसु मङ्गल सार ।
अतिशय श्रीअरहन्तके, ये चौतीस प्रकार ॥

अर्थ—१ भगवानकी अर्द्धमागधी भाषाका होना, २ समस्त
जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निमेल होना,
४ आकाशका निमेल होना, ५ सब ऋतुके फल पुष्प धान्यादिक-
का एक ही समय फलना, ६ एक योजनतककी पृथिवीका दर्पण-
वन निर्मल होना, ७ चलते समय भगवान्के चरण कमलके तले
सुवर्णकमलका होना, ८ आकाशमें जय जय ध्वनिका होना, ९
मंदसुगन्धित पवनका चलना, १० सुगन्धमय जलकी वृष्टि होना,
११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ स-
मस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका
चलना, १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घन्टादि अष्ट मङ्गल द्रव्योंका साथ
रहना । इस प्रकार सब मिलाकर ३४ अतिशय अरहन्त भगवानके
होते हैं ॥१२॥

अष्ट प्रातिहार्य ।

तरु अशोकके निकटमें, सिंहासन छबिदार । तीन छत्र सिरपर
लसें भामंडल पिछवार ॥१३॥ दिव्यध्वनि मुखतें स्त्रिरे पुष्पवृष्टि
सुर होय । ढारै चौसठि चमर लख । बाजै दुंदुभि जोय ॥१४॥

अर्थ—१, अशोकवृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भग-

वानके सिरपर तीन छत्रका फिरना, ४ भगवानके पीछे भामण्ड-
लका होना, ५ भगवानके मुखसे दिव्यवनिका होना, ६ देवाके
द्वारा पुष्पवृष्टिका होना, ७ यक्षदेवोंद्वारा चोसठ चंवरोका दुरना,
दुंदुभी बाजोका बजना ये आठ प्रातिहाय हैं ।

अनन्तचतुष्टय ।

ज्ञान अनन्त अनन्त सुख, दरस अनन्त प्रमान ।

बल अनन्त अरहंत सा, इष्टदेव पहिचान ॥१५॥

अर्थ—१ अनन्तदर्शन अनन्तज्ञान, २ अनन्तसुख, ४ अनन्तवीर्य
जिसमें इतने गुण हा, वह अरहन्त परमेष्ठी हैं ।

अष्टादशदोषवर्जन ।

जनम जरा तिरषा श्रुधा विस्मय आरत खेद । रोग शोक मद
मोह भय निद्रा चिन्ता खेद ॥१६॥ राग द्वेष अरु मरण जुत, यह
अष्टादश दोष । नाहिं होत अरहंतके सो छबि लायक मोष ।

अर्थ—१, जन्म, २ जरा, ३ तृषा, ४ श्रुधा, ५ आश्चर्य, ६ अरति
(पीड़ा), ७ खेद, (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद, ११ मोह, १२
भय, १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ पसीना, १६ राग, १७ द्वेष, १८
मरण ये १८ दोष अरहन्त भगवानमें नहीं होते ॥१७॥

सिद्धोंके ८ गुण ।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहना ।

सूक्ष्म वीरजवान निराबाध गुन सिद्धके ॥१८॥

अर्थ—१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघुत्व, ५ अव-
गाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य, ८ अव्याबाधत्व ये सिद्धोंके
८ मूलगुण होते हैं ॥

आचार्यके ३६ गुण — द्वादश तप दश धर्मजुत पालै पञ्चाचार ।

पट् आवश्यक त्रयगुणि गुन आचारज पदसार ॥

अर्थ—तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुणि ३ ये आचार्य महाराजके ३६ मूलगुण होते हैं । अब इनको भिन्न २ कहते हैं ॥ १६ ॥

द्वादश तप ।

अनशन ऊनोदर करे, व्रतसंख्या रस छोर । विविक्तशयन आसन धरे काय कलेश सुठोर । प्रायश्चित्त धर विनयजुत वैयाव्रत स्वाध्याय । पुनि उत्सर्ग विचारके धरे ध्यान मन लाय ॥२१॥

अर्थ—१ अनशन, २ ऊनोदर, ३ व्रतपरिसंख्यान, ४ रसपरित्याग, ५ विविक्तशय्याशन, ६ कायकलेश, ७ प्रायश्चित्त लेना, ८ पांच प्रकारका विनय करना, ९ वैयाव्रत करना, १० स्वाध्याय करना ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना), और १२ ध्यान करना ये बारह प्रकारके तप हैं ॥२१॥

दश धर्म—छिमा मारदेव आरजब, सत्यवचन चित पाग ।

संजम तप त्यागी सरव, आकिंचन तियत्याग ॥

अर्थ—१ उत्तमक्षमा, २ मादेव, ३ आर्जव, ४ सत्य, ५ शौच, ६ संयम, ७ तप, ८ त्याग, ९ आकिंचन, १० ब्रह्मचर्य ये दश प्रकारके धर्म हैं ॥ २२ ॥

पट् आवश्यक—समता धर बंदन करे, नाना थुती बनाय ।

प्रतिक्रमण स्वाध्यायजुत, कायोत्सर्ग लगाय ॥

अर्थ—१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना) २, बंदना, ३ स्तुति (पञ्चपरमेष्ठोकी स्तुति) करना, प्रतिक्रमण (लगे

हुए दोषोंपर पश्चाताप) करना, ५ स्वाध्याय, और ६ कायोत्सग (ध्यान) करना ये छह आवश्यक हैं ॥२३॥

पंचाचार और तीन गुप्ति ।

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, वीरज पंचाचार ।

गोपे मनवचकायको, गिन छत्तीस गुन सार ॥

अर्थ—१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार, ६ मनोगुप्ति मनको वशमें करना, २ वचनगुप्ति वचनको वशमें करना, ३ कायगुप्ति शरीरको वशमें करना, इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं ॥२४॥

उपाध्यायके २५ गुण ।

चौदह पूरबको धरे, ग्यारह अङ्ग सुजान ।

उपाध्याय पच्चीस गुण, पढ़े पढ़ावै ज्ञान ॥२५॥

अर्थ—११ अङ्ग १४ पूर्वको आप पढ़ें और अन्यको पढ़ावें ये ही उपाध्यायके २५ गुण हैं ॥२५॥

ग्यारह अङ्ग ।

प्रथमहि आचारांग गुनि, दूजो सूत्रकृतांग । ठाण अङ्ग तीजो सुभग, चोथो समवायांग ॥२६॥ व्याख्या प्रज्ञति पचमो, ज्ञातृ कथा षट आन । पुनि उपासकाध्ययन है, अन्तःकृत दशठान ॥ अनुत्तरणउत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान । बहुरि प्रश्नव्याकरण-उत्त, ग्यारह अङ्ग प्रमान ॥

अर्थ—१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अन्तःकृतदशांग, ९ अनुत्तारोत्पाददशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, ११ वि-

पाकसूत्रांग, ये ग्यारह अङ्ग हैं ॥२८॥

चौदह पूर्व ।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तोजो वीरजवाद । अस्ति नास्ति परवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद ॥ छट्टो कर्मप्रवाद है, सत्प्रवाद पहिबान । अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमो प्रत्याख्यान ॥१०॥ विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महत । प्राणवाद किरिया बहुल, लोक-बिंदु है अन्त ॥३१॥

अर्थ—१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणि पूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्प्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये १४ पूर्व हैं ॥

सर्वसाधुके २८ मूलगुण ।

पंचमहाव्रत—हिंसा अनृत तस्करो, अब्रह्म परिग्रह पाय । मन-वचननते त्यागवो, पंचमहाव्रत थाय ॥३२॥

अर्थ—१ अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत, ये पांच महाव्रत हैं । पांच समिति—ईर्ष्या, भाषा, एषणा, पुनि क्षेपन, आदान । प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पांचों समिति विधान ॥

अर्थ—१ ईर्ष्या समिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति ४ आदाननिक्षेपणसमिति, ५ प्रतिष्ठापनासमिति, ये पांच समिति हैं ॥

पांच इन्द्रियोंका दमन ।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोध ।

षट् आवशि मंजन तजन, शयन भूमिको शोध ॥

अर्थ—१ स्पर्शन (त्वक्), २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, और ५ श्रोत्र—इन पांच इंद्रियोंका वश करना सो इन्द्रियदमन है (छह आवश्यक आचार्यके गुणोंमें देखो) ॥३४॥

शेष सात गुण ।

वस्त्रत्याग कचलौंच अरु, लघु, भोजन इकबार ।

दांतन मुखमें ना करें, ठाढ़े लेहिं अहार ॥३५॥

अर्थ—१ यावज्जीव स्नानका त्याग, २ शोधकर (देख भाल कर) भूमिपर सोना, ३ वस्त्रत्याग (दिगम्बर होना), केशोंका लौंच करना, ५ एक बार लघु भोजन करना, ६ दन्तधावन नहीं करना, ७ खड़े खड़े आहार लेना, इन सात गुणोंसहित २८ मूल गुण सर्व मुनियोंके होते हैं ॥३४॥

साधर्मो भवि पाठनको, इष्टछतीसी ग्रन्थ ।

अल्पबुद्धि बुधजन रच्यो, हिनमिन शिवपुरपन्थ ॥

इति पंचपरमेष्ठी १४३ मूलगुणोंका वर्णन समाप्त ।

२५ दर्शनपाठ ।

अनादिनिधन महामंत्र ।

णमो अरहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोण सव्वसाहूणं ॥१॥

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते हो “जय जय जय निःसहि, निःसहि, निःसहि” इस प्रकार उच्चारण करके उपर्युक्त महामंत्रका ६ बार पाठ करे । तत्पश्चात्—

चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं । सिद्ध मंगलं साहू मंगलं
केवलपण्णत्तो धम्मो मङ्गलं । चत्तारि लोगुत्तमा । अरिहन्त लो-
गोत्तमा सिद्ध लोगुत्तमा । साहू लोगुत्तमा । केवलपण्णत्तो धम्मो
लोगुत्तमा ॥२॥ चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं पव्व-
ज्जामि । सिद्धसरणं पव्वज्जामि । साहूसरणं पव्वज्जामि । केव-
लिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥ ॐ भौं भौं स्वाहा ॥

वर्तमान चौबीस तीर्थकरोके नाम ।

श्रीऋषभः १ अजितः २ संभवः ३ अमिनन्दनः ४ सुमतिः ५
पद्मप्रभः ६ सुपाश्वः ७ चंद्रप्रभः ८ पुष्पदन्तः ९ शीतलः १० श्रीयांस
११ वांसुपूज्यः १२ विमलः १३ अनन्तः १४ धर्मः १५ शान्तिः १६
कुण्डुः १७ अरः १८ मल्लिः १९ मुनिसुव्रतः २० नमिः २१ नेमिः २२
पार्श्वनाथः २३ महावीरः २४ इति वर्तमानकालसम्बन्धो चतुर्विंश-
तितोर्थकरेभ्यो नमो नमः ।

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम । त्वामद्वाक्षं यतो
देव, हेतुमक्षयसम्पदः ॥१॥ अद्य संसारगम्भीरपारावारः तुदुस्तरः ।
सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितं गा-
त्रं नेत्रं च विमले कृते । स्नानोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्श-
नात् ॥३॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम् । संसारार्ण-
वतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥ अद्य कर्माष्टकज्वालं वि-
धूतं सकषायकम् । दुर्गतिर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥५॥
अद्य सोम्या मृदाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः । नष्टानि विघ्नजा-
लानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणा दुः-
खदायकः । सुखसंगं समाप्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥ अद्य क-

मौष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् । सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र
 तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अथ मिथ्यान्धकारस्य हन्ताज्ञानदिवाकरः ।
 उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥ अद्याहं सुकृती
 भूतो निर्धूताशेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात्
 ॥ १० ॥ चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने । परमत्माप्रकाशाय
 नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥ ११ ॥ अन्यथा शरणं नास्तित्वमेव
 शरणं मम । तस्मात्कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १२ ॥ न
 हि ज्ञाता न हि त्राता न हि त्राता जगत्रये । वीतरागात्परो देवो न
 भूतो न भविष्यति ॥ १३ ॥ जिने भक्तिजिने भक्तिजिने भक्तिदिने
 दिने । सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ १४ ॥
 जिनधर्मविनिर्मुक्तं मा भवन् चक्रवर्त्येति । स्याच्चैष्टोऽपि द्रि-
 द्रोऽपि जिनधर्मानुवासितम् ॥ १५ ॥

इस प्रकार बोलकर साष्टांगनमस्कार करना चाहिये । नम-
 स्कारके पश्चात् पूजनके लिये चांचल चढ़ाना हो तो नीचे लिखा
 श्लोक तथा मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्सुभक्त्या ।

दीर्घाक्षताङ्गैर्ध्रुवलाक्षतोर्ध्वैर जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षतान् निवेपामि ।

यदि पुण्यसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा श्लोक पढ़ें ।

विनीतभय्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् ।

कुन्दारविन्दप्रमुखप्रसूनैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १॥

ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय देवशास्त्रगुरुभ्यः पुण्यं निवेपामि ।

यदि किसीको लोंग, बदाम, इलायची या कोई प्रासुक दूरा

फल चढ़ाना हो तो, नीचे लिखा श्लोक और मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

शुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाऽप्यगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।

फलैल्ल मोक्षफलाभिसारैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्यः फलं निर्वपामि ॥

यदि किसीको अर्घ्य चढ़ाना हो, तो नीचे लिखा श्लोक पढ़ें ।

सद्धारिगन्धाक्षनपुष्पजातेर् नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोग्यान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घ्यं ।

इस प्रकारके द्रव्योंमेंसे जो द्रव्य हो, उसी द्रव्यका श्लोक व मन्त्र पढ़कर वह द्रव्य चढ़ाना चाहिये । तत्पश्चात् नीचे लिखी दोनों स्तुतियां अथवा दोनोंमेंसे कोई एक स्तुति अवश्य पढ़नी चाहिये ।

२६ दौलतराम कृत स्तुति

देहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्दरसलीन ।

सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसबिहीन ॥

जय बीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरनसूर ॥ जय

ज्ञान अनन्तानन्तधार । दृगसुख वीरजमण्डित अपार ॥ १ ॥ जय

परमशान्ति मुद्रा समेत । भविजनको निज अनुभूति हेत ॥ भवि

भागनवश जोगे वशाय । तुम धुनि हूँ सुनि विभ्रम नशाय ॥ २ ॥

तुम गुण विन्तत निज पर विवेक । प्रघट्टे, विघट्टे आपद अनेक ॥

तुम जगभूषण दूषणवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ३ ॥

अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप । परमात्म परमपावन अनूप ॥ शुभ

अशुभ विभाव अभाव कीन । स्वाभाविक परिणतिमय अलीन ॥४॥
 अष्टादशदोष विमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गंभीर ॥ मुनि
 गणधरादि सेवत महंत । नवकेवल लब्धिरमा धरन्त ॥ ५ ॥ तुम
 शासन सेय अमेय जीव । शिव गये जाहिं जै हैं सरीव ॥ भव-
 सागरमें दुःख छारवारि । तारनको और न आप टारि ॥ ६ ॥ यह
 लखि निजदुःखगदहरणकाज । तुमही निमित्त कारण इलाज ॥
 जानें तानै मैं शरण आय । उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥ ७ ॥
 मैं भ्रमो अपनयो बिसरि आप । अपना ये विधिकल पुण्य-पाप ॥
 निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ ८ ॥
 आकुलित भयो अज्ञानधारि । ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ॥
 तन परणतिमें आयो चितारि । कबहुं न अनुभवो स्वरदसार ॥ ९ ॥
 तुमको बिन जाने जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु
 नारक नर सुर गतिमंभार । भव धर धर मखो अनन्तवार ॥ १० ॥
 अब काललब्धिबलेंते दयाल । तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन
 शान्त भयो मिट सकलद्वंद । चारुयो स्वातमरस दुखनिकन्द ॥ ११ ॥
 तानै अब ऐसो करहु नाथ । विद्युरे न कभो तुव चरण साथ ॥
 तुम गुणगणको नहिं छेव देव । जग तारनको तुम विरद एव
 ॥ १२ ॥ आत्मके अहित विषय कपाय । इनमें मेरी परेणति न
 जाय ॥ मैं रहूं आपमें आप लीन । सो करो होहुं ज्यों निजाधोन
 ॥ १३ ॥ मेरे न चाह कुछ और ईश । रत्नत्रयनिधि दोजे मुनीश ॥
 मुक्त कारनके कारज सु आर । शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥ १४ ॥
 शशि शांतकरन तपहरनहेत । स्वमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवन
 पियूष ज्यों रोग जाय । त्यों तुम अनुभवतै भव नसाय ॥ १५ ॥

त्रिभुवन तिहुंकाल मंभार कोय । नहिं तुम बिन निजसुख दाय
होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधि उतारन तुम
जिहाज ॥ १६ ॥

दोहा—तुमगुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार ।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूँ त्रियोग संभार ॥

२७ अथ बुधजनकृत स्तुति

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो शरणनी । यो वि-
रद् आप निहार स्वामी, मेढ जामन मरनजी ॥ तुम ना पिछान्या
आन मान्या, देव विविध प्रकारजी । या बुद्धिसेती निज न जा-
ण्या, भ्रम गिण्या हितकारजी ॥ १ ॥ भवविकट वनमें करम बेरी,
ज्ञानधन मेरो हस्यो । तब इष्ट भूत्यो भ्रष्ट हौय, अनिष्टगति धरनो
फिस्यो ॥ धन घड़ी यो धन दिवस योही, धन जनम मेरो भयो ।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो ॥ २ ॥ छवि
वीतरागी नगनमुद्रा, दृष्टि नासापै धरै । वसुप्रातहाय्य अनन्त
गुणयुत, कोटि रविछबिको हरै ॥ मिट गयो तिमर मिथ्यात मेरो
उदय रवि आतम भयो । मो उर हरख ऐसो भयो, मनु रङ्ग चिन्ता-
मणि लयो ॥ ३ ॥ मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, बीनऊँ तब चरनजी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरनजी ॥ जाचूँ नहीं
सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथजी । 'बुध' जाचहूँ तुव भक्ति
भवभव, दीजिये शिवनाथजी ॥ ४ ॥

इस प्रकार एक या दोनों स्तुति पढ़कर पुनः साष्टांग नम-
स्कार करना चाहिये । तपश्चात् नीचे लिखा श्लोक पढ़कर गंधो-
दक मस्तकपर तथा हृदयादि उत्तम अंगोंमें लगाना चाहिये ।

निर्मलं निर्मलीकरणं पवित्रं पापनाशनम् ।

जिनगन्धोदकं वंदे अष्टकर्मविनाशकम् ॥ १ ॥

यदि आशिका लेनी हो, तो यह दोहा पढ़कर लेना चाहिये ।

दोहा—श्रीजिनवरकी आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।

भवभवके पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥ १ ॥

तत्पश्चात् नीचे लिखे दो अथवा एक कवित्त पढ़कर शास्त्र-
जीको साष्टांग नमस्कार करके शास्त्रजीको सुनना चाहिये ।
अथवा थोड़ी बहुत किसी भी शास्त्र हो स्वाध्याय करना चाहिये ।

२८ जिनकाणी माताकी स्तुति ।

वीरहिमाचलतैं निकसो. गुरुगौतमके मुख कुंड डरी है । मांह
महाचल भेद चलो, जगकी जड़ता तप दूर करी है ॥ ज्ञानपयो-
निधिमहिं रली बहुभङ्ग तरङ्गनिसों उछरा है । या शुचि शारद
गंगनदी प्रति, मैं अंजुलोकर शोस धरी है ॥ १ ॥ या जगमंदिरमें
अनिवार अज्ञान अंधर छयो अति भारी । श्रीजिनकी धुनि दीप-
शिखासम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥ तो किस भांति पदार्थ-
पांति, वहां लहते रहते अविचारी । या विधि संत कहै धनि है
धनि, है जिन वैन बड़े उपकारी ॥ २ ॥

रात्रिको भी इसी प्रकार दशन करके तत्पश्चात् दीप धूपसे
नीचे लिखी अथवा जिसपर रुचि हो वह आरती करना चाहिये ॥

२९ पंचपरमेष्ठीकी आरती ।

मनवचनकर शुद्ध पंचपद, पूजो भविजन सुखदाई । सबजन
मिलकर दीप धूप ले, करहुं आरती गुणगाई ॥ ऐक ॥ प्रथमहिं

श्री अरहंत परमगुरु, चौतिस अतिशय सहित बसैं ॥ प्रातिहार्य
वसु अतुल चतुष्टय, सहिय समवसुत मांहि लसैं । श्रुधा तृषा
भय जन्म जरा मृत, रोग शोक रति अरति महा । विस्मय खेद
स्वेद मद निद्रा, राग द्वेष मिल मोह दहा ॥ इन अष्टादश दोष
रहित नित, इन्द्रादिक पूजत आई ॥ सब० ॥ दूजे सिद्ध सदा सुख-
दाता, सिद्धशिलापर राजत हैं । सम्यक्दर्शन ज्ञान वीर्य अरु,
सूक्ष्मपणाको छाजत है ॥ गुरु लघू अवगहन शक्ति धर, बाधा-
विन अशरीरा है । तिनका सुमरण नित्य किये तें, शीघ्र नशत
भव पीरा है ॥ या कारण नित चित्तशुद्ध कर, भजहु सिद्ध शिवके
राई । सब० ॥ तीजे श्रीआचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी हैं ।
दशने ज्ञान चरण तप वीरज, पंचाचार प्रचारी है ॥ द्वादशतप
दशधर्म गुप्तित्रय, षट् आवश्यक नित पालें । सब मुनिजनको
प्रायश्चित्त दे, मुनिघतके दूषण टालें ॥ ऐसे श्रीआचार्य गुरुनकी,
पूजा करिये चित लाई । सब० ॥ चौथे श्रीउवभायकरणपंकजरज,
सुखदा भविजनको । ग्यारह अंग सुपूव चतुर्दश, पढ़ें पढ़ावें मुनि
गनको ॥ मुनिके सब आचरण आचरें, द्वादश तपके धारी है ।
स्यादवाद सुखकारी विद्या, सब जगमें विस्तारी है ॥ ऐसे श्री-
उवभाय गुरुनके, चरणकमल पूजहु भाई । सब० ॥ पंचमि आरति
सर्वसाधुकी, आठवीस गुण मूल धरें । पंचमहाव्रत पंचसमिति-
धर, इन्द्रिय पांचों दमन करें ॥ षट् आवश्यक केशलोच, इक बार
खड़े भोजन करते । दांतन स्नान त्याग भू सोवन, यथाजात
मुद्रा धरते ॥ या विधि “पञ्जालाल” पंचपद, पूजत भवदुख नश
जाई । सब० ॥

इस प्रकार आरता बोलकर नीचे लिखा श्लोक दोहा और मंत्र पढ़कर आरतीको मस्तक चढ़ावे ।

ध्वस्तोद्यमान्धोक्तविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैः कनत्काञ्चनभाजनस्थैर जिनेन्द्रसिद्धान्तयतो न यजेऽहम्

दाहा — स्वपरप्रकाशनयोति अति, दीपक तमकर होन ।

जासूँ पूजूँ परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥१॥

३० आलोचना पाठ ।

दोहा—वन्दां पांचो परम गुरु, चोबीसौं जिनराज ।

कहूँ शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज ॥१॥

सखो छन्द (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी । हम दोष किये अति भारी ॥
 तिनकी अब निर्वृत्तिकाजा । तुम शरन लही जिनराजा ॥ २ ॥
 इक बे ते चऊ इन्द्री वा । मनरहित सहित जे जीवा ॥ तिनकी नहिं
 कहना धारो । निरदई ह्वे घात विचारो ॥ ३ ॥ समरम्भ समारम्भ
 आरम्भ । मनबचतन कोने प्रारम्भ ॥ कृत कारित मोदन करिकै ।
 काधादि चतुष्टय धरिकै ॥ ४ ॥ शत आठ जु इम भेदनतै । अघ
 कीने परछेदनतै ॥ तिनकी कहूँ को लौ कहानी । तुम जानत केवल
 ज्ञानो ॥ ५ ॥ विपरीत एकांत विनयके । संशय अज्ञान कुनयके ॥
 वश हाय घोर अघ कीने । बचतैं नहिं जात कहाने ॥ ६ ॥ कुगुरु-
 नकी सेवा कीनी । केवल अदयाकरि भोनी ॥ या विधि मिथ्यात
 भ्रमायो । चहुंगति मधि दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसा पुनि झूठ जु
 चोरी । परवनितासों दूगजोरी ॥ आरम्भपरिग्रह भीनो । पुन पाप

जु या विधि कीनो ॥ ८ ॥ सपरस रसना घ्राननको । वख कान
विषय सेवनको ॥ बहु करम किये मनमानी । कछु न्याय अन्याय
न जानी ॥ ९ ॥ फल पञ्च उदंबर खाये । मधु मांस मद्य
चित्त चाहे ॥ नहिं अष्ट मूलगुणधारी । विसन जु सेये दुखकारी
॥ १० ॥ दुइ बीस अभख जिन गाये । सो भी निशदिन भुंजाये ॥
कछु भेदाभेद न पायो । ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥ ११ ॥ अनं-
तान जु बधी जानो । प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ॥ संज्वलन चौक-
री गुनिये । सब भेद जु षोडश सुनिये ॥ १२ ॥ परिहास अरति रति
शोग । भय ग्लानि निवेद संजोग ॥ पनवीस जु भेद भये इम ।
इनके वश पाप किये हम ॥ १३ ॥ निद्रावश शयन कराई । सुपने
मधि दोष लगाई ॥ फिर जागि विषय वन धायो । नाना विध
विषफल खायो ॥ १४ ॥ श्रिये हार निहार विहारा । इनमें तहिं
जतन विचारा ॥ विन देखी धरी उठाई । विन शोधी भोजन
खाई ॥ १५ ॥ तब ही परमाद सतायो । बहु विध विकल्प उप-
जायो ॥ कछु सुधि बुधि नाहिं रही है । मिथ्या मति छाय गई
है ॥ १६ ॥ मरजादा तुम ढिग लीनी । ताहू मैं दोष जु कीनी ॥
भिन्न २ अब कैसे कहिये । तुम ज्ञान विषै सब पश्ये ॥ १७ ॥
हा हा मैं दुष्ट अपराधी । त्रसजीवन राशि विराधी ॥ थावरकी
जतन न कीनी । उरमें करुणा नहिं लीनी ॥ १८ ॥ पृथिवी बहु
खोद कराई । महलादिक जागां चिनाई । पुन विन गाल्यो जल
ढोत्यो । पङ्क्तै पवन विलोत्यो ॥ १९ ॥ हा हा मैं अदयाचारी ।
बहु हरितकाय जु विदारी ॥ या मधि जीवनिके खंदा । हम खाये
धरि आनन्दा ॥ २० ॥ हा मैं परमाद बसाई । विन देखे अगनि

जलाई । तामधि जे जीव जु आये । ते हू परलोक सिधाये ॥२१॥
 बांधो अन रात्रि पिसायो । ईंधन बिन सोध्यो जलायो ॥ भाडू
 ले जांगा बुहारी । चिएटो आदिक जीव विदारी ॥ २२ ॥ जल
 छानि जीवानी कीनी । सोहू पुनि डारि जु दीनो ॥ नहिं जल-
 थानक पहुंचायो । किरिया बिन पाप उपाई ॥ २३ ॥ जल मल-
 मोरिन गिरवायो कृमि कुल बहु घात करायो ॥ नदियनि विच
 चीर धुवाये । कोसनके जीव मराये ॥ २४ ॥ अन्नादिक शोध
 कराई । तामै जु जीव निसराई ॥ तिनका नहिं जतन करायो ।
 गरियालै धूप डरायो ॥ २५ ॥ पुनि द्रव्य कमावन काज । बहु
 आरम्भ हिंसा साज ॥ कीये निसनावश भारी । कसला नहिं रश्च
 विचारी ॥ २६ ॥ इत्यादिक पाप अनंता । हम कीने श्रीभगवंता ॥
 सन्तति चिरकाल उपाई । बानीतै कहिय न जाई ॥२७॥ ताको
 जु उदय जब आयो । नानाविध मोहि सतायो ॥ फल भुंजत
 जिय दुख पावै । बचनै कैसें करि गावै ॥ २८ ॥ तुम जानत
 केवल ज्ञानी । दुख दूर करो शिवथानी ॥ हम तौ तुम शरन
 लही है । जिन तारन विरद सही है ॥ २९ ॥ जो गांवपनी इक
 होवै । सो भी दुखिया दुख खोवै ॥ तुम तीन भुवनके स्वामी ।
 दुख मेटो अंतरजामी ॥ ३० ॥ द्रोपदिको चीर बढ़ायो । सीता पनि
 कमल रचायो ॥ अंजनसे किये अकामी । दुख मेटो अन्तरयामी
 जामा ॥३१॥ मेरे अग्रगुन न चितारो । प्रभु अपनो विरद निहारो ॥
 सब दोष रहित करि स्वामी । दुख मेटहु अन्तरजामी ॥ ३२ ॥
 इन्द्रादिक पदवी न चाहूं । विषयनि मैं नाहिं लुभाऊं ॥ रागादिक
 दोष हरोजे । परमात्म निजपद दीजे ॥३३॥

धर्मचक्र चले आगे; रवि जहं लाजहीं । फुनि भृंगार-प्रमुख वसु;
मंगल राजहीं ॥ राजहीं चौदह चारु अतिशय; देवरजित सुहावने ।
जिनराज केवल ज्ञानमहिमा; अवर कहत कहा बने ॥ तब इंद्र-
आनि कियो महोच्छव; सभा शोभित अति वनी ॥ धर्मोपदेश दियो
तहां; उच्छरिय वानी जिनतनी ॥ २० ॥ श्रुया तृषा अरु राग; द्वेष
असुहावने । जनम जरा अरु मरण; त्रिदोष भयावने ॥ रोग शोक
भय विस्मय, अरु निद्रा घणो । खेद स्वेद मद मोह; अरति चिंता
गणो ॥ राणिये अठारह दोष तिनकरि; रहित देव निरञ्जनो ॥ नव
परमकेशल लब्धिमंडित; शिवरमणि-मनरञ्जनो ॥ श्रीज्ञानकल्याणक
सुमहिमा; सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर
जगत मंगल गावहीं ॥२१॥

श्री निर्वाण कल्याणक ।

केवलदृष्टि चराचर; देख्यो जारिसो । भविजनप्रति उपदेश्यो;
जिनवर तारिसो ॥ भवभयभोत महाजन; शरणौ आइया । रत्नत्रय-
लच्छन शिवपंथ लगाइया ॥ लगाइया पंथ जु भव्य फनि; प्रभु
नृत्तिय सुकल जू पूरियो । तजि तेरहें गुणथान योग; अयोग पथ-
पग धारियो ॥ पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती ।
इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो, समयमें पंचमगती ॥२२॥ लोक-
शिखर तनुवान, बलयमहं संठियो । धर्मद्रव्यविन गमन न; जिहिं
आगे कियो ॥ मयनरहित मूषोदर; अवर जारिसो । किमपि हीन
निजननुते, भयौ प्रभु तारिसो ॥ तारिसो पर्जन्य नित्य अविचल;
अर्थपर्जन्य क्षणक्षयी । निश्चयनयेन अनन्तगुण विवहार, नय वसु
गुणमयी ॥ वस्तु स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परणति परिणयो ।

चिद्रूप परमानन्द मंदिर, सिद्ध परमात्म भयो ॥ १३ ॥ तनुपरमाणू
 दामिनिपर, सब खिर गये । रहे शेष नखकेशरूप; जे परिणये ॥ तब
 हरिप्रमुख चतुरविधि; सुरगण शुभ सच्या । माया मई नखकेश
 रहित जिनतनु रच्यो ॥ रचि अगर चन्दन प्रमुख; परिमल; द्रव्य
 जिन जयकारिया । पद पतत अग्निकुमार मुकटानल सुवाधि
 संस्कारियो ॥ निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पा-
 इयो । भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मङ्गल गाइयो ॥ मैं
 मतिहीन भक्तिवश भावना भाइयो । मंगल गीत प्रबन्ध सो निज
 गुण गाइयो ॥ ज नर सुनहिं बखानहीं स्वर धरि गावहीं । मन
 बांछित फल ते नर निश्चय पावहीं ॥ पावैं ते आठो सिद्धि नव-
 निधि मन प्रतोत जो आनिये । भ्रम भाव छूटै सकल मनके जिन
 स्वरूप ये जानिये । पुनि हरै पातक टरत विघ्न सो होय मङ्गल
 नित नये । भण रूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसंगहि गये ॥

॥ इति श्रीजिनेन्द्रनिर्वाण कल्याण मङ्गल समाप्तम् ॥

३२ छहढाला

श्रीयुत पण्डित दौलतरामजी कृत—

तीन भुवनमें सार, वीतराग विज्ञानता ।

शिवस्वरूप शिवकार, नमहुं त्रियोग समहारिके ॥

प्रथमढाल—चौपाई छन्द १५ मात्रा ।

जे त्रिभुवनमें जीव अनन्त । सुख चाहैं दुखते भयवन्त ॥ तातें
 दुखहारी सुखकार । कहैं सीख गुरु करुणाधार ॥ १ ॥ ताहि सुनो
 भवि मन थिर आन । जो चाहो अपना कल्याण ॥ मोह महा मद

पियो अनादि । भूल आपको भरमत बादि ॥ २ ॥ तास भ्रमण को
 है बहु कथा पै कछु कहूं कही मुनि यथा ॥ काल अनन्त निगोद
 मंभार । बीतीं एकेन्द्री तन धार ॥ ३ ॥ एक श्वासमें अठदशबार ।
 जन्मो मरो मरो दुख भार ॥ निकस भूमि जल पावक भया । पवन
 प्रत्येक वनस्पति थयो ॥ ४ ॥ दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी । त्यों
 पर्याय लहो त्रस तणी ॥ लट पिपील अलि आदि शरीर । धरधर
 मरो सही बहुपीर ॥ ५ ॥ कबहुं पंचेन्द्रिय पशु भयो । मन बिन नि-
 पट अज्ञानो थयो । सिंहादिक सैनी हूँ कूर । निर्बल पशु हति खाए
 भूर ॥ ६ ॥ कबहुं आप भयो बलहीन सबलनकर खायो अति दीन ॥
 छेदन भेदन भूखरु प्यास । भार बहन हिम आतप त्रास ॥ ७ ॥ बध
 बंधन आदिक दुख घनै । कोट जीभकर जात न भनै ॥ अतिसंक्लेश
 भावने मरो । घोर शुभ्र सागरमें परो ॥ ८ ॥ तहां भूमि परसत
 दुख इसो । बीछू सहस डसें नहिं तिसो ॥ तहां राध श्रोणित
 बाहिनी । कृमि कुल कलित देह दाहिनो ॥ ९ ॥ सेमरतरु जुत दल
 असिपत्र । असि ज्यों देह विदारें तत्र ॥ मेरुसमान लोह गालजाय ।
 ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ १० ॥ तिल तिल करें देहके खण्ड ।
 असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचण्ड ॥ सिंधु नीरते प्यास न जाय । तो
 पण एक न वृंद लहाय ॥ ११ ॥ तीन लोकको नाज जो खाय ।
 मिटै न भूख कणा न लहाय ॥ ये दुख बहु सागरलों सहै । करम
 योगते नरगति लहै ॥ १२ ॥ जननी उदर बसो नवमास । अङ्ग सकु-
 चते पाई त्रास ॥ निकसत जे दुख पाये घोर । तिनको कहत न
 आवे ओर ॥ १३ ॥ बालपनेमें ज्ञान न लह्यो । तरुण समय तरुणी
 रत रह्यो ॥ अर्द्धमृतक सम बूढ़ापनो । कैसे रूप लखें आपनो ॥ १४ ॥

कभी अकाम निर्जरा करै । भवनत्रिकमें सुर—तन धरै ॥ विषय
चाह दावानल दह्यो । मरत विलाप करत दुःख सह्यो ॥१५॥ जो
विमानवासी हू थाय । सम्यक्दर्शन बिन दुख पाय ॥ तहँते चय
थावर तन धरै । यों परिवर्तन पूरे करै ॥ १६ ॥

द्वितीय ढाल—पद्मरोछंद १५ मात्रा ।

ऐसे मिथ्या दृग्न ज्ञान चर्णा । वश भ्रमन भरत दुःख जन्म मर्ण ॥
ताते इनको तजिये सुजान । सुन तिन संक्षेप कहं बखान ॥ १ ॥
जीवादि प्रयोजन भूततत्त्व । सरधै तिन मांहि विपर्ययत्व ॥ चेत-
नको है उपयोग रूप । बिन मूर्ति चिन्मूर्ति अनूप ॥२॥ पुद्गल नभ
धर्म अधर्म काल । इनतैन्यारी है जीव चाल ॥ ताकूं न जान विप-
रीति मान । करि करै देहमें निज पिछान ॥३॥ मैं सुखी दुखी मैं रडू
राव । मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥ मेरे सुन तिय मैं सखल दीन ।
वे रूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥ तन उपजत अपनो उपजजान ।
तन नशत आपको नाश मान । रागादि प्रगट ये दुःख दैन ।
तिनहीको सेवन गिनत चैन ॥५॥ शूभ अशुभ बंधके फल मकार ।
रति अरत करै निजपद बिसार । आनम हितहेतु विराग ज्ञान । ते
लखे औपकूं कष्ट दान ॥६॥ रोके न चाह निज शक्ति खोय । शिव-
रूप निराकुलता न जोय । या ही प्रतीत युत कलुक ज्ञान । सो
दुखदायक अज्ञान जान ॥७॥ इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त । ताकूं
जानो मिथ्या चरित्त ॥ यो मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह । अब जे
गृहीत सुनिये सुतेह ॥८॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव । पोखैं चिर
दर्शन मोह एव ॥ अन्तर रागादिक धरें जेह । बाहर धन अंख-
रते सनेह ॥९॥ धारै कुलिंग लहि महत भाव । ते कुगुरु जन्म जल

उमलनाव ॥ जे राग द्वेष मलकरि मलान । बनितागदादि जुन
चिन्ह चोन्ह ॥१०॥ तेहैं कुशेव तिनकी ज, सेव । शठ करत न तिन
भवभ्रमणछेव ॥ रागादि भाव हिंसा समेत । दर्वित प्रसथावर मरण
खेत ॥११॥ जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म । निस सरधे जीव लहे
अशर्म ॥ यांकू गृहीत मिथ्यात जान । अब सुन ग्रहीत जो है अ-
जान ॥१२॥ एकान्त बाद दूषित समस्त । विषयादिक पोशक अ-
प्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतका अभ्यास । सोहैं कुबोध बहु देन
त्रास ॥१३॥ जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह । धर करत विविध
विध देहदाह ॥ आतम अनात्मके ज्ञान हीन । जे जे करनो तन
करन छीन ॥१४॥ ते सब मिथ्या चारित्र त्याग । अब आतमके
हितपंथ लाग ॥ जगजाल भ्रमणको दैय त्याग । अब दोलत निज-
आतमसु पाग ॥१५॥

तृतीय ढाल । जोगी रासा ।

आतमको हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये ।
आकुलता शिवमांहि न तानै, शिव मग लाग्यो चाहिये ॥ सम्यक्-
दर्शन ज्ञान चरन शिव, मग सो दुबिधि विचारो । जो सत्यार्थ
रूपसो निश्चय, कारण सों व्यवहारो ॥१॥ परद्रव्यनतैं भिन्न आप
मैं, रुचि सम्यक्त भला है । आप रूपको जानपनो सो, सम्यक ज्ञान
कला है ॥ आपरूपमें लीन रहे धर, सम्यक चारित सोई । अब
शिवहार मोख-मग सुनिये, हेतु नियतको होई ॥ २ ॥ जीव अजीव
तत्त्व अरु आश्रय, बंधरु संवर जानो । निजंर मोक्ष बहे निज
तिनको, ज्योको त्यों सरधानो ॥ है सोई समकित बिबहागी, अब
इन रूप बखानो । तिनको सुन सामान्य विशेषै, दिढ़ प्रतीति उर

आनो ॥ ३ ॥ बहिरातम अन्तःआतम परमातम जीव त्रिधा है ।
 देह जीवको एक गिने, बहिरातम तत्त्व मुधा है ॥ उत्तम मध्यम
 जघन त्रिविधिके, अन्तर आतम ज्ञानी । द्विविधि संग बिन शुध
 उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥ ४ ॥ मध्यम अन्तर आतम
 हैं जे, देशव्रती आगारो । जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों
 शिवमगचारी ॥ सकल निकल परमातम द्वैविधि तिनमें घाति
 निवारी । श्री अरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी ॥ ५ ॥
 ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल वर्जित सिद्ध महंता । ते हैं निकल
 अमल परमातम, भोगे शर्म अनन्ता ॥ बहिरातमता हेय जानि तजि,
 अन्तर आतम हूजे । परमातमको ध्याय निरन्तर, जो नित आनंद
 पूजे ॥ ६ ॥ चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं । पुद्गल
 पंचवरण रस गंध दो फरसबस् जाके हैं ॥ जिय पुद्गलको चरन
 सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी । तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिन
 मूर्ति निरूपी ॥ ७ ॥ सकलद्रव्यको बास जासमें, सो आकाश
 पिछातो । नियत बर्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमानो ॥
 यो अजीव अब आश्रव सुनिये, मन वच काय त्रियोगा । स्थिया
 अविरत अरु कषाय पर,—माद सहित उपयोगा ॥ ८ ॥ ये ही
 आतमको दुखकारण, तातैं इनको तजिये । जीव प्रदेश बंध
 विधिसों सो, बंधन कबहुं न सजिये ॥ शमदमतैं जो कर्म न आवैं,
 सो संवर आदरिये । तप बलतैं विधि भरन निरजरा, ताहि सदा
 आचरिये ॥ ९ ॥ सकलकमेतैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुख
 कारी । इहिबिधि जो सरधा नत्वनको, सो समकित व्यवहारो ॥
 देव जिनेन्द्र गुरु परिग्रह बिन, धर्मदयायुत सारो । येहू मान सम-

कितको कारण, अष्ट अंग जुन धारो ॥ १० ॥ वसुमद टारि निवारि
 त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो । शंकादिक वसु दोष बिना,
 संवेगादिक चित पागो ॥ अष्ट अंग अरु दोष पचीसों, अब संक्षे-
 पहु कहिये । बिन जाने तैं दोष गुननकों, कैसे तजिये गहिये ॥ ११ ॥
 जिन बचमें शंका न धार वृष, भवसुख वांछा भाँनै । मुनितन मलिन
 न देख घिनावै, तत्वकुतत्व पिछानै ॥ निजगुण अरु पर औगुण
 ढाँकै, वा निजधर्म बढावै । कामादिक कर वृपतैं चिगते, निज
 परको सु दिहावै ॥ १२ ॥ धर्मोसो गऊ बच्छ प्रीति सम, कर
 जिन धर्म दिपावै । इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतन
 खपावै ॥ पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
 मद न रूपको मद न ज्ञानको, धनबलको मद भाँनै ॥ १३ ॥ तपको
 मद न मद जु प्रभुताको; करै न सो निज जानै । मद धारै तो यही
 दोष वसु; समकितको मल ठानै ॥ कुगुरु कुदेव कुवृष सेवककी;
 नहिं प्रशंस उचरै है । जिन मुनि जिन श्रुति बिन कुगुरादिक,
 तिन्हें न नमन करे है ॥ दोष रहित गुणसहित सुधी जे; सम्यक्-
 दर्श सजै हैं; चरित मोहबश लेश न संजम; पै सुरनाथ जजै हैं ॥
 गेही पै गृहमें न रचे ज्यौ; जलमें भिन्न कमल है । नगरनारिको
 प्यार यथा कावेमें हेम अमल है ॥ १५ ॥ प्रथम नरक बिन षटभू
 ज्योतिष; वान भवन सब नारी । थावर विकलत्रय पशुमें नहि;
 उपजत सम्यक्धारी ॥ तीनलोक तिहुंकाल माहिं नहिं; दर्शन सो
 सुखकारी । सकल धरमको मूल यही इस; बिन करनी दुखकारी
 ॥ १६ ॥ मोक्षमहलकी परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा । सम्य-
 कता न लहै सो दर्शन; धारो भव्य पवित्रा ॥ दौल समझ सुन चेत

सयाने, काल कृथा मत खोवें । यह नरभव फिर मिलन कठिन है
जो सम्यक् नहिं होवै ॥१७॥

चतुर्थे ढाल ।

दोहा - सम्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यकज्ञान ।

स्वपर अथे बहु धर्मयुत, जो प्रगटावन भान ॥

रोलाछन्द २५ मात्रा ।

सम्यक साथै ज्ञान, होय पै भिन्न अराधा । लक्षण श्रद्धा जान
दुहमें भेद अबाधो ॥ सम्यक कारण जान, ज्ञान कारज है सोई ।
युगपत् होतेहू, प्रकाश दीपकतैं होई ॥ १ ॥ तास भेद दो है, परोक्ष
परतक्ष तिन माहीं । मति श्रुत दीय परोक्ष, अक्ष मनतैं उपजाहीं ॥
अवधि ज्ञान मन पर्यय, दो है देश प्रत्यक्षा । द्रव्यक्षेत्र परिमाण,
लिये जानै, जिय स्वच्छा ॥२॥ सकल द्रव्यके गुण, अनन्त पर्याय
अनन्ता । जानै ऐकै काल, प्रगट केवलि भगवन्ता ॥ ज्ञान समान न
आन, जगतमें सुखको कारण । इहि परमामृत जन्म, ब्रामृत रोग-
निवारन ॥३॥ कोटिजन्म तप तपै, ज्ञान बिन कर्म भरै जे । ज्ञानी
के छिनमांहि जि-गुमितैं सहज टरै ते ॥ मुनिब्रत धार अनन्त, बार
प्रोवक उपजायो । पै निज आनम ज्ञान बिना सुखलेश न पायो ॥
तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजो । संशय विभ्रम मोह,
त्याग आपो लख लीजै ॥ यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनयो जिन-
बानी । इह विधि गये न मिलै, सुमनि उयो उदधि समानी ॥५॥
धन समाज गज बाज, रात तो काज न आवै । ज्ञान आपको रूप
भये, फिर अवल रहावे ॥ तास ज्ञानको कारण स्वपर बिबेक ब-
खानो । कोटि उपाय बनाय, भय ताको उर आनो ॥६॥ जो पुरख

शिव गए, जाहिं अब आगे जे हैं । सो सब महिमा ज्ञान-तणी
मुनिनाथ कहे हैं ॥ विषय चाह दबदाह, जगत जन अरनि दभावे ।
तास उपाय न आन, ज्ञानघन — घान बुभावे ॥७॥ पुण्य पाप फल
माहि, हरष विलखो मत भाई । यह पुद्गल पर्याय, उपजि विनशौ
थिर थाई ॥ लाख बातकी बात, यही निश्चय उर लावो । तोरि
सकल जगदन्द—फन्द निज मातम ध्यावो ॥८॥ सम्यग्ज्ञानी होय
बहुरि दृढ़ चारित लीजै । एकदेश अरु सकल देश, तसु भेद क-
हीजै । ब्रसहिंसाको त्याग, वृथा थावर न संघारे । परबधकार
कठोर निन्द्य, नहिं बयन उचारै ॥९॥ जलमृत्तिका बिन और, नाहिं
कलु गहै अदत्ता । निज बनिता बिन सकल, नारिसौं रहै विरत्ता ॥
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखे । दस दिश गमन प्रमाण
ठान, तसु सोम न नाखे ॥ ताहुमें फिर ग्राम, गली ग्रह बाग
बजारा । गमनागमन प्रमाण ठान, अन सकल निवारा । काहूके
धनहानि, किसी जय हार न चिंतै । देय न सो उपदेश, होय अघ
बनब कृपितै ॥११॥ कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
असि धनु हल हिंसोप—करन नहिं, दे जश लाधै ॥ राग द्वेष कर-
तार, कथा कबहुं न सुनीजै । औरहु अनरथ दण्ड, हेतु अघ तिन्हें
न कीजै ॥१२॥ धर उर समता भाव, सदा सामायक करिये । प-
रव चतुष्टय माहि, पाप तज प्रोषध धरिये ॥ भोग और उपभोग,
नियमकर ममत निवारै । मुनिको भोजन देय, फेर निज करहि
अहारै ॥१३॥ बारह व्रतके अतीचार, पाय पन पन न लगावै । मरण
समय सन्यास, धार तसु दोष नशावै ॥ यों श्रावक व्रत पाल. स्वर्ग
सोलम्न उपजावै । तहंते चय नर जन्म, पाय मुनि हूवै शिव जावै ।

पञ्चम ढाल ।

मनोहर छन्द १४ मात्रा ।

मुनि सकल घनी बड़ भागी । भवभोगनतै वैरागी ॥ वैराग्य
उपावन माई । चिंतै अनुप्रेक्षा भाई ॥१॥ इन चिन्तत समरस जागे,
जिम ज्वलन पवनके लागै ॥ जबही जिय आतम जानै । तबही
जिय शिवसुख ठानै ॥२॥ जोवन गृह गो धन नारी । हय गय उन
आन्नाकारी ॥ इन्द्रिय भोग छिन थाई । सुरधनु चपला चप-
लाई ॥३॥ सुर असुर खगाधिप जेते । मृत ज्यों हरि काल दले
ते ॥ माणिमंत्रतंत्र बहु होई । मरते न बचावे कोई ॥४॥ चहुंगति दुख
जीव भरै हैं । परिवर्तन पञ्च करै हैं ॥ सब विधि संसार असारा । तामें
सुख नाहिं लगारा ॥५॥ शुभ अशुभ कर्म फल जेते । भोगें जिय
एकहिं तेते ॥ सुत दारा होय न सोरी । सब स्वारथके हैं भीरी ॥६॥
जलपय ज्यों जियतन मेला । पै भिन्न २ नहिं मेला ॥ जो प्रगट
जुदे धन धामा । क्यों है इक मिल सुत रामा ॥७॥ पल रुधिर
राध मल थैलो । कीकस वसादिते मैलो ॥ नव द्वार बहै घिनकारी
अस देह करै किम यारो ॥८॥ जो योगनकी चपलाई । ताते है
आश्रव भाई ॥ आश्रय दुखकार घनेरे । बुद्धिवंत तिन्हें निरबेरे ॥९॥
जिन पुण्य पाप नहिं कीना । आतम अनुभव चित दीना ॥ तिनहीं
विधि आवत रोके । संबर लहि सुख अवलोके ॥१०॥ निज काल
पाय विधि भरना । तासों निजकाज न सरना ॥ तप करि जो कर्म
खपावे । सोई शिवसुख दरसावे ॥११॥ किनहुं न करो न धरै को ।
घट द्रव्यमयी न हरै को ॥ सो लोकमाहिं बिन समता । दुख सहै
जीव नित भ्रमता ॥१२॥ अंतिम ग्रीवकलोंको हृद । पायो अनन्त

विरिचों पद । पर सम्यक्ज्ञान न लाधौ । दुर्लभ निजमें मुन साधौ
॥ १३ ॥ जे भाव मोहतै न्यारे । द्वगज्ञान वृतादिक सारे ॥ सो
धर्म जवै जिय धारै । तबहीं सुख अचल निहारै ॥ १४ ॥ सो धर्म
मुनिनकरि धरिये । निनकी करतूति उचरिये ॥ ताकूँ सुनिये
भवि प्राणी । अपनो अनुभूति पिछानी ॥ १६ ॥

अथ षष्ठम ढाल—हरिगीता छंद २८ मात्रा ।

षट्काय जीवन हननतै सब, बिध दरब हिंसा टरी । रागादि
भाव निवारतै, हिंसा न भावित अवतरी ॥ जिनके न लेश मृषा न
जल तृण, हूं बिना दीर्यों गहैं । अष्टदश सहस विधि शीलधर
चिदब्रह्ममें नित रमि रहैं ॥ १ ॥ अन्तर चतुर्दश भेद बाहर, संग दश-
धातै टलै । परमाद तजि चक्र करम हो लखि, समिति ईर्यातै चलै ॥
जग सुहितकर सब अहित हर, श्रुति सुखद सब संशय हरै । भ्रम
रोग हर जिनके बचन मुख, चद्रतै अमृत भरै ॥ २ ॥ छयालीस
दोष बिना सुकुल, श्रावक तणे घर अशनको । लै तप बढ़ावन हेत
नहिं तन; पोषते तजि रसनको ॥ शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखि,
कै गहैं लखिकै करै । निर्जंतु थान विलोक तन मल, मूत्र श्लेषम
परिहरै ॥ ३ ॥ सम्यकप्रकार निरोध मन वच, काय आतम ध्या-
वते । तिन सुधिर मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते ॥
रस रूप, गंध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने । तिनमें न
राग विरोध पंचेंद्रिय जयन पद पावने ॥ ४ ॥ समता सम्हारै धुति
उचारै; बन्दना जिन देवको । नित करै श्रुति रति करै प्रतिक्रम
तजै तन अहमेवको ॥ जिनके न न्हौन न दंतधोवन, लेश अंबर
आवरण । भूमाहिं पिछली रयनिमें कछु शयन एकासन करण ॥ ५ ॥

इकबार लेत अहार दिनमें खड़े अलप निज पानमें । कचलोंच करत न डरत परिपह, सों लगे निज ध्यानमें ॥ अरि मित्र महल मसान वंचन, कांच, निन्दन थुतिकरण । अर्धावतारण असि प्रहारण-में सदा समता धरण ॥६॥ तप तपै द्वादश धरें वृष दश, रत्नत्रय सेवै सदा । मुनि साथमें वा एक चिचरै, चहै नहिं भवसुख कदा ॥ यों है सकल संयम चरित सुनिये स्वरूपाचरण अब । जिस होत प्रगटे आपनी निधि, मिटै परकी प्रवृत्ति सब ॥७॥ जिन परम पैनी सुबुधि छैनी डार अन्तर भेदिया । वरणादि अरु रागादिने, निज भावको न्यारा किया ॥ निजमाहिं निजके हेत निजकर, आपको आपै गह्यो । गुणगणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मंभार कलु भेदन रह्यो ॥ जहं ध्यान ध्याता ध्येयको न, विलकष बच भेद न जहां । चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहां ॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुद्ध, उपयोगकी निश्चल दशा । प्रगटी जहां दृग्ज्ञानव्रत ये, तीनधा एकै लशा ॥ ६ ॥ परमाण नय निक्षेपको न उद्योत, अनुभवमे दिखै । दृग्-ज्ञान—सुख-बल मय सदा नहिं; आन भाव जो मो चिखौ ॥ मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनितै ॥ वितपिंड चंड अखंड, सुगुन करड च्युत पुनि कल-नितै ॥ १० ॥ यों चिन्त्य निजमें धिर भए तिन, अकथ जो आनन्द लह्यो । सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अह-मिन्द्र कै नाहीं कह्यो ॥ तबही शुक्ल ध्यानाग्नि करि चउ, घात विधि कानन दह्यो । सब लख्यो केवलज्ञान करि भवि, लोककों शिवमग कह्यो ॥११॥ पुनि घाति शेष अघात बिधि, छिनमाहिं अष्टम भू बसं । बसु कर्म विनसै सुगुण बसु, सम्यक्त आदिक सब लसै ॥ संसार खार अपार पारावार, तरि

तीरहिं गये । अविकार अधल अरूप शुभ, चिद्रूप अविनाशी भये
॥ १२ ॥ निजमाहिं लोक अलोक गुण, पर्याय प्रतिबिम्बित थये ।
रहि हैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परणये ॥ धनि धन्य
हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया । तिनही अनादा भ्रमण
पञ्च, प्रकार तजि बर सुख लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यों
वड़, भागि रत्न त्रय धरें । अरु धरेंगे ते शिव लहैं तिन, सुजशजल-
जगमल हरैं ॥ इम जानि आलस हानि साहस, ठानि यह सिद्ध
आदरों । जबलों न रोग जरा गहैं तब लों जगत निजहित करों
॥ १४ ॥ यह राग आग दहै सदा तातै समामृत पीजिये ॥ चिर भजे
विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद लोजिये ॥ कहा रच्यो पर
पदमें न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहे । अब दौल होउ सुखी स्वपद
रचि, दाव मत चूकौ यहै ॥ ५ ॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी, तीज सुकुल बैशाख । करयो
तत्त्व उपदेश यह, लखि बुधजनकी भाख ॥ १ ॥ लघु धी तथा
प्रमादते, शब्द अर्थकी भूल । सुधो सुधार पढो सदा, जो पावो
भव कूल ॥ २ ॥

३३ समाधिक पाठ भाषा ।

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म ।

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें सहियो दुख भारी । जन्ममरण नित
किये पापको है अधिकारी ॥ कोटि भवांतरमाहिं मिलन दुर्लभ

सामायक धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुख दायक ॥ १ ॥
 हे सर्वज्ञ जिनेश किये जे पाप जु मैं अब । ते सब मनवचकाय
 योगकी गुति बिना लभ ॥ आप समीप हजूरमाहिं मैं
 खड़ो खड़ो अब । दोष कहं सो सुनो करो नठ दुख देहिं जब
 ॥ २ ॥ क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्राणी । दुःख-
 सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥ बिना प्रयोजन एकेंद्रिय
 बिति चउ पंचेंद्रिय । आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय
 ॥ ३ ॥ आपसमें इक ठोर थापि करि जे दुख दीने । पेलि दिये
 पगतलें दाबकरि प्राण हरीने ॥ आप जगतके जीव जिते तिन
 सबके नायक । अरज करौं मैं सुनो दोष मेढो सुखदायक ॥ ४ ॥
 अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय । तिनके जे अपराध भये
 ते क्षिमा क्षिमा किय ॥ मेरे जे अब दाप भये तें क्षमों दयानिधि ।
 यह पड़िकोणो कियो आदि षट कर्ममांहि विधि ॥ ५ ॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यानकर्म ।

जा प्रमादवश होय विराधे जीव घनेरे । तिनको जो अपराध
 भयो मर अघ ढेरे ॥ सो सब भूठो होउ जगतपतिके परसादै । जा
 प्रसादतैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लज्ज दया-
 करि हीन महाशठ । किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ ॥
 निदूहूं मैं बारबार निज जियको गरहूं । सबविध धर्म उपाय पाय
 फिर पापहिं करहूं ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावककुल भारी ।
 सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धाधारी ॥ जिनबचनामृतधार समा
 वतैं जिनवानी । तौहू जीव संहारे धिक धिक धिक हम जानी ॥ ८ ॥
 इन्द्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब । भ्रमानी जिम करे

तिसो विधि हिंसक हूँ अब ॥ गमनागमन करंतो जीब विराधे भोले । ते सब दोष किये निन्दू अब मनबच तोले ॥६॥ आलोचन-विध थकी दोष लागे जू घनेरे । ते सब दोष बिनाश होउ तुमतैं जिन मेरे ॥ बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता । ईर्षादि-कतैं भये निन्दिये जे भयभीता ॥१०॥

तृतीय सामायिक कर्म ।

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है । सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है ॥ आर्त्ता रौद्र द्वय ध्यान छांड़ि कहिं सामायक ॥ संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ॥ ११ ॥ पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय बनस्पति । पांचहि थावर-माहिं तथा त्रस जीव वसैं जिन ॥ वे इन्द्रिय तिय चउ पंचेंद्रिय-माहिं जीव सब । तिनमें क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब ॥१२॥ इस अवसर मैं मेरे सब सम कञ्चन अरु त्रण । महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहि सम गण ॥ जामन मरन समान जानि हम समता कीनो । सामयिकका काल जिते यह भाव नवोनो ॥ १३ ॥ मेरो है इक आतम ताने ममत जु कीनौ ॥ और सबै मम भिन्न जानि समतारस भोनौ ॥ मात पिता सुन वंधु मित्र त्रिय आदि सबे यह । माते न्यारे जानि जथारथरूप कयों गह ॥ १४ ॥ मैं अनादि जगजालमाहिं फंस रूप न जान्यो । एकेंद्रिय दे आदि जन्तुको प्राण हराण्यो ॥ ते अब जीव समूह सुनी मेरी यह अरजी भवभवको अघराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ॥१५॥

अथ चतुर्थ स्तवनकर्म ।

नमूँ ऋषभ जिनदेव अजित जिन जोत कर्मको । संभव भव-

दुखहरण करण अभिनन्द शर्मको ॥ सुमति सुमति दातार तार
 भवसिंधु पारकर । पद्मप्रभ पद्मप्रभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥१६॥
 श्रीसुपाश्व कृत पास नाश भव जास शुद्ध कर । श्रीचन्द्रप्रभ चन्द्र-
 कान्तिसम देहकान्ति धर । पुष्पदन्त दमि दोषकोश भवि पोष
 रोषहर । शीतल शीतल करन हरन भवनाप दोषहर ॥ १७ ॥ श्रेय
 रूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्यजन । वासुपूज्य शतपूज्य वास-
 वादिक भवभय हन ॥ विमल विमल मतिदेन अन्तगत हैं अनन्त
 जिन । धर्म शर्म शिवकरण शांति जिन शान्तिविधायिन ॥ १८ ॥
 कुन्थ कुन्थ मुख जीवपाल अरनाथ जाल हर । मल्लि मल्लसम माह-
 मल्ल मारण प्रचार धर ॥ मुनिसुव्रत व्रत करण नमन सुरसंग्रहि
 नमि जिन । नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ मांहि ज्ञान धन ॥१९॥
 पार्श्वनाथ जिन पार्श्वउपलसम मोक्षरमापति । वर्द्धमान जिन
 नमूं बमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ याविधि मैं जिनसंग्ररूप चउवीस
 संख्यधर । स्तऊं नमूं हूं बार बार बंदौं शिवसुखकर ॥२०॥

पञ्चम वन्दनाकर्म ।

बन्दू मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति वर्द्धमान अतिवीर
 बन्दूहों मनवचतनकृत ॥ त्रिशलाननुज महेश धीश विद्यापति बंदू ।
 बन्दू नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकन्दू ॥२१॥ सिद्धारथ नृपमन्द
 द्वंद्व दुखदोष मिटावन । दुरित दवानल ज्वलितज्वाल जगजीव उ-
 धारन ॥ कुण्डलपुर करि जन्म जगतजिय आनन्दकारन । वर्ष ब-
 हस्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन ॥२२॥ सप्त हस्त तनु तुङ्ग
 भङ्ग कृत जन्म मरण भय । बालब्रह्ममय क्षेत्र हेय आदेय ज्ञानमय ॥
 दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन । आप बसे शिवमाहिं

ताहि बन्दौ मनवचन ॥ २३ ॥ जाके बन्दनथकी दोष दुख दूरहि जावै । जाके बन्दनथकी मुक्ति नित्य सम्मुख आवै ॥ जाके बन्दन-
थकी बंध होवै सुरगनके । ऐसे वीर जिनेश बन्दिहं क्रमयुग
तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक पटकर्ममाहिं बंदन यह पञ्चम
वन्दे वीरजिनेन्द्र इन्द्रशतबन्ध वन्द्य मम ॥ जन्म मरण भय
हरो करो अघ शांतशांत मय । मै अघ कोष सुपोष दोषको दोष
विनाशय ॥ २५ ॥

छट्टा कायोत्सर्गकर्म ।

कायोत्सर्गविधान करूँ अन्तिम सुखदाई । कायत्यजन मय
होय काय सबको दुखदाई ॥ पूरव दक्षिण नमूँ दिशा पश्चिम उत्तर
मै । जिनगृह वंदन करूँ हरूँ भवपापतिमिर मै ॥ २६ ॥ शिरोनतीमें
करूँ नमूँ मस्तक कर धरिकें । आवर्त्तादिक क्रिया करूँ मनबच
मद हरिकें ॥ तीन लोक जिन भवनमांदिं जिन हैं जु अकृत्रिम ।
कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वोपमाहीं वंदौं जिम ॥ २७ ॥ आठ कोडिपरि छप्पन
लाख जु सहस सत्याणूँ । चारि शतकपरि असी एक जिनमंदिर
जाणूँ ॥ व्यंतर ज्योतिषमांदिं संख्यरहिते जिनमन्दिर । जिनगृह
वन्दन करूँ हरहु मम पाप सघकर ॥ २८ ॥ सामायिक सम नाहिं
और कोउ वैर मिटायक । सामायिक सम नाहिं और कोउ द्वैत्री-
दायक ॥ श्रावक अणुवन आदि अंत समम गुणधानक । यह आ-
वश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे भवि आतम काज
करण उद्यमके धारी । ते सब काज बिहाय करो सामायिक सारी ॥
राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब । बुध महाबन्ध वि-
लाय जाय तानै कीज्यो अब ॥ ३० ॥ इति ॥

पशुवन पर दृष्टि परे नमस्त सुरनर मुनीन्द्रादिक चरन सोस नैवा
॥ ३ ॥ प्रभुके चरणारविन्द जपत हैं जवाहरबन्द कर जोरें ध्यान
धरें चाहत नित सेवा ॥ ४ ॥

४६ दौस्तकृत प्रभाती

पारस जिन चरण निरखि हरष ज्यों लहायो । चितवत चन्दा
चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुनि घनघोर सोर मोरके
मन हरष ओर रंक निधि समाज राज पाय मुदित थायो ॥१॥ ज्यों
जन चिर क्षुधित कोय भोजन लह सुखित होय भेषज मद हरन
पाय आतुर हरषायो ॥ २ ॥ बासर धनि आज दुरित दुरे फिर
सुकृत आज शान्ताकृत देखि महामोह तम बिलायो ॥३॥ जाके
गुन जानन शोभानन भव कानन इमि जान दौल सरन आय शिंव
मुख ललचायो ॥ ४ ॥

४७ दौस्तकृत प्रभाती

निरखत जिन चन्द्र वदन सुपद खरुचि आई ॥ टेक-॥ प्रगटी
निज आनकी पिछान आन भानकी कला उद्योत होत काम यामि-
नी पलाई ॥१॥ साखत आनन्द खाद पायो बिनसो बिषाद मानन
अमिष्ट इष्ट कल्पना नलाई ॥ २ ॥ साधो निज साधकी
समाधि मोह व्याधिकी उपाधि कविराधिके अराधना सुहाई ॥३॥
धन दिन छिन आज सुगुन चिंते जिनराई । सुधरो सब काज
दौल अचल रिद्धि पाई ॥ ४ ॥

४८ णमोकार महिमा प्रभाती

प्रातकाल मंत्र जपो णमोकार भाई । अक्षर पैतोस शुद्ध हृदयमें
धराई ॥ टेक ॥ नर भव तेरो सुफल होत पस्तक टर जाई । विघन

जासु दूर होत संकटमें सहाई ॥ १ ॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्ताम-
णि जाई । ऋद्धि सिद्धि पारस तेरे प्रगटाई ॥ २ ॥ मंत्र जन्त्र तन्त्र
सब जाही बनाई । सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि भाई ॥ ३ ॥
तीन लोक माहिं सार वेदनमें गाई । जगमें प्रसिद्ध धन्य मंगलोक
भाई ॥ ४ ॥

४६ भागचन्द्रकृत प्रभाती

परणति सब जीवनकी तीन भांति वरणी । एक पुण्य एक
पाप एक राग हरणी ॥ टेक ॥ जामें शुभ अशुभ बन्द बोतराग
परणति भव समुद्र तरणी ॥ १ ॥ छांड़ि अशुभ क्रिया कलाप मत
करो कदाचि पाप शुभमें न मगन होय अशुद्धता विसरणी ॥ २ ॥
यावत ही शुभोपयोग तावत ही मन उद्योग तावत ही करण योग
कही पुण्य करणी ॥ ३ ॥ भागचन्द्र जा प्रकार जीव लहे सुख अपार
याको निरधार स्यादवादकी उचरणी ॥ ४ ॥

५० जैनदासकृत प्रभाती

उठि प्रभात पूजिये श्रो आदिनाथ देवा । आलसको त्याग
जागि पूजा विधि मेवा ॥ टेक ॥ जल चन्दन अक्षत प्रीति सम
लेवा । पुष्पते सुवास होय काम जरि जेवा ॥ १ ॥ नैवेद्य उज्ज-
ल करि दीप रतन लेवा । धूपते सुगन्ध होय अष्ट कर्म खेवा
॥ २ ॥ श्रीफल बादाम लोंग डोंडा शुभ मेवा । उज्ज्वल करि अर्घ
पूजि श्रीजिनेन्द्र देवा ॥ ३ ॥ जिनजी तुम अर्ज सुनो भवदधि उत-
रेवा । जैनदास जन्म सुफल भगति प्रभू एवा ॥ ४ ॥

५१ सबानीकृत प्रभाती

ताण्डव सुरपतिने जहां हर्ष भाव धारी । ॥ टेक ॥ रूनु रूनु

लु नूपुर ध्वनि ठुमकि २ पैजन पग झुन झुन झुन किन छवि
लगति अति प्यारी ॥ १ ॥ अ न न न न सार दानि स न न न न
न किनरान अ घ घ घ गंधवं सर्व देत जहां तारी ॥ २ ॥ पं पं पं
पग भपटि फं फं फ फ न न न न न वं व मृदङ्ग बाजे बीना धुन
सारी ॥ ३ ॥ अ द द द द द विद्याधर दि दि दि दि दि दि देव
सकल दास भमानी ज्यो कहे जिन चरनन बलिहारो ॥ ४ ॥

५२ मानिककृत भजन

नहीं रुचे और छवि नैननमें, तेरो शान्ति छवी मन बस गई
रे ॥ टेक ॥ निर्विकार निर्ग्रथ दिगम्बर देखत कुमति विनसि गई
रे ॥ १ ॥ चिर मिथ्यातम दूर करनको चन्द्र कला सो दरश रही रे
॥ २ ॥ मानिक मन मयूर हृषनको मेघ घटा सो दरश रही रे ॥ ३ ॥

५३ नवलकविकृत खम्माच

आज कोई अद्भुत रचनारचो ॥ टेक ॥ समोशरण शोभा
देखनको होड़ा होड़ी मची ॥ १ ॥ स्वर्ग विमान तले छवि जाके
देखत मनन खिची ॥ २ ॥ जिन गुण स्वादत रसिया परनकी
रोभन जात मचो ॥ ३ ॥ नवल कहे ऐसो मन आवे हष धार कर
नची ॥ ४ ॥

५४—मोहनलालकृत भंभोटो ।

देखि सखी छवि आज भलो रथ चढ़ि यदुनन्दन आवत हैं
॥ टेक ॥ तोन छत्र माथे पर सोहैं त्रिभुवननाथ कहावत हैं ॥ १ ॥
मोर मुकट केसरिया जामा चोसठ चमर दुरावत हैं ॥ २ ॥ ताल
मृदङ्ग साज सब बाजत आनन्द मङ्गल गावत हैं ॥ ३ ॥ मोहनलाल
जास चरननकी भुकि झुकि शीस नवावत हैं ॥ ४ ॥

५५ विहारीकृत—राग देश ।

आज जिनराज दर्शनसे भयो आनन्द भारी हैं ॥ टेक ॥ लखे
ज्यों मोर घन गर्जे सुनिधि पाये भिखारी है । तथा मो मोड़की
वार्ता नहीं जाती उच्चारी है ॥१॥ जगनके देख सब देखे क्रोध भय
लोभ भारी है ॥ तुम्हीं दोषावरण बित हों कहा उपमा तिहारी है
॥२॥ तुम्हारे दर्शबिन स्वामी भई चहुंगतिमें ख्वारी है । तुम्हीं पद
कंज नमते ही मोहनी धूल भारी है ॥३॥ तुम्हारी भक्तिसे भवजन
भये सब सिन्धु पारी हैं । भक्ति मोहि दीजिये अबिचल सदा या-
चक विहारी है ॥४॥

५६ मानिककृत—सोरठा ।

ज्ञानी पिछा क्यों बिखरे निज देश । कुमति कुरमिनी सोत
संग राखे छाय रहे परदेश ॥ टेक ॥ अनन्तकाल परदेशनि छाये
पाये बहुत कलेश । देश तुम्हारे सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश
॥१॥ भ्रम मद पाय लुकाय रहो घन ज्ञान रहो नहिं लेश । दुखी
भये बिललात फिरत हो गति २ धरि दुरिमेश ॥२॥ यह संसार
जानि लख सुख नहीं रंचक लेश । मानिक काल लब्धि पावस
लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

पिल्लू ।

स्वामी मुजरा हटारा लीजे ॥ टेक ॥ तुम तो बीतराग आनन्द
घन हमको भी अब कीजे ॥ १ ॥ जगके देव सब रागी द्वेषी यासे
निज गुण दीजे ॥२॥ आदि देव तुम समानको वेग अचल पद दीजे ॥

५७ हीरालाल कृत रेखता

भगवान आदिनाथ जिन साँ मन मेरा लगा । आराम मुझे

होत दुःख कर्षसे भगा ॥ टैक ॥ मरु देखी नन्द धर्म कन्द कुलमें
सुर उगा । नृप नाभिराजके कुमार नमत सुर खला ॥१॥ युगका
निवार धर्मको संसारको तगा । बसु कर्मको जराय शिव पन्थमें
लगा ॥२॥ अब तो करो शिताव मिहरवान दिल लगा । कहें दास
होरालाल दीजे मुक्तिका भगा ॥३॥

५८ हजारीकृत—मजल ।

ख्याल कर दिल मभार चेतन अजब करमने भकाई गतियां
॥टैक॥ निगोद बस कर सुबोध खोया त्रिजग व नारक बनस्य-
तियां । कभी मनुष बा कभी सुरग बा अबादि ते दिन बितार्ई
रनियां ॥२॥ यह दुःख भर २ यतीम हूवा न गोरकी कहूं सुमाई
बनियां । पड़ा हूं अब तो उसोके दर पर लगें हजारी न यम की
पनियां ॥३॥

५९ हजारीकृत—लावनी ।

प्रभू भवसागर पार करो, मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥ टैक॥
तुम्हीं हो नित्य निरञ्जनदेव । कर इन्द्रादिक धारी सेव ॥ नामसे
पाप टरें स्वयमेव । अरज बित दोजे हमारी पव ॥ दोहा ॥ तुम
सुमरनसे नाथजी, सीजे हमरो काज ॥ तुम देवनके देख हो, लोक
शिखिर महाराज ॥ जगतमें तारन बिरद धरो । मेरे रागादिक०
॥१॥ जन्म मरणादि अनल भारी । चरण धुति भरत सलिल
भारो ॥ तासु मिट जात तापकारी । होत सुख अविक्ल अवि-
कारी ॥ दोहा ॥ ऐसे तुम गुण अबिन्त वर, तासम कीजे मोव ।
मोहादिक अरि अति प्रबल तिनका दीजे खोय ॥ आज तुम देखत
काज सरो । मेरे० ॥२॥ कर्म बसु अगणित दुखदाई । तासु बरा

जन बसे शिव अथ बसत फिर बसि हैं सहो । दौलत स्वरचि पर
विरचि सद्गुरु सीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥ इति ॥

चौथा अध्याय

६४ फूलमाल पक्कीसी ।

दोहा—जैन धरम त्रेपन किया, दया धरम संयुक्त ।

यादों वंश बिषैं जये, तोन ज्ञान करि युक्त ॥१॥

भयो महोत्सव नेमिको, जू नागढ़ गिरनार । जाति चुरासिय
जैनमत जुरै क्षोहनो चार ॥ २ ॥

माल भई जिनराजकी, गूंथी इन्द्रन आय ॥

देशदेशके भव्य जन; जुरे लेनको धाय ॥ ३ ॥

छप्पय—देश गौड़ गुजरात चौड़ सोरठ वीजापुर । करनाटक
कशमीर मालवो अरु अमेरधुर ॥ पानीपत होंसार और बैराट महा
लघु । काशी अरु मरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन सिंधु ॥ तह वंग
चंग बंदर सहित; उदधि पार लौ जरिय सब । आए जु चीन मह
चीन लग, माल भई गिरनारि जब ॥४॥

नाराच छन्द ।

सुगन्ध पुष्प वेलि कुंदि केतकी मगायकें । चमेली चंप
सेवती जुही गुही जु लायकें ॥ गुलाब कंज लायची सबै सुगन्ध
जातिके । सुमालती महा प्रमोद लै अनेक भांतिके ॥ ५ ॥ सुवर्ण
तारपोई बीच मोति लाल लाइया । सु होर पन्न नील पीत पद्म

जोति छाइया ॥ शची रची विचित्र भाँति चित्त देवनाई है । सु-
 न्द्रने उछाहसों जिनेन्द्रको चढ़ाई है ॥ ६ ॥ सुमागहीं अमोल माल
 हाथ जोरि बानियें । जुरी तहां चुरासि जाति रावराज जानिये ॥
 अनेक और भूपलोग संठसाहुको गर्ने । कहालु नाम वर्णियें सुदे-
 खते सभा बनें ॥ ७ ॥ खण्डेलवाल जैसवाल अग्रवाल आइया ।
 व घेरवाल पोरवाल देशवाल छाइया ॥ सहेलवाल दिल्लीवाल सेत-
 वाल जातिके । बढेलवाल पुष्पमाल श्री श्रीमाल पांतिके ॥ ८ ॥ सु
 ओसवाल पल्लुवाल नूखवाल चौसखा । पद्मावतीय पोरवाल दू-
 ढरा अठैसखा । गगेरवाल बंधुराल तोर्णवाल सोहिला । करिंद-
 वाल पल्लुवाल मेडवाल खोहिला ॥ ९ ॥ लमेंचु और माहुर माहंसुरी
 उदार हैं सुगोलवार गोलपूर्व गोलहूं सिंघार हैं ॥ बंधनौर मागधी
 विहारवाल मूजरा । सुखरुड राग होय और जानराज बूमरा ॥ १० ॥
 भुराल और सोरठी मुराल और चितौरिया । कपोल सोमराठ वगै
 हूमड़ा नागौरिया ॥ सीरीगहोड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया ।
 मिवाड़ मालवान और जोधड़ा समोधिया ॥ ११ ॥ सुभट्टनेर रायवल
 नागरा रुधाकरा । सुकंध राख जालुरारु वालमीक भाकरा ॥ परवार
 लाड़ चोड़ कोड़ गोड़ मोड़ संभरा । सु खंडिआत श्री खंडा चतुर्थ
 पञ्चमं भरा ॥ १२ ॥ सु रत्नाकार भोजकार नारसिंघ हैं पुरो । सु
 जम्बूवाल और क्षेत्रब्रह्म वैश्य लौ जुरी ॥ सु आइ हैं चुरासि जाति
 जैनधर्मकी घनी । सबै विराजी गोठियों जु इन्द्रकी सभा बनी
 ॥ १३ ॥ सुमाल लेनको अनेक भूपलोग आवहीं । सु एक एकतैं
 सुमाग मालको बड़ा वहीं ॥ कहें जु हाथ जोरि जोरि नाथ
 माल दीजिये । मंगाय देउं हेमरत्न सो भण्डार कीजिये ॥ १४ ॥

बखलवाल बाकड़ा हजार बीस देत हैं। हजार दे पचास
परवार फेरि लेत हैं। सु जैसवाल लाख देत माल
लेत चोपसों। जु दिल्लीवाल, दोय लाख देत हैं अगोपसों
॥ १५ ॥ सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोह दीजिये। दिनार देहु
एक लक्ष सो गिनाय लोजिये खंडेलवाल बोलिया जु दोय लाख
देउंगो। सुबाँटिके तमोल मैं जिनैन्द्र माल लेउंगो ॥ १६ ॥ जु-
संभरी कहैं सु मेरि खानि लेहु जायकें। सुवर्ण खानि देत हैं
चिसौड़िया बुलायके ॥ अनेक भू गाँव देउ रायसो चंदैरिका।
खजान खोली कोठरीं सु देत हैं अमेरिका ॥ १७ ॥ सुगौड़वाल यों
कहैं गयन्द बीस लीजिये। मढाय देव हेमदंत माल मोहि दीजिये ॥
परमारके तुंगसाजि देत हैं बिना गिने। लगाम जोन पाहुड़े जडाउ
हेमके बने ॥ १८ ॥ कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायकें। सुहोरा
मोती लाल देत ओशवाल आयके ॥ सु हंमड़ा हंकारहीं हमें न
माल देउगे। भराइये जिहाजमें कितेक दाम लेउगे ॥ १९ ॥ कितेक
लोग आयके बड़ेते हाथ जोरिकें। कितेक भूप देखिके चले जु
बाग मोरिकें ॥ कितेक सूप यों कहैं जु कैसे लक्षि देत हौ। लूटाय
माल आपनों सु फूलमाल लेत हौ ॥ २० ॥ कई प्रवीन श्राविका
जिनैन्द्रको बधावहीं। कई सुकंठ रागसों खड़ी जु माल गावहीं।
कईसु नृत्यकों करै लहैं अनेक भावहीं। कई मृदंग तालपै सु-
अंगको फिरावहीं ॥ २१ ॥ कहैं गुरु उदार धी सु यों न माल
पाइये ॥ कराइये जिनैन्द्र यज्ञ बिं हूं भराइये ॥ चलाइये जु संघ
जात संघहो कहाइये। तबै अनेक पुण्यसों अमोल माल पाइये
॥ २२ ॥ संबोधि सर्व गोदिसो गुरु उतारकें लई। बुलायकें

जिनेन्द्रमाल संघ रायको दई । अनेक हर्षसों करैं जिनेंद्र तिलक
पाइये । सुमाल श्रीजिनेंद्रकी बिनोदीलाल गाइये ॥ २३ ॥

दोहा—माल भई भगवन्तको, पाई संग नरिन्द । लालबिनोदी
उच्चरै सबको जयति जिनंद ॥ २४ ॥ माला श्री जिनराजकी, पाधे
पुण्य संयोग । यश प्रगटे कीरति बढ़े, धन्य कहैं सब लोग ॥ २५ ॥ इत

६५ पुकार पच्चीसी ।

दोहा—जै यह भव संसारमें, भुगते' दुःख अपार ।

सो पुकार पच्चीसिका, करैं कविन इक ढार ॥

तेईसा छन्द ।

श्री जिनराज गरीब निवाज सुधारन काज सबे सुखदाई ।
दीनदयाल बड़े प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिर नाई ॥ दुगति
टारन पापनिवारन हो भवतारन को भव ताई । बारही बार पुका-
रतु हों जनकी बिनतो सुनिये जिनराई ॥ १ ॥ जन्म जरा मरणो
त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल अनाई । तासु नसावनको तुम
नाम सुनो हम वैद्य महा सुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारनको
हमारे पद सेवतु हां चित ल्याई । बारही० ॥ २ ॥ जो इक छे
भवको दुख होय तो राख रहों मनको समझाई । यह चिरकाल
कुहाल भयो अब लों कहूं अन्त परो न दिखाई ॥ मो पर या जग
मांहि कलेश परे दुख घोर सहे नहिं जाई । बारही० ॥ ३ ॥ देख
दुखी पर होत दयाल सुहै इक ग्रामपति शिर नाई । हो तुम नाथ
त्रिलोकपति तुमसे हम अर्ज करो शिर नाई ॥ मो दुख दूर करो
भवके बसु कर्मन ते प्रभु लेउ छुड़ाई । बारही० ॥ ५ ॥ कर्म बडे

रिपु हैं हमरे हमरी बहु होन दशा कर पाई । दुःख अनन्त किये
 हमको हर भांतिन भांतिन खाद लगाई ॥ मैं इन बैरिनके बश हूँ
 करिके भटको सु कहो नहिं जाई । बारही० ॥ ५ ॥ मैं इस ही भव
 काननमें भटको चिरकाल सुहाल गमाई । किञ्चित् ही तिलसे
 सुखको बहु भांति उपाय करे ललचाई ॥ चार गते चिर मैं भटको
 जहां मेरु समान महा दुखदाई । बारही० ॥ ६ ॥ नित्य निगोद
 अनादि रहो त्रसके तनकी जहां दुर्लभताई । ज्यों क्रम सो निकसो
 वह ते त्यों इतर निगोद रहो चिरछाई ॥ सूक्ष्म बादर नाम भयो
 जब ही यह भांति धरी पर्यायी । बारही० ॥ ७ ॥ जबहीं पृथ्वी
 जल तेज भयो पुनि मारुत होय वनस्पति काई । देह अघात धरी
 जब सूक्ष्म घातत बादर दीरघताई ॥ एक उदै प्रत्येक भयो सह
 धारण एक निगोद बसाई । बारही० ॥ ८ ॥ इन्द्रिय एक रही
 चिरमें कब लब्धि उदै स्वयं उपशमताई । वे त्रय चार धरी जब
 इन्द्रिय देह उदै विकलत्रय आई ॥ पंचन आदि किधौं पर्यन्त धर
 इन इन्द्रियके त्रस काई । बारही० ॥ ९ ॥ काय धरी पशुकी बहु
 बार भई जल जन्तुनकी पर्याई । जो थल मांहि अकाश रहो चिर
 होय पखेरू पङ्क लगाई ॥ मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके वरणे कहूं
 पार न पाई । बारही० ॥ १० ॥ नरक मभार लियो अवतार परौ
 दुख भार न कोई सहाई । जो तिलसे सुख काज किये अघते सब
 नरकनमें सुधि आई ॥ ता तियके तनकी पुतली हमरे हियरा करि
 लाल भिराई ॥ बारही० ॥ ११ ॥ लाल प्रभा सु महीं बह हैं अरु
 शकर रेत उन्हार बताई । पङ्क प्रभा जु धुआंवत है तमसी सु
 प्रभासु महातम ताई ॥ जोजन लाख जु षोड़स पिएड तहां इकही

अरुवाह । वनस्वतीमें बसे शुभाय ॥ ऐसी गतिमें बहु दुख
भरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ५ ॥ केतिक काल यहां ही
गयो । तहंसे कड़ विकलत्रय भयो ॥ ताको दुख कुछ जाय न
वरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ६ ॥ पशु पक्षीकी काया पाई
चेतन तहां रहो लपटाई ॥ बिन विवेक कहो क्यों तरना । एते
पर एता क्या करना ॥ ७ ॥ इम तिर्यक् महा दुख सहे । सो काहू
ते जाय न कहे ॥ पाप कमेसे इस गति परना । एते पर एता क्या
करना ॥ ८ ॥ बहुरो पड़ो नर्कके माहीं । सो दुख कैसे वरणे
जाहीं ॥ भू दुर्गन्ध नाक जहां सरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ९ ॥
अग्नि समान तप्त भू कहीं । कितहू शीत महा बन रही ॥ शूली
सेज क्षणक ना डरना । एते पर एता क्या करना ॥ १० ॥ परम
अधर्मों असुर कुमार । छेदन भेदन करे अपार ॥ तिनके वशसे
नाहिं उबरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ११ ॥ रंचक सुख जहं
जियको नाहीं । बसते यहां नर्क गति माहीं ॥ देखत दुष्ट महा
भय भरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १२ ॥ पुण्य योग भयो
सुर अवतार । फिरत २ इस जगति मभार ॥ आवत काल देख
थर हरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १३ ॥ सुर मन्दिर अरु
सुख संयोग । निशि दिन मन वांछित वर भोग ॥ क्षण इक माहिं
तहांसे टरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १४ ॥ बहुत जन्म
तक पुण्य कमाय । तब कहूं लही मनुज पर्याय ॥ तामें लयो जरा-
दिक मरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १५ ॥ धन योवन सब
ही ठकुराई । कर्म योगसे नव निधि पाई ॥ सो स्वप्नान्तर कैसा
भरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १६ ॥ इन विषयनके तो दुख

दीनों । तबहूँ तू तिनहीं रस भीनो ॥ तनक विवेक हृदय न
 धरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १७ ॥ पर संगति कितना
 दुख पावे । तब भी तोकों लाज न आवे ॥ वासन संग नीर ज्यों
 जरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १८ ॥ देव धर्म गुरु शास्त्र न
 जाने । स्वपर विवेक न उरमें आने ॥ क्यों होसी भवसागर त-
 रना । एतेपर एता क्या करना ॥ १९ ॥ पांचों इन्द्रिय अति घट-
 मारे । परम धर्म धन मूलत हारे ॥ हाथ पिवहिं एता दुख भर-
 ना । एतेपर एता क्या करना ॥ २० ॥ सिद्ध समान न जाने आप-
 यासे तोहि लगत है पाप ॥ चोल देख घट पटहि बघरना । एतेपर
 एता क्या करना ॥ २१ ॥ श्रीजिन बचन अमिय रस वानी । पीवे नाहिं
 मूढ़ अज्ञानो ॥ जासे होय जन्म मृत्यु हरना । एते पर एता क्या
 करना ॥ २२ ॥ जो चेतें तो है यह दाव । नातर बैठा मझल गाव ।
 फिर यह नर भव बृक्ष न फरना । एते पर एता क्या करना ॥ २३ ॥
 भैया बिनवे बारम्बार । चेतन चेत भलो अवतार । हो दूल्ह शिव
 रानी वरना । एते पर एता क्या करना ॥ २४ ॥

दोहा—ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय । सो परमात्म
 ध्याइये यही मोक्ष सुखदाय ॥ २५ ॥ सत्रह सौ इकनालीसके मार्ग
 शीर्ष निरपक्ष । तिथि शङ्कर गण लीजिये श्रोरविवार प्रत्यक्ष ॥ २६ ॥

६८ धर्म पक्कीसी ।

दोहा—भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्म धुरन्धर धोर ।

नमत सुरेन्द्र जग तम हरण; नमो त्रिविध गुरवोर ॥

चौपाई—मिथ्या विषयनमें रति जीव । ताते जगमें भ्रमे

सदीव ॥ विविध प्रकार गहैं परयाय । श्रोजिनधर्म न नेक सुहाय
॥२॥ धर्म बिना बहुगतिमें परे । चौरासीलख फिर फिर धरे ॥ दुख
दाषानल माहिं तपन्त । कर्म करे फल भोग लहन्त ॥३॥ अति दुर्लभ
मानुष पर्याय । उत्तम कुल धन रोग न काय ॥ इस अवसरमें धर्म
न करे । फिर यह अवसर कबहुं न सरे ॥ ४ ॥ नरकी देह पाय रे
जीव । धर्म बिना पशु जान सदीव ॥ अर्थ काममें धर्म प्रधान ।
ता बिन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत ।
शुभसङ्गन आवै कर प्रीति ॥ विघ्न हरे सब कारज करे । धन सों
चारों कृने भरे ॥६॥ जन्म जरा मृत्यु बश होय । तिहुंकाल डोले
जग सोय ॥ श्रोजिन धर्म रसायन पान । कबहुं न रुचे उपजे अ-
ज्ञान ॥७॥ ज्यों कोई मूर्ख नर होय । हलाहल गहे अमृत खोय ॥
त्यों शठ धर्म पदारथ त्याग । विषयन सों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥
मिथ्याग्रह गहिया जो जीव । छांड धर्म विषयन चित दीव ॥ ज्यों
पशु कल्पवृक्षको तोड़ । वृक्ष धतूरेकी भू जोड़ ॥९॥ नर देही जानों
परधान । विसर विषय कर धर्म सुजान ॥ त्रिभुवन इन्द्रतने सुख
भोग । पूजनीक हो इन्द्रन जोग ॥ १० ॥ चन्द्र बिना निश गज बिन
कन्त । जैसे तरुण नारि बिन कन्त ॥ धर्म बिना त्यों मानुष देह ।
ताते करिये धर्म सुनेह ॥ ११ ॥ हथ गय रथ पावक बहु लोग ।
सुभट बहुत दल चार मनोग । ध्वजा आदि राजा बिन जान । धर्म
बिना त्यों नरभव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध बिना है फूल । नीर
बिहीन सरोवर धूल ॥ ज्यों बिन धन शोभित नहीं भोन । धर्म
बिना त्यों नर चिन्तोन ॥१३॥ अरचे सदा देव अरहन्त । चर्चे गुरु-
पद कहुणावन्त । खरखे दाम धरम सों प्रेम । रुचे विषय सुफल

नर एम ॥ १४ ॥ कमला चपल रहे धिर नाहिं । योवन रूप जरा
 लिपटाहिं ॥ सुत मित नारी नाव संयोग । यह संसार स्वप्नको
 भोग ॥ १५ ॥ यह लख बित धर शुद्ध स्वभाव । कीजै श्रीजिन धम
 उपाव ॥ यथा भाव तैसो गति गहै । जैसी गति तैसो सुख लहै
 ॥ १६ ॥ जो मूर्ख है धर्म कर हीन । विषय ग्रन्थ रविब्रत नहिं कीन ।
 श्रीजिन भाषित धर्म न गहै । सो निगोदको मारग लहै ॥ १७ ॥
 आलस मन्द बुद्धि है जास । कपटी विषय मग्न शठ तास ॥ काय-
 रता मद परगुण ढकै । सो तिर्यञ्चयोनि लक्ष सकै ॥ १८ ॥ आरत
 रुद्र ध्यान नित करे । क्रोध आदि मतसरता धरे ॥ हिंसक बैरभाव
 अनुसरे । सो पापिष्ट नरक गति परे ॥ १९ ॥ कपट हीन करुणा
 बित माहिं । है उपाधि ये भूले नाहिं ॥ भक्तिवन्त गुणवन्त जो
 कोय । सरलस्वभाव जो मानुष होय ॥ २० ॥ श्रीजिन वचन मग्न
 तप दान । जिन पूजे दे पात्रहि दान ॥ रहै निरन्तर विषय उदास ।
 सोई लहै स्वर्ग आवास ॥ २१ ॥ मानुष योनि अन्तके पाय । सुन
 जिन वचन विषय विसराय ॥ गहे महाव्रत दुर्द्धर वोर । शुक्ल-
 ध्यान धर लहै शिव धोर ॥ २२ ॥ धर्म करत सुख होत अपार । पाप
 करत दुख विविध प्रकार ॥ बाल गुपाल कहै सब नार । इष्ट होय
 सोई अवधार ॥ २३ ॥ श्रीजिनधर्म मुक्ति दातार । हिंसा धर्म परत
 संसार ॥ यह उपदेश जान बड़ भाग । एक धर्म सो कर अनुराग
 ॥ २४ ॥ व्रत संयम जिम पद थुति सार । निर्मल सम्यक भाव
 निवार ॥ अन्त कषाय विषय कृषि करो । जो तुम भक्ति कामिनो
 वरो ॥ २५ ॥

दोहा—बुध कुम्भदिन शशि सुख करन, भो दुख नाशन जान ।

कह्यो ब्रह्म जिन दास यह, ग्रन्थ धर्मकी खान ॥२६॥ दानत जे
वांचें सुनें, मनमें करे उछाय । ते पावैं सुख शान्ति भी, मन
वांछित फल दाय ॥ ॥ इति ॥

६६ अध्यात्म पञ्चासिका ।

दोहा—आठ कर्मके बंधेमें, बन्धजीव भव बास । कर्म हरे सब
गुण भरे, नमों सिद्धि सुखरास ॥१॥ जगत मांहिं चहुं गति विषै,
जन्म मरण वश जीव । मुक्ति माहिं तिहुकालमें, चेतन अमर स-
दीव ॥ २ ॥ मोक्ष माहिं सेती कमी, जगमें आवे नाहिं । जगके
जीव सदीव ही, कर्म काट शिव जाहिं ॥ ३ ॥ पूर्व कर्म उद्योगते
जोव करे परिणाम । जैसे मदिरा पानते, करे गहल नर काम ॥४॥
नार्ते बाधे कर्मको, आठ भेद दुखदाय । जैसे चिकने गातमें, धूलि-
पुञ्ज जम जाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मनके उदय, करे जीव बहु
भाय । फिरके बांधे कर्मको, ये ससार सुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावन
ते पुण्य है, अशुभ भाव ते पाप । दुह आच्छादित जीवसो, जान
सके नहीं आप ॥ ७ ॥ चेतन कर्म अनादिके, पावक काठ बखान ।
क्षीर नीर तिल तेल ज्यों, खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल बन्ध्यों
गठड़ी विष्टै; भानु छिपो घन मांहिं । सिंह पीअरे मैं दियो, जोर
चले कलु नाहिं ॥९॥ नीर बुझावै आगको, जले टोकनी माहिं, देह
माहि चेतन दुखी, निज सुख पावे नाहिं ॥१०॥ तदपि देहसों छुटत
है, अन्तर तन है संग । सो न ध्यान अग्नौ दहै; तब शिव होय अ-
भंग ॥ ११ ॥ राग दोष ते आप हीं, पड़े जगतके माहिं । ज्ञान भाव
ते शिव लहै, दूजा संगी नाहिं ॥ १२ ॥ जैसे काहू पुरुषके द्रव्य

सिद्धसे गजपुर आये । पिता सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये ॥
 शुभ कुरुवंश महान हेम तनु मच्छ चिन्हवर । तीस चांप तन तुंग
 त्रिजन मनमोहन सुन्दर ॥ सहस्र चउरासो वर्षका आयु खंड
 आसन अटल । शिवथान शिखर सम्मेद जिन बन्दों तिनके पद
 कमल ॥ १६ ॥ मलिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना ।
 कुम्भ पिता रक्षिता माताको बहु सुख दीना ॥ वंश कहो इक्ष्वाकु
 हेम तनु घट लक्षण वर । काय धनुष पञ्चीस तुंग महीं लख सुर
 नर ॥ आयु वर्ष पचपन सहस्र खड्गासन सोही अचल । शिवथान
 शिखर सम्मेदवर तीर्थराज विसरे न पल ॥ २० ॥ मुनिसुव्रत
 अपराजितसे कुशाग्रपुर राजे । पितु सुमित्र पद्मावन माताको सुख
 साजे ॥ हरिवंशी तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोही । बीस
 धनुषका काय तुंग देखत मन मोही ॥ तीस सहस्र सु वर्षका आयु
 खंग आसन सुभग । सम्मेद शिखर शिवथान प्रभु तीर्थराज भवि
 मुक्ति मग ॥ २२ ॥ प्राणत तज नमिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना ।
 विजय पिता वप्रामाताको अति सुख दीना ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु
 वर्ण तनु हेम सुहावन । पद्म पाखुरी अड्ड पञ्चदश चांप सुभग
 तन ॥ आयु वर्ष दश सहस्रका पद्यासनसे शिव गये । सिद्धक्षेत्र
 सम्मेदगिरि वन्दित हों मंगल नये ॥ २२ ॥ बैजयन्तसे नेमनाथ
 सूरिपुर प्रगटे । सिद्ध विजय शिवदेवीके देखत दुख चिघटे ॥ लहो
 श्रेष्ठ हरिवंश श्याम तनु शंख अड्डवर । काय धनुष दश सहस्र
 वर्षका आयु पूर्णधर ॥ खड्गासन गिरिनारिसे राजमती पति
 शिव गये । पशुबंदि छुड़ाई दयाकर तिन पदपंकज हम नये ॥ २३ ॥
 प रस प्रभु आनत दिव तज काशीमें राजे । अभ्रसेन बामा माता

गृह दुन्दुभि बाजे ॥ उग्र वंश तनु नोल चिह्न अहिराज विराजे ।
नव कर काय उत्तंग आयु शत वर्ष सुलाजे ॥ खड्गासन
सम्प्रेदगिर मुक्ति थान मद कमठ हर । मन वच तनु बन्दन करों
ते दीसम जिनराज वर ॥२४॥ वर्धमान पुष्पोत्तरसे कुण्डलपुर
आये । सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये ॥ नाथ वंश
तनु हेमवर्ण हरि चिह्न मनोहर । सात हाथ तनु आयु बहत्तर
अब्द लयोबर ॥ खड्गासन पावापुरी मुक्ति थान जगताप हर ।
नवे सु नाथूराम नित हाथ जोड़ युग शीश धर ॥ २५ ॥ इति ॥

७३ सूतक निर्णय

सूतकमें देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादि तथा मंदिरजीका
वस्त्राभूषणादिक स्पर्शनकी मनाई है तथा पात्रदान भी वर्जित है ।
सूतक पूर्ण होनेके बाद प्रथम दिन पूजन प्रक्षाल तथा पात्रदान
करके पवित्र होवे । सूतक विवरण इस प्रकार है । १, जन्मका दश
दिन माना जाता है । २, स्त्रीका गर्भ जितने माहका पतन हुआ हो
उतने दिनका सूतक मानना चाहिये, विशेषतः यह है कि यदि तीन
माहसे कमका हो तो तीन दिनका सूतक मानना चाहिये । ३ प्र-
सूती स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है । इसके पश्चात् वह स्नान
दर्शन करके पवित्र होवे ॥ कहीं २ चालीस दिनका भी माना जाता
है । ४, प्रसूति स्थान एक माहतक अशुद्ध है । ५, रजस्वला स्त्री
पांचवे दिन शुद्ध होती है । ६, व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक
रहता है, कभी भी शुद्ध नहीं होती । ७, मृत्युका सूतक १२
दिनका माना जाता है । तीन पीड़ीतक १२ दिन, चौथी पीड़ीमें ६

दिनका, छठो पीढ़ीमें ४ दिन, सातवीं पीढ़ीमें ३ दिव, आठवीं पीढ़ीमें एक दिन रात, नवमीं पीढ़ीमें स्नान मात्रसे शुद्धता कही है। ८, जन्म तथा मृत्युका सूतक गोशके मनुष्यको ५ दिनका होता है। ९, आठ वर्षतककी बालकके मृत्युका ३ दिनका और तीन दिनके बालकका सूतक १ दिनका जानो। १०, अपने कुलका कोई गृहत्यागी उसका संन्यासमरण अथवा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय, तो १ दिनका सूतक होता है। यदि अपने कुलका देशांतरमें मरण करे और १२ दिन पूरे होनेके पहले मालूम हो तो शेष दिनोंका सूतक मानना चाहिये। यदि दिन पूरे हो गये होवें तो स्नानमात्र सूतक जानो। ११, घोड़ी, भैंस, गौ आदि पशु तथा दासी अपने गृहमें जने तो १ दिनका सूतक होता है। गृह बाहर जने तो सूतक नहीं होता। १२, दासी, दास तथा पुत्रीके प्रसूत होय या मरे, तो ३ दिनका सूतक होता है। यदि गृह बाहर हो तो सूतक नहीं। यहांपर मृत्युकी मुख्यतासे ३ दिनका कहा है। प्रसूतका १ ही दिन जानो। १३, अपनेको अग्निमें जलाकर (सती होकर) मरे तिसका छह माहका तथा और और हत्याओंका यथायोग्य पाप जानना। १४, जने पीछे भैंसका दूध १५ दिनतक, गायका दूध १० दिनतक और बकरीका दूध ८ दिनतक अशुद्ध है पश्चात् खाने योग्य है। प्रगट रहे कि कहीं देश-भेदसे सूतक विधानमें भी भेद होता है इसलिये देशपद्धति तथा शास्त्र-पद्धतिका मिलानकर पालन करना चाहिये।

(श्रावकधर्मसंग्रहसे उद्धृत)

७४ जिनगुण मुक्तावली

दोहा—श्रीजिनेश यतीशको, सुमिर हिये उपकार ।

जिनवर गुण मुक्तावली, लिखूँ स्वपर सुखकार ॥१॥

चौपाई ।

तीर्थकर पदके गुण घणे । घन धारावत जाहि न गिणें ॥ य-
थाशक्ति करिये चिन्तौन । जाते होय पाप विष बौन ॥ २ ॥ सतयु-
गमें प्रगटे परवीन । मानुष देह दोषकर हीन ॥ आर्य्यखण्ड आय
अवतरे । युगल सृष्टिमें जन्म न धरे ॥ ३ ॥ क्षत्री वंश बिना नहिं
और । जाके गर्भ जन्मको ठौर ॥ माताके रज दोष न होय । एक
पूत जन्मै शुभसोय ॥ ४ ॥ मात पिताके देह मभार । मल अरु मूत्र
नहीं निर्धार ॥ गर्भ शोध देवो आदरै । स्वर्ग सुगन्धि लाय शुचि
कै ॥ ५ ॥ जाके औदारिक तन माहिं । सात कुघातु मल ते नाहिं ।
यानै परमोदारिक कहो । आदि पुराण देख सर दहो ॥ ६ ॥ केवल
ज्ञान समय तन सोय । सहज निगोद बिना तब होय ॥ नारि नपुं-
सकके सम्बन्ध तीर्थकर पद उदय न बन्ध ॥ ७ ॥ जाके संयम समय
सही । आलोचन विधि वरणी नहीं ॥ मस्तक भाग विराजें केश ।
श्याम सचिकन सुभग सुवेश ॥ ८ ॥ अधिक हीन जिस अंग न होय ।
आधिव्याधि व्यापै नहिं कोय ॥ विष शस्त्रादिक कारण पाय ।
आयु कर्म स्थित छेद न ताय ॥ ९ ॥

दोहा—इत्यादिक महिमा घणो, तीर्थङ्कर परमेश ।

दश बिधि जाके जन्म हैं, अतिशय और विशेष ॥१०॥

चौपाई ।

प्रभुके अङ्ग न होय फसेव । नहीं निहार किया स्वयमेव ॥

नाशा नेत्र कर्ण मल नहीं । जीभ दन्त मल सूत्र न कहीं ॥ ११ ॥
क्षीर बराबर रुधिर अनूप । शंख वर्ण शुचि मान सरूप ॥ समच-
तुरस्त्र सुभग संठान । तुंग देह दश ताल प्रमान ॥ १२ ॥
दोहा—अग्ने कर अंगुष्ठ सो, मध्यमिका पर्यंत ।

बारह अंगुल ताल यह, अब धारो मतिवन्त ॥ १३ ॥

याहो अपने ताल सों, दशगुण ऊंच शरीर ।

सम चतुरस्त्र संठानको, यह प्रमाण है बीर ॥ १४ ॥

चौपाई—प्रथम सारसंहनन अविद्ध । वज्रवृषभ नाराच प्रसिद्ध ।
रूप सम्यदा अचरजकार । सुर नर नाग नयन मनहार ॥ १५ ॥ सहस्र
अठोत्तर लक्षण लसै । चक्रोके तन चौसठ बसै ॥ लक्षण पाय सुल-
क्षण भिन्न । सो प्रतिमाके आसन विह्व ॥ १६ ॥ सहज सुगन्धि
बसै वपुमाहिं । सब सुगन्धि जासो द्रवजाहिं ॥ लोक उठावन
शक्ति निवास । अतुल अनन्त देह बल जास ॥ १७ ॥ प्रिय हित
वचन अमृत उनहार । सब जगजन्तु श्रवण सुखकार ॥ जन्म जात
अतिशय दश येइ । अब दश केवलके सुन लेह ॥ १८ ॥ दोसौ यो-
जन परिमित लोय । चहुंदिपमें दुर्मिक्ष न होय ॥ व्योम विहार भू-
मिघत जास । बपुसों होय न प्राण निवास ॥ १९ ॥ सब उपसर्ग
रहित जग सूप । निराहार अति तृप्त स्वरूप ॥ एक दिशा सन्मुख
मुख जोय । चतुरानन देखे सम कोय ॥ २० ॥ सब विद्या हैं अति
गंभीर । छाया वरजित विमल शरीर ॥ पलक पात लोचन नहिं
गहैं । नख अरु केश एकसे रहैं ॥ २१ ॥

सोरठा—नई रसादिक धात, होय न अशन अभावतैं ।

तिस कारण ते भ्रात, नख अरु केश बढे नहीं ॥ २२ ॥

इलम । विवेक जाता रहा हियेसे सबकी जूंटी पियें विलम ॥टेक॥
 प्रथम तमाखू महा अशुचि है, म्लेच्छ इसको बनाते हैं । छूने योग्य
 नहीं बिलकुलके अपमा तोय लगाते हैं । डंडी चिलममें भूम योगतें
 जोव असंख्य बताते हैं । पीते ही मर जायं सभी वह यह जिन
 श्रुतिमें गाते हैं ॥ होती इसमें अपार हिंसा जरा दया नहीं आती
 गिलम । विवेक जाता ॥ कौमरिजालोंके साथ पीते गई आबरू ये
 क्या बनी है । हया दूर कर धर्म लजाते उन्हींमें जा उनकी मत सनी
 है ॥ बचसं गांजा पियें पिलावेंउन्हींने बुद्धितेरी ये हनी है । स्वास
 प्रगट कर बदन जलाता प्राण हरणको ये हरफनी है ॥ लगाना
 दमका बहुत बुरा है पीते तनमें पड़े खिलम । विवेक० ॥ थावर
 त्रसकर सहित भरा जल कुवास है ए निधान हुका । सुतोय परते
 सुजीव मरते है पापका ए निधान हुका ॥ रोग भिन्न हो जाय कहें
 मर पीते हैं हम यह जान हुका । शुद्ध औषधि करो ग्रहण तुम अ-
 शुचि दूर करिये जान हुका । सोख सुगुरुकी यही रूपचन्द्र त्यागो
 जल्द मत करो विलम । विवेक० ॥

७८ नेमि व्याह ।

(विनोदीलाल कृत सधेया ।)

मौर धरो शिर दूलहके कर कंकण बांध दर्ई कस डोरी ।
 कुंडल काननमें भलकें अति भालमें लाल विराजत रोरी ॥ मोतो-
 नकी लड़ शोभित है छवि देखि लजें वनिता सब गोरी । लाल
 विनोदीके साक्षिको मुख देखनको दुनियां उठ दौरी ॥ १ ॥ छत्र
 फिरे शिर दूलहके तब वारत रत्न शिवादेवी मेया । रुक्म इने बल-

भद्र उते कर दोरत चमर चले बोज भैया ॥ भूप^१ समुद्र विजय
 सब संग चले वसुदेव उछाह करैया । लाल विनोदके साहिबकी
 बनिता सब ही मिलि लेत बलैया ॥ २ ॥ गोंडे गये जब नेम प्रभु
 पशु पक्षिन खेच पुकार करी है । नाथसे नाथनके प्रतिपाल दयाल
 सुनो विनती हमरी है ॥ बन्दि पड़े बिललायं सबे बिन कारण
 बिपदा आनि परी है । पूछत लाल विनोदीके साहिब सारथी क्यां
 इन बन्दि भरी है ॥ ३ ॥ सारथीने कर जोड़ कहो सुन नाथ इन्हें
 जु बिदारे'गे अब । यादव संग जुरे सबरे तिन कारण ये सब
 मारे'गे अब ॥ इनके बच्चा बनमें बिलपे' इनको वे आज संघा-
 रे'गे अब । ताते तुमसे फर्याद करें' हमरो गति नाथ सुधारे'गे
 अब ॥ ४ ॥ बात सुनी उतरे रथसे पशु पक्षिनकी सब बन्दि
 छुड़ाई । जावो सबै अपने थलको हमरो अपराध क्षमा करो भाई ॥
 धृक् है ऐसो जोनो जगमें तबही प्रभु द्वादश भावना भाई । देव
 लोकान्तिक आय गये जिन धन्य कहैं सब यादव राई ॥ ५ ॥ प्रभु
 तो बिन ऐसी कौन करे औ को जगमें यह बात विचारे । कौन
 तजे सुत बन्धु वधू अरु को जगमें ममता निवारे ॥ को वसु कर्मनि
 जीत सके अरु आप तरे अरु औरन तारे । लाल विनोदके साहबने
 यश जीत लयो जग जीतन हारे ॥ ६ ॥ नेम उदास भये जबसे
 कर जोड़के सिद्धका नाम लयो है । अम्बर भूषण डार दिये शिर
 मोर उतारके डार दयो है । रूप धरों मुनिका जब ही तब ही
 चढ़िके गिरिनारि गयो है । लाल विनोदीके साहिवने तहां पंच
 महाव्रत योग ठयो हैं ॥ ७ ॥ नेमकुमारने योग लयो जब होनेको
 सिद्ध करी मन इक्षा । या भबके सुख जान अनित्य सो आदर

एक उहण्डकी भिक्षा ॥ स्नेह तजो घरबार तजो नहीं भोग विला-
सनको मन शिक्षा । लाल विनोदीके साहिबके संग भूप सहस्र
लई तब दिक्षा ॥ ८ ॥ काहूने जाय कही सुनो राजुल तेरो पिया
गिरिनारि चढ़ो है । इतनी सुन भूमि पछार लई मानो तन सेती
जीव कढ़ो है ॥ सो उपसेनसे जाय कही सुन तात विधाता अनर्थ
गढ़ो है । लाज सबै सुध भूल गई पिय देखनको जु उछाह बढ़ो
है ॥ ९ ॥ लाइली क्यों गिरनारि चढ़े उस ही पति तुल्य सुधी वर
लाऊं । प्रोहितको पठावाऊं अभी बहु भूपरके सब देश दुंदाऊं ॥
व्याह रचों फिरिके तुम्हरो महि मण्डलके सब भूप बुलाऊं । लाल
विनोदीके नाथ बिना युतिवंतको कंत तुझे परणाऊं ॥ १० ॥
काहे न बात समहाल कहो तुम जानत हो यह बात भली है ।
गालियां काढ़त हो हमको सुनो तात भली तुम जीभ चली है ।
तैं सबको तुम तुल्य गिनो तुम जानत ना यह बात रली है । या
भवमें पति नेमि प्रभू वह लाल विनोदीको नाथ बली है ॥ ११ ॥
मेरा पिया गिरनारि चढ़ो सुन तात मैं भी गिरिनारि चढ़ोंगी ।
संग रहों पियके वनमें तिन ही पियको मुख नाम पढ़ोंगी ॥ और
न बात सुहाय कछू पियकी गुणमाल हियेमें पढ़ोंगी । कंत हमारे
रचें शिवसे शिव थानको मैं भी सिवान चढ़ोंगी ॥ १२ ॥ इति ॥

७६ लावनी ।

धन्य दिवस धनि घड़ी आजकी जिन छवि नजर पड़ी । खपर
भेद बुधि प्रगट भई उर भमं बुद्धि बिसरी ॥ टेक—नासिकाग्र है
दृष्टि मनोहर वर विराग सुथरी । आतम शुद्ध सुराजत मानो अनु-

भव सुरस भरी ॥ १ ॥ शांत्याकृति निरखत ही परकी आरति सर्व
गरी । चिर मिथ्या तम नाश करनको मानो अमृत भरी ॥ २ ॥
वीतराग ताका सुहेतु सुनि मोह भुजग विसरी । पट भूषण विनवै
सुन्दरता नाहीं रंक हरी ॥ ३ ॥ जाकी युति शत कोट चन्द्रने अद्भुत
जग विस्तरी । तारक रूप निहारि देव छवि माकि नमन करी ॥ ४ ॥

८० वैश्या कुटलाई

मन करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी । है यही सकल रोग-
नकी खान हत्यारी ॥ टेक ॥ औषधि अनेक हैं सर्प डसेकी
भाई । पर इसके काटेकी नहिं कोई दवाई ॥ गर लगे वान तो
जीवित हू रहि जाई । पर इसके नैनके वानसे होय सफाई ॥ है रोम
रोम विष भरी करो ना यारी । है यही सकल रोगनकी खान
हत्यारी ॥ १ ॥ यह तन मन धन हर लेय मधुर बोलीमें । बहुतोंका
करै शिकार उमर भोलीमें ॥ कर दिये हजारों लोटपोट होलीमें ।
लाखोंका दिल कर लिया कैद चोलीमें ॥ गई इसी कर्ममें लाखों ही
जमीदारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ २ ॥ हो गये
हजारोंके बल वीर्य छारा । लाखोंका इसने वंश नाश कर डारा ॥
गठिया प्रमेह आतिशने देश बिगारा । भारत गारत हो गया
इसीका मारा ॥ कर दिये हजारों इसने चोर और ज्वारी । है यही
सकल दुर्गुणकी खानि हत्यारी ॥ ३ ॥ इसही ठगनीने मद्य मांस
सिखलाया । सब धर्म कर्मको इसने धूर मिलाया ॥ और दया
क्षमा लज्जाको मार भगाया । ईश्वर भक्तीका मूल नाश करवाया ।
हों इसके उपासक रौरवके अधिकारी । है यही ० ॥ ४ ॥ वह नव-

प्रभजिनेद्राय अष्टकर्मदहनाय घूपं । अति उत्तमफल सु मंगाय, तुम
गुन गावतु हों । पूजों तनमन हरषाय, विघन नशावतु हों । श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं । सजि आठो दरब
पुनीत, आठों अङ्ग नमों । पूजों अष्टमजिन मीत, अष्टम अवनि गमों
श्री० । ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्य ॥

पञ्चकल्याणक ।

छन्द तोटक—कलि पञ्चमचैत सुहात अलो । गरभागम मङ्गल
मोद भली । हरि हर्षित पूजन मातु पिता । हम ध्यावत पावत
शर्मसिता ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं चौत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय अर्घ ।
कलि पौष इकादशि जन्म लयो । सब लोक विषै सुखथोक भयो सुर
ईश जजे गिरशीश तबै । हम पूजन हैं नुत शीश अबै ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं
पौष कृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय अर्घ । तप दुद्धर श्रीधर आप
धरा । कलि पौष इग्यारसि पर्व वरा ॥ निज ध्यानविषै लवलीन
भये । धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैका-
दश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय अर्घ । वर केवलभानु उद्योत
कियो । तिहुं लोक तणों भ्रम मेट दियो ॥ कलिफाल्गुण सप्तमि इन्द्र
जजे ॥ हम पूजहिं सर्व कलङ्क भजे ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्ण
सप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घ । सित फाल्गुण सप्तमी मुक्ति
गये ॥ गुणवन्त अनन्त अवाध भये ॥ हरि आय जजे तित मोद-
धरे ॥ हम पूजत ही सब पाप हरे ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्लसप्तम्यां
मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घ ।

जयमाला ।

दोहा—हे मृगांक अंकितचरण, तुम गुण अगम अपार ।

गणधरसे नहिं पार लहिं तौ को वरनत सार ॥१॥

पै तुम भगति हिये मम, प्रेरे अति उमगाय ।

तार्ते गाऊं सुगुण तुम तुमही होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धति (१६ मात्रा)

जय चन्द्र जनेन्द्र दयानिधान । भवकानन हानन दयप्रदान ॥
जय गरभजनम मङ्गल दिनंद । भवि जीवविकाशन शर्मकंद ॥ ३ ॥
दशलक्षपूर्वकी आयु पाय । मनवांछित सुख भोगे जिनाय ॥ लख
कारण है जगतै उदास । चिन्त्यों अनुप्रेक्षा सुखनिवास ॥ ४ ॥
तित लौकांतिक बोध्यो नियोग । हरि शिविका सजि धरियो अ-
भोग ॥ तापै तुम चढ़ि जिनचन्द्राय । ताछिनकी शोभाको कहाय
॥ ५ ॥ जिन अङ्ग सेत सित चमर ढार । सित छत्र शोस गलगुल-
कहार ॥ सित रतनजड़ित भूषण विवित्र । सित चन्द्रचरण चरचौं
पवित्र ॥ ६ ॥ सित तन धुति नाकाधोश आप । सित शिविका
कांधे धरि सुचाप ॥ सित सुजस सुरेश नरेश सर्व । सित चितमें
चिन्तत जान पर्व ॥ ७ ॥ सित चन्दनगरते निकसि नाथ । सित
वनमें पहुंचौं सकलसाथ ॥ सितशिलाशिरोमणि खच्छछांह । सित
तप तित धास्यो तुम जिनाह ॥ सित पयको पारण परमसार । सित
चन्द्रदत्त दीनों उदार ॥ सित करमें सो पयधार देत । मानों बांधत
भवसिंधुसेत ॥ ११ ॥ मानों सुपुण्यधारा प्रतच्छ । तित अवरज पन
सुर किय ततच्छ ॥ फिर जाय गहन सित तपकरंत । सित केवल
ज्योति जग्यो अनन्त ॥ लहि समवसरण रचना महान । जाके दे-
खत सब पापहान ॥ जहं तरु अशोक शोभै उतंग । सब शोकतनो
चुरै प्रसंग ॥ ११ ॥ सुर सुमनवृष्टि नभतै सुहात । मनु मन्मथ तज

हथियार जात ॥ बानी जिन मुखसों खिरत सार । मनुतत्त्वप्रकाश-
न मुकुर धार ॥१२॥ जहं चोसठ चमर अमर दुरन्त । मनु सुजस
मेघ भरि लगिय तंत । सिंहासन है जहं कमल जुबत मनु शिव-
सरवरको कमलशुक्त ॥१३॥ दुंदुभि जितबाजत मधुर सार । मनु
करमजीतको है नगार ॥ शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण मनु रतन
तीन त्रयताप हर्ण ॥१४॥ तनप्रभातनो मण्डल सुहात । भवि देख-
त निजभव सात सात ॥ मनु दर्पणद्युति यह जगमगाय । भविजन
भव मुख देखत सुभाय ॥१५॥ इत्यादि विभूति अनेक जान । बा-
हिज धीसत महिमा महान ॥ ताकों वरणत नहिं लहत पार । तौ
अंतरङ्गको कहै सार ॥१६॥ अनअंत गुणनिजुत करि विहार । धर-
मोपदेश दे भव्य तार ॥ फिर जोगनिरोध अघाति हान । सम्मेद
थकी लिय मुकतिथान ॥१७॥ वृन्दावन बन्दत शीश नाय । तुम
जानत हो मम उर जु भाय ॥ तार्तेका कहौं सु बार बार । मनवां-
छित कारज सार सार ॥१८॥

छन्द घसानन्द ।

जय चन्दजिनन्दा आनंदकंदा, भवभयभञ्जन राजै हैं ॥ रागा-
दिकद्वंदा हरि सब फंदा, मुकतिमांहि थिति साजै हैं ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद चौबोला—आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन
जिनचन्द जजै ॥ ताके भवभवके अघ भाजै, मुकसार सुख ताहि
सजै ॥२०॥ जमके त्रास मिटै सब ताके, सकल अमंगल दूर जजै ।
वृन्दावन ऐसो लखि पूजत, जातै शिवपुरि राज रजै ॥ २१ ॥

[इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

८४ शान्तिनाथ जिनपूजा ।

या भवकाननमें चतुरानन, पापपनाशन घेरि हमेरी । आत्म-
जान न मान न ठान न, बान न होन दई सउ मेरी ॥ तामद भानन
आपहि हो, यह छान न आन न आननटेरी । आन गही शरणा-
गतको अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥

ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौपट ॥

हिमगिरिगतगंगा-धार अर्भगा, प्रासुक संगी भरि भृंगा ।
जरमरनमृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥ श्रीशान्ति-
जिनेशनुत शक्रेशं वृष चक्रेशं चक्रेशं चक्रेशं । हनि अरि चक्रेशं
हे गुनधेशः दयामृतेशं मक्रेशं ॥ १ ॥ घर बावनचंदन, कदलीनंदन,
घन आनंदन सहित घसों । भवताप निकन्दन, परा नन्दन, बंदि
अमंदन, चरनवसों ॥ श्री० ॥ २ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिने-
न्द्राय भवतापविनाशनाथ चंदनं ॥ हिमकरकरि लज्जत, मलयसु-
सज्जत, अच्छतज्जत, भरिधारी । दुखदारिद्र गज्जत, सदपदसज्जत,
भवभय भज्जत, अतिभारी ॥ श्री० ॥ ३ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथ-
जिनेन्द्राय अक्षयपदप्रामये अक्षतं ॥ मंदार सरोजं, कदली जोजं,
पुंज भरोजं, मलयभरं भरि कंचनधारी, तुम ढिग धारी, मदन-
विदारी, धोरधरं ॥ श्री० ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ एकवान नवीने, पावन कीने, पटर-
समीने, सुखदाई । मनमोदनहारे, लुधा विदारे, आगे धारे गुन-
गाई ॥ श्री० ॥ ५ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग
विनाशनाथ नैवेद्यं ॥ तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेयविकाशे

बुद्धि, वीर जिन, हरि, हर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति-भावसे प्रेरित हो यह वित्त उसीमें लीन रहो ॥१॥

विषयोंकी आशा नहीं जिनके, साम्य-भाव धन रखतेहैं,
निज-परके हित साधनमें जो निशदिन तत्पर रहते हैं ॥

स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुखसमूहको हरते हैं ॥ २ ॥

रहे सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ।

नहीं सताऊं किसी जीवको, झूठ कभी नहिं कहा करूं,
परधन-बनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं ॥ ३ ॥

अहंकारका भाव न रखूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूं,
देख दूसरोंकी बढ़तीको कभी न ईर्ष्या भाव धरूं ।

रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूं,
बने जहांतक इस जीवनमें औरोंका उपकार करूं ॥ ४ ॥

मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जीवोंसे नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणास्रोत बहे ।

दुर्जन-क्रूर-कुमार्गारतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्यभाव रखूँ मैं उन पर, ऐसी परिणत हो जावे ॥५॥

गुणोजतोंको देख हृदयमें मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बने जहांतक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ।

होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषोंपर जावे ॥६॥

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,

लाखों वर्षों तक जीऊं या मृत्यु आज ही आजावे ।

अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे,

तो भी न्याय मार्गसे मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥७॥

होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे,

पवत-नदी-श्मशान-भयानक अटवीसे नहिं भय खावे ।

रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन, दूढ़तर बन जावे,

इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें सहनशीलता दिखलावे ॥८॥

सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न घबरावे,

नेर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे ।

घरघर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,

ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्मफल सब पावें ॥९॥

ईति-भीति व्यापे नहिं जगमें वृष्टि समय पर हुआ करे,

धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजाका किया करे ।

रोग मरी दुर्मिक्ष न फैले, प्रजा शांतिसे जिया करे,

परम अहिंसा-धर्म जगतमें, फैल सर्वहित किया करे ॥१०॥

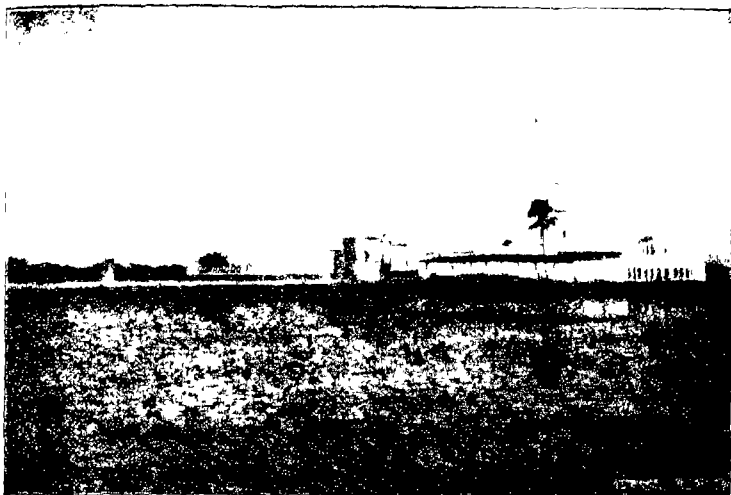
फैले प्रेम परस्पर जगमें मोह दूरपर रहा करे,

अप्रिय कटुक-कठोर शब्द नहिं कोई मुखसे कहा करे ।

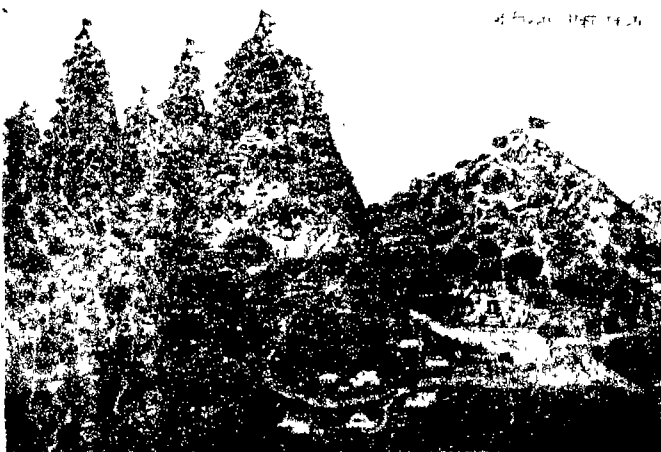
बनकर सब 'युग-वीर' हृदयसे देशोन्नति रत रहा करे,

वस्तुरूप विचार खुशीसे सब दुख-संकट सहा करे ॥११॥





श्रीपावापुरजा



श्रीगिरिनाराजी



काशीनिवासी कविवर वृन्दावनविरचित ८८ अरहंतपासाकेवली ।

दोहा—श्रीमत् वीरजिनेशपद, बंदों शीस नवाय । गुरु गौतमके
वरन नमि, नमों शारदा माय ॥ १ ॥ श्रेणिक नृपके पुण्यतैं,
भाषी गणधरदेव । जगतहेत अरहंत यह, नाम 'केवली' सेव
॥ २ ॥ चंदनके पासाविषै, चारों ओर सुजान । एक एक अक्षर
लिखौ, श्रो 'अरहंत' विधान ॥ ३ ॥ तीन वार डारो तबै, करि वर
मंत्र उचार । जो अक्षर पांसा कहै, ताकौ करौ विचार ॥ ४ ॥
तीन मंत्र हैं तासुके, सात सात हो बार । थिर हूँ पांसा ढारियो,
करिके शुद्ध उद्धार ॥ ५ ॥ जानि शुभाशुभ तासुनै, फल निज उदय-
नियोग । मन प्रसन्न हूँ सुमरियो, प्रभुपद सेवहु जोग ॥ ६ ॥

प्रथममंत्र—ओं ह्रीं श्रीं बाहुबलि लंबवाहु ओं क्षां क्षीं क्षं क्षें क्षे
क्षों क्षः ऊर्द्ध भुजा कुरु कुरु शुभाशुभं कथय कथय भूतभविष्यति-
वर्तमानं दर्शय दर्शय सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि स्वाहा ।

(प्रथम मंत्र सात वार जपना)

दूसरा मंत्र—ओं हः ओं सः ओं क्षः सत्यं वद सत्यं वद स्वाहा ।

(सात वार जपना *)

तीसरा मंत्र ओं ह्रीं श्रीं विश्वमालिनि विश्वप्रकाशिनि अमोघ-
वादिनि सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि राह्यहि राह्यहि विश्वमालिनि स्वाहा ।

❀ मन एकत्र करि विनयसाहत अपना अनिप्राय विचारकरि श्रीमहत्
भगवान के नामाक्षरका पांसा तीन बेर ढालना । जो जो वरन पड़ै तिस्रो
वरनका भेद पाके फलका विचार करना । जिन मागमें यह बड़ा निमित्त है ।
इसे हमने लिखा है कि अपना वा परमा उपकार होय । (वृन्दावन)

(यह मंत्र भी सात बार जपना)

अथ अकरादि प्रथम प्रकरण ।

अमम । जो परे तीन अकार । तो जानि सुखविस्तार ।
कल्याणमंगल होय । सम्मान बाढ़ै सोय ॥ १ ॥ लक्ष्मी वसै नित
धाम । व्यापारमें बहु दाम । परदेशमें धनलाभ । संग्राममें जय-
लाभ ॥ २ ॥ नृपद्वारमें सम्मान । संकष्ट कटै प्रमान । सब रोग
अरु दुर्भागि । ततकाल जावे भागि ॥ ३ ॥ प्रगटै सकल कल्याण
यामें न संशय जान । यह महा उत्तम अंक । फल अटल जासु
निसंक ॥ ४ ॥

चौपाई छंद ।

अमर । दोअकारपर परै रकार । मध्यम फल है सुनो वि-
चार । जो कारज चिंतो मनमाहिं । सो तौ शीघ्र होनको नाहिं ॥ ५ ॥
पूर्व पाप उदय है जानि । सोई करत काजकी हानि । तातें इष्टदेव
आराधि । कुलदेवीको पूजि सुसाधि ॥ ६ ॥ तासु जजन आराधन
किये । किंचित् होय काज सुनि हिये । मध्यम प्रश्न पत्नी है यह ।
मति मानो यामें संदेह ॥ ७ ॥

पद्धड़ी छंद ।

अमहं । जहँ दोअकारके अंत माहिं । हंकार परै सो शुभ
कहाहिं । धन धान्य समागम लाभ होय । परदेश गयो जो चहै
सोय ॥ ८ ॥ तो मनवांछितकी सिद्धि जान । अरु मित्र बंधुसों प्रीति
मान । तत्काल शत्रुको होय नास । सब विघ्न मिटै अनयास तास
॥ ९ ॥ घरमें प्रगटै मंगलबिभूति । तब पुण्यप्रभाव प्रबल अकूत ।
यह उत्तम प्रश्न सुनो पुमान । यों कहत केवली गुननिधान ॥ १० ॥

अअत । जहं दुइ अकार पर हूँ तकार । तहं शुभ फल जानो हे उदार । बहु मित्र मिले भू वख ताहि । अरु पुत्र पौत्र हूँ सदनमाहि ॥११॥ रोगीको रोग विनाश होय क्रूरग्रहको निग्रह भि होय । जो मित्र बंधु परदेश होय, घर आवै अति मन मुदित सोय ॥ १२ ॥ कुलवृद्धि तथा सज्जन महान । तिनसों नित प्रीति बढ़ै सयान । दिन दिन अति लाभ मिलै पुनीत । यह प्रश्न केवली कहत प्रीति ॥ १३ ॥

अरअ । दुइ अकारके मध्य रकार । पांसा परै तासु सुविचार । उत्तम फलकारी यह होत । नित नव मंगल होत उदोत ॥१४॥ पूरव जो धन गयो नसाय । सो सब तोहि मिलैगो आय । राजा करहि बहुत सनमान । बसन भूमि हय देवहि दान ॥१५॥ भ्राता मित्र समागम होहि । सब विधि सदनमहोच्छव तोहि । सकल पापको होय विनाश । भर्मवृद्धि नित करै प्रकाश ॥ १६ ॥

अरर । जो अरर प्रगटै वरन । तो सकल मंगल करन । धन लाभ सूचत येह । दशदिश विमल जस तेह ॥१७॥ जहं जाय वह मतिवंत । तहं लहै पूजा संत । हूँ इष्टबंधुमिलाप । उद्यमविषै श्री आप ॥ १८ ॥ जल चोर पावक मरी । ये सकहिं नहिं कछु करी । सब शत्रु कीजे हान । प्रगटै सकल कल्याण ॥ १९ ॥ जिनधरमके परभाव । यह जान हूँ सद्भाव । उत्तम कहत फल अंक । उत्तम गहो निःशंक ॥ २० ॥

अरहं । अरहं परे जो वरन । सौभाग्यसंपतिकरन । तो जो मनोरथ होइ । अनयास पूजै सोय ॥२१॥ कछु क्लेश हूँ अप्पमाहिं

तसु रंच ही भय नाहिं । निज इष्ट पूजहु जाय । सब विघन जांय नसाय ॥ २२ ॥ मन सोच तजि थिर होहि । आनन्द मङ्गल तोहि । सब सिद्धि ह्वै है काज । अरहं कहत महाराज ॥ २३ ॥

अरत । जब अरत पांसा ढरै । तब सकल सुख विस्तरै । तोहि तिया प्रापति होय । सुत होय पौत्रपि होय ॥ २४ ॥ कुलगोत सब सोभंत । तब भाल तिलक लसंत । जहँ जाहुगे तुम मीत । तहँ लहहु पूजा नीत ॥ २५ ॥ जनमध्य हौ तुम केम । ताराविषे शशि जेम । यह रुचिर प्रश्न सुजान । मनमें धरो प्रभुध्यान ॥ २६ ॥

अहंअ । जो अहंअ छबि देय । तो सुनहु पूछक भेय । पहिले कलुक दुख होइ । फिर नाश ह्वै है सोय ॥ २७ ॥ धनलाभ दिन दिन बढ़ै । अरु सुजनसंगम चढ़ै । जो काम चिंतहु वृद्ध । सो सकल ह्वै है सिद्ध ॥ २८ ॥

अहर । जब अहर सु दरसाय । तब अरथलाभ काराय । जसलाभ पृथिवीलाभ । यह देख परत सुसाभ (?) ॥ २९ ॥ राजादि बंधूवर्ग । सब करहिं आदर सर्ग । भ्रातादि इष्टमिलाप । धन-धान्य आगम व्याप ॥ ३० ॥ व्यवहार अरु परदेस । सब ओर उत्तम तेस । सब सोच संशय हरहु । शुभ तुमहिं धीरज धरहु ॥ ३१ ॥

अहंहं । जो अहंहं है अंक । सो कहत है फल बंक । दोखे न कारज सिद्ध । यह काज तोर सुबुद्ध ॥ ३२ ॥ धन नाश ह्वै है तोहि । तन ह्वैस पीड़ा होहि । व्यापारमें धनहान । परदेश सिद्धि न जान ॥ ३३ ॥ तिहिहेत कर भविजीव । जिन जजन भजन सदीव । जप दाम होम समाज । तब होइ कछु इक काज ॥ ३४ ॥

अहंत । अक्षर अहंत परै । तब सकल शुभ विस्तरे । कल्याणमंगल धाम । सुन भ्रात मिलहि मुदाम ॥ ३५ ॥ उद्यमविषै धनधान्य । संपतिसमागम मान्य । रनकेविषै सब जीत । तोहि लाभ निश्चय मीत ॥ ३६ ॥ अरु होय बंदीमोच्छ । निरबाध है यह पच्छ । तुव ह्वे मनोरथ सिद्ध । मति मान संशय वृद्ध ॥ ३७ ॥

अतअ । यह अतअ भाषत वरन । कल्याणमंगलकरन । उद्यममें श्रीविस्तरन । सब विघ्नप्रहभयहरन ॥ ३८ ॥ सुनपौत्रलाभ निहार । वांछित मिलै मनहार । दिन आठयें कछु तोहि । कछु श्रेष्ठ भावो होइ ॥ ३९ ॥

अतर । जो अतर अक्षर ढरै । तो सकल मंगल करै । वाजिअ सदन सुनाय । घरमाहिं अनंद बधाय ॥ ४० ॥ प्रियबंधुचिंता होहि । तसु मोद मंगल होहि । धनधान्यसंजुत होय । घर शीघ्र आवै सोय ॥ ४१ ॥ गजवाजि रथआरूढ़ । भूपन वसनजुत प्रूढ़ । संजुत अमित कल्यान । निरभै मिलै भयमान ॥ ४२ ॥

अहंत । अतहं ढरै जो अंक । सो अशुभ कहत निशंक । नहिं लाभ दीखत भाय । धन हाथहूको जाय ॥ ४३ ॥ ह्वै इष्टबंधुवियोग । तियननयसंपतियोग । राजादि चोररु मरो । ह्वै शत्रु सबही घरो ॥ ४४ ॥ निहि विघननाशन हेन । कर देवजजनसुचंत । तिहि पुण्यके परभाव । घर होइ मंगलचाव ॥ ४५ ॥

अतत । जइ अतत आवै वरन । धनलाभ तहं बुधि वरन । संपदा सुखविस्तरन । सब सिद्धि वांछित करन ॥ ४६ ॥ प्रिय इष्ट बंधू मिलन । सब लाभ दिन प्रति दिनन । उद्यम तथा रनथान

तुव धुव विजय बुधिवान ॥ ४७ ॥ वादानुवादमंभार । तुव जीत
होय उदार । यामें न संशय करहु । शुभ जानि धोरज धरहु ॥४८॥

अथ रकारादि द्वितीय प्रकरण ।

रअअ । आदिरकार अकार दुइ, जब ये प्रगटें वर्न । तब
धनसंपत्ति लाभ बहु, सुजनसमागम कर्न ॥ ४९ ॥ सोना रूपा ताघ्र
बहु, वसनाभरण सुरज । प्राप्त होय निश्चय सकल, चिंतित वित
जुतजल ॥ ५० ॥ अन्तरै न दीखै सुपन, माला सुमन सुजान । हय-
गजरथ आरुढ़ अरु, देवागमन विमान ॥ ५१ ॥

रअर । आदि रकार अकार पुनि, तापर परै रकार । सुनि
पूछक तैं तासु फल, है अभिमतदानार ॥ ५२ ॥ देश प्रजाको लाभ
है, खेती घर व्यापार । धन पावै परदेशमें, घरमें सब सुखसार ॥५३॥
संगर संकट घोरमें, कुलदेवी सुखदाय । करै सहाय प्रसाद तसु,
सब बिधि सिद्धि लहाय ॥ ५४ ॥

रअहं । आदि रकार अकार पर, हं प्रगटै जब आय । भय-
कारी धनदानि यह, क्लेश अशेष कराय ॥५५॥ यह कारज कर्तव्य
नहिं, लाभ नाहिं या माहिं । बांधवमित्र वियोगता, अस यह सगुन
कहाहिं ॥ ५६ ॥ जहं कहूं जाहु विदेश तहं सिद्ध न होवै काज ।
तानैं थिर है कलुक दिन, सुमिरहु श्रोजिनराज ॥ ५७ ॥

रअत । रअत परै पाँसा कहै, मग धन लूटहिं चोर ।
द्रव्यहानि होवहि बहुत, अशुभ फलहिं चहुं ओर ॥ ५८ ॥ नाव
बुझै पावक लगै, रोगरु कष्ट कुजोग । कियो काज विनशै सकल,
अशुध करमके भोग ॥५९॥ तातैं शोक न कीजिये, भावीगति बल-
वान । थिर है निशदिन सुमिरिये, कृपासिंधुमगवान ॥ ६० ॥

ररञ्ज । रर अ अंक आवै जहां तब ऐसो फल जान । तब चित चंचल चपल अति, सुनि प्रेच्छक मतिमान ॥ ६१ ॥ तैं चाहत अर्थागमन, मूलनाश तसु होइ । राजदण्ड चौराग्नभय, तनदुख तोहि बहोइ ॥ ६२ ॥ तनय तिया बांधवनिषों हैं हे तोहि वियोग । अबतैं निसरे वरसमहं, कटहिं सकलदुखभोग ॥ ६३ ॥

ररर । तिहुं रकारको फल सुनो, मनवांछित फलदाय । धरा धान्य धनलाभ तोहि, मिलहि वस्तु सब आया ॥ ६४ ॥ तिया तनय सुन बधू धन, इष्टबंधुसंजोग । कृत उत्तम कल्याण तोहि, मिले सकल संभोग ॥ ६५ ॥ महालाभ उद्यमविषे, सदन तथा परदेश । सुफल काज तुव होय नित, यामें भ्रम नहिं लेश ॥ ६६ ॥

ररहं । दुइ रकारपर हं परै, तब मनवांछित होय । शोभनीक सुखसंपदा, सहज मिलावै सोय ॥ ६७ ॥ मंगल दुंदुभि होइ धुनि, अरथलाभ बडु तोहि । मिलि है वसुधा देश पुर, यह प्रतिभासत मोहि ॥ ६८ ॥ जौन काज तुम चित धरउ, तुरित होइ है तौन भूपति अति आनन्द करै, तिन प्रति मंगलमौन ॥ ६९ ॥

ररत । ररत वरन यह कहन हैं, सुन पूछक चित लाय । परतियकी अभिलाषतैं, किये अनर्थ उपाय ॥ ७० ॥ अरथनाश तातैं भयो, अरु विह घामाहिं । राजदंड तैंने सहे, यामें संशय नाहिं ॥ ७१ ॥ तातैं परतिय परिहरहु, शुभमारग पग देहु । ब्रह्मचरजजुन प्रभु भजो, नरभवको फल लेहु ॥ ७२ ॥

रहंञ्ज । रहं अकार आवै जहां, तहं उत्तम फल जान । वनितापुत्रधनागमन, बंधुसमागम मान ॥ ७३ ॥ अरथलाभ जसलाभ

पुनि, धर्मलाभ हूँ तोहि । रत्न विशेष व्यापारमें, विजय, तुरंतहि होहि ॥ ७३ ॥

रहंर । रहंर आवै जयहिं तव, विषम काज जिय जान ।
उद्यम सुफल न होय कहु, घर बाहर हैरान ॥ ७५ ॥ शत्रु बहुत सुख
कतहुं नहिं; तातैं तजि यह काज । जग सुख निष्फल जानि
जिय, भजो सदा जिनराज ॥ ७६ ॥

रहंर । हंजुग आदिरकार कह, सुनिये पूछनहार । अशुभ
उद्यम फल अशुभ है, जानहु निज उर धारा ॥ ७७ ॥ मात विश्वास करो
हिये, मित्र बंधु जिय जानि । शत्रु होय ये परिनवहिं कराहिं विस्तकी
हानि ॥ ७८ ॥ धनचिन्ता निन करत हौ, सो सुपनेहु नहिं होइ ।
धरम चिन्ति कुल देव जजि, तातैं कहु सुख जोइ ॥ ७९ ॥

रहंत । रहं तासुपर प्रगट तः सुनि फल पूछनहार । याको
फल मैं कहा कहों; सब सुखको दातार ॥ ८० ॥ विद्या लाभ कवि
चता; सुफल लाभ व्यवहार । वनिता सुतको लाभ हूँ, द्रव्यलाभ
व्यापार ॥ ८१ ॥ मित्रबंधु वसनाभरण, सहित समागम होइ ।
चहहु सुखित परिवार सों, कुलदेवीकृत जोइ ॥ ८२ ॥

रतअ । रत अ वरन पांसा कहत, तुव सम्मुख सौभाग ।
अरथागम कल्याणकर, असन सुखद अनुराग ॥ ८३ ॥ मंत्रजंत्र
औषधविधैं, सकल सिद्ध ध्रुव होइ । चित चिन्तित पुत्रादि सुख,
निश्चय पैहैं सोइ ॥ ८४ ॥

रतर । रतर वरन पांसा कहत, सुनि पूछक गहि मौन ।
उद्यममें लक्ष्मी वसै, ज्यों पंढरमें पौन ॥ ८५ ॥ तातैं उद्यम करहु तुम,

अरथलाभ तहं होइ । तनय धरनि धरनो मिलै, नृप सनमाने
सोय ॥ ८६ ॥ वसन मिलै घोड़ा मिलै, अनायास हूँ काज । शुभ-
मंगल तोहि सर्वदा, सेयै श्रीजिनराज ॥ ८७ ॥

रतहं । रतहं कहत प्रचारिकै, सुनि पूछक दे कान । प-
हिले कष्ट बहुत सहे, सो अब गये सुजान ॥ ८८ ॥ धनकी चिंता रहत-
चित, सो सब पूरन होहि । वनिता सुत बसनाभरन निश्चल मिलि-
है तोहि ॥ ८९ ॥ आधिग्याधि दुख नसहिं सब, चिंता करहु न
कोय । देवधर्म परसाइसों, काज सफल सब होय ॥ ९० ॥

रतत । रतत वरन सुनि पूछक, सकल सुफल तुव काम ।
मनवांछित धनसंपदा, पै हौ अति अभिराम ॥ ९१ ॥ जो कारज चि-
तवत रहौ, अनायास सो होय । मनमें मति संशय करो, धर्मबुद्धि
फल जोय ॥ ९२ ॥ शिवहित चाहत तप धरन, तामहं हूँ है सिद्धि ।
गहो जिनेश्वर कथित तप ज्यों होवै सुखवृद्ध ॥ ९३ ॥

अथ हंकारादि तृतीय प्रकरण ।

हं अअ । हं अअ वर्न परै जहँ आई । तासु सुनो फल है दु-
चिताई । सूचत कष्टरु चित्त विनाश । लोकविपै निरआदरभासं ॥ ९४ ॥
संगरमें नहिं जीन दिखावै । उद्यममें नहिं लाभ लहावै । जाहु जहां
कलु कारज हेनी । सिद्ध न होय तहां तुम सेती ॥ ९५ ॥ त्याग करो
यह कारज यातें । सेवहु श्र जिनधर्मसुधा तैं । धर्म बिना सुखको
नहिं लेखा । श्रीभगवान कहैं जिन देखा ॥ ९६ ॥ रोग निवार अरोग
शरीरं । पुष्ट महा बलपौरुष धीरं । चाहत हो परदेश सिधारो ।
होय मिलाप तहां शुभ सारो ॥ ९७ ॥

हंअर । हंअर भावत है सुत्र सारा । होय मनोरथ सिद्ध
तुमारा । अर्थ तिया सुदमंगलताई । आनंदसंजुन बांधव भाई ।
॥६८॥ उद्यममें धन प्रापति जानो । देशविदेश जहां मनमानो ।
रोगोको रुज जाय नसाई । बांधवमित्र मिलैं सब आई ॥६९॥ देव
अराधहु भाव लगाई । सो मनवांछिन सिद्ध कराई । उषों बितमूढ
पादपै जानो । त्यों विनधर्म न आनंद पानो ॥१००॥

हंअहं । हंअहंमत्रि जत्र अकारं । तो सुनि पूछतहार
विवारं । कोमल वित्त तुमार दिखाई । शत्रु सुमित्र गिनो समनाई
॥ १०१ ॥ तासहिं धन आप गंवायौ । कालसुभाव नहीं लख
पायो । है कलिकालकराल पियारे । तैं अति साधु सुभाव सुबारे
॥१०२॥ जो कलु पूर्व भयौ धन हान । सो सब तोहि मिले सुखदान
है तुमको नित प्रापति आगे । निश्चय जान अर्थ अमुरागे ॥१०३॥

हंअत । हंअत आय जनावत तातैं । मंगल मंजु समा-
जसुयातैं । पुत्र सुमित्र समागम होई । देशाराधन लाभ बहोई
॥१०४॥ धनकी चिन्ता करन हो, शीघ्रहि पैहो सोय । द्रव्य पुत्र
वनिता वसन, सकल प्रापतो होय ॥ १०५ ॥ कुशव्याधि अब मिट
गई, देव धरम परसाद । सुरुल काज नित जानि जिय, भजहु
जिनेसुरपाद ॥ १०६ ॥

हरअ । हरअ आय दिखावत ऐसो । चिंतित काज सरे
तुव तैसो ॥ धान्यधनादिक लाभ दिखाई । कोरन देश दिशंनर जाई ।
॥ १०७ ॥ भूरी करै सन्मान तुम्हारा । देश धरा धन देइ उदारा ॥
प्रीति करै तुमसों सब कोई । यामहं संशय रंच न होई ॥ १०८ ॥

हंरर । हंरर अक्षर भाषत सांचा । तो मनमें उद्वेग उमाचा । वित्त कछु अब छोडई भाई । पीछे होय सुखी अधिकारई ॥१०६॥ संपत संतत मित्र पियारे । होहि सदा तोहि मंगलकारे ॥ अर्थ बढै घरमें सुखदाई । कीरति देशदिशंतर जाई ॥११०॥ श्री-जिन धर्मप्रभाव विचारो । है सब कारज सिद्ध तुमारो ॥ यामें संशय रंच न मानो । सेवहु श्रीजिनराज सयानो ॥ १११ ॥

हंरहं । मध्यरकार जहां छवि देखे । हं जुग आदिरु अन्त परेई ॥ उत्तम लाभ लसै फल ताको । पुत्र विवाह भविष्यति जाको ॥ ११२ ॥ नारि मिलै घर संपत आवै । वैर मिटे हित प्राति जनावै ॥ संगर बाद विवादमंभारी । होय विजय तुव आनंदकारी ॥ ११३ ॥ दीखत है शुभभाग तिहारो । यामें संशय रञ्च न धारो ॥ श्री जिनचन्दपदाम्बुज ध्यावो । ताकरि पूरण पुन्य कमावो ॥११४॥

हंरत । हंरत वर्न बखानत ऐसे । कारज सिद्ध लसै सब जैसे । उद्यममें लछमी चिरलाभं जुद्धरुजून विजै तुम साजं ॥११५॥ लाभ लसै सब ठौर तुमारे । हानि हमें नहिं दीखत प्यारे । किंचित सोच वसै मनमाहीं । तासु हमें कछु संशय नाहीं ॥११६॥ शीघ्र मिटे वह शोच तुमारा । ह्वै घर मङ्गल मंजुल सारा । श्रीजिनधर्म अराधहु जाई । संजम दान करो सुखदाई ॥११७॥

हंहंअ । हं जुग अन्त अकार उचारौ । कारज सिद्ध समस्त तुमारो ॥ धामविषै धन है अधिकारई । पुत्र सुपौत्र बढै सुखदाई ॥११८॥ बांधवमित्रसमागम सूचै । जो परदेश विषै अविषूचौ (?) । संवत एकमंभार पियारे । है लछिलाभ तुमें अधिकारे ॥११९॥ इष्ट

पदांबुज सेवहु जाई । सर्व मनोरथ सिद्ध कराई ॥ मङ्गल प्रश्न हिये
रखि लीजै । श्रीजिनवैनसुधारस पीजै ॥ १२० ॥

हंहर । हं जुग अन्त रकार पुकारै । मंगल मोद समस्त
तुहारै ॥ पुत्रविवाह अवश्यक होऊ । जश विधान बने कछु सोऊ
॥ १२१ ॥ तासु प्रसाद सु संपति भूरी । है धन धान्य वस्त्र पर-
चूरी ॥ मङ्गलधाम बड़ै अधिकारै । जाहु जहां तहं लाभ लहारै
॥ १२२ ॥ देव जजौ जपि दान करीजै । संजम होम सबै विधि
कीजं ॥ पुन्य किये सुख संपति नाना । बालगुपाल सबै यह जाना
॥ १२३ ॥

हंहंहं । हं तिहुं आय परै जब पासा । है तहं मङ्गलम-
न्दिर खासा ॥ सर्व मनोरथ सिद्धि प्रकासै । अर्थ सुलाम प्रजा-
जुत भासै ॥ १२४ ॥ भूमि मिलौ रनमें जय पावै । उद्यममें बहु
लच्छि कमावै ॥ बांधव मित्रनसों अति नेहं । रोपत है वरधर्म सु-
गेहं ॥ १२५ ॥ आनन्द सर्व मविष्यति तोही । यों प्रतभासत है
सुनि मोही ॥ कारज सिद्धि समस्त तुमारा । सेवहु धर्म लहो भव
पारा ॥ १२६ ॥

हंहंत । हं जुग अन्ततकार दिखाई । उत्तम लाभ सबै तसु
भाई ॥ चाहत हौ परदेश पधारै । है तहं निद्धि मनोरथ प्यारै
॥ १२७ ॥ खेतो वानिजमें सब ठाई । सर्व फल मनवांछित भाई ॥
श्रीधनधान्य सुकंचन आदी । जे सुख संपति अर्थ अनादी ॥ १२८ ॥
ते सब तोहि मिलै मनमाने । देव गुरुदमकि विधाने ॥ यों सुनि
चित्तबिषे धिर होई । श्रीजिनराज भजो भन खोई ॥ १२९ ॥

हंतअ । हंतअ वरन परै जय पासा । तो सुनि अर्थ प्रतच्छ
प्रकासा ॥ तैं चितमें परसंपति चाहै । लोभ बढ़यो ताहि देखत का
है ॥ १३० ॥ तोष कियैं धन प्रापति होई, वेद पुरान पुकारत योई ॥
लोभ निवारि करो सब चिंतं । भावि जु होय सो होवहि मिंतं ॥
॥ १३१ ॥ जाय वितीतै जय कछु काला । अर्थ सुलाभ तयै तुव
भाला ॥ यामैं संशय रंच न आनो । भाषत श्रीअरहंत प्रमानो ॥

हंतर । हंतर यों दरशावत आई । तो मनमें परवित्त बसाई ॥
चिंतत है सोइ प्रापति होई । ताकरि संपति आनि मिलोई ॥ १३३ ॥
अर्थ समागम कीर्ति अनिया । प्रापति है तोहि सुन्दर विद्या ॥
जो कछु पूरव द्रव्य गंवायौ । सो सब आनि मिले मन भायौ ॥
॥ १३४ ॥ जो तुम कारज चेतहु प्यारे । सो सब होई सिद्धि
तुमारे ॥ यों जिय जानि तजो दुचित्ताई । सेवहु श्रीपरमात्म
जाई ॥ १३५ ॥

हंतहं । हं जुगके मधि होइ तकारं । तासु सुनो फल पूछन
हारं ॥ तो मनमें विपरीत लसो है । चोरि जूथकी ताप वसी है ॥
॥ १३६ ॥ ता करिके दुःख पाप सहै हो । लोकविषै अपकीर्ति
लहै हो ॥ नास भयो जसरास तुमारो । यों लघु सीख सुनो उर
धारो ॥ १३७ ॥ अन्य कछु करतव्य विचारो । तामहं वांछित
सिद्ध तुमारो ॥ अर्थ बढ़ै धन धर्म बढ़ाई । यों दरसावत श्रीगुरु
भाई ॥ १३८ ॥

हंतत । हंतत भाषत उत्तम तोही । जो मन वांछहु होवहि
सोही ॥ मंगल धाम मिलै धन धान्यं । जाहु विदेश तहां बहु

मान्यं ॥ १३६ ॥ मंत्र सु जंत्रु भेष जताई । सैन्य सुथंभन मोहन
भाई ॥ और जिती जगमें घर विद्या । तोहि मिलै भ्रम त्याग
निषिद्या ॥ १४० ॥

अथ तकारादि चतुर्थ प्रकरण ।

तअअ । जहं तअअ वरन पासा ढरंत । तहं सुनि पूछक जो
फल कहंत ॥ जो करहु देव पूजा पुनोत । तो पैहो अभिमत फल
बिनीत ॥ १४१ ॥ सुन पोत्र सुखद धन धान्य लाहु । यह मिलै
तोहि वांछित उछाहु ॥ व्यापारमाहिं बहु मिले दवं । अरु जून
विजय नै लहै सर्व ॥ १४२ ॥ यामें मति बिन्ता मानु मित्त । निज
इष्ट देव पद भजहु निज ॥ विन पुन्य नहीं सुख जगत माहिं ।
जिमि बीज बिना नहिं तरु लगाहिं ॥ १४३ ॥

तअर । जब तअर प्रगट होवे सुजान । तब मध्यम फल जानो
निदान ॥ चित चाहहु वनिता पुरुष आदि । सो आस तजहु सुनि
भेदवादि ॥ १४४ ॥ निजभावीवश ये मिलहि सर्व । परिवार कुटुं-
बादिक सुदर्व ॥ पहिले जो कछु धन भयो हान । सोऊ न मिले
अब ही सयान ॥ १४५ ॥ कछु काल व्यतीत भये समस्त । है
अथ लाभ तुमको प्रशस्त ॥ यह जान हिये निरधारवीर । भजि
श्रीपति पद सब टरै पीर ॥ १४६ ॥

तअहं । तत्ता अकार हंकार आय । हे पूछक तोसों इमि कहाय ।
दिनरात तोहि धनहेत चाह । मनमें यह वर्तत है कि नाह ॥ १४७ ॥
सो पुन्य बिना कहु केम होय । हैं दिन तेरे अति नष्ट जोय ॥ कछु
दिवस बितीत भये प्रमान । धनलाभ होय तोको निदान ॥ १४८ ॥

तीस कोड़ाकोड़ी सत्तर करोड़ सत्तर लाख बियालीस हजार सात सौ मुनियोंकेसहित निर्वाण प्राप्त हुए हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक लाख उपवासके फलके तुल्य है। चौथे **अविचलकूटसे** सुमतिनाथ तीर्थकर एक कोड़ाकोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तरलाख इक्कासी हजार सात सौ मुनियोंसहित मोक्ष पधारे हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके समान है। पांचवें **मोहनकूटसे** पद्मप्रभ तीर्थकर निन्यानवै कोड़ाकाड़ी सत्तानवै करोड़ सत्तासी लाख बियालीस हजार सातसौ मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इस कूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके तुल्य है। छठे **प्रभास कूटसे** सुपाश्वेनाथ तीर्थकर चौरासी कोड़ाकोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तर लाख सात हजार सात सौ ब्यालीस मुनिसहित मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल बत्तीस कोड़ाकोड़ी उपवासके बराबर है। सातवें **लालितकूटसे** चन्द्रप्रभ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इनके सिवाय वहांसे चौरासी अरब बहत्तर करोड़ अस्सीलाख चौरासी हजार पांच सौ पचपन मुनि और भी मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल सोलहलाख उपवासके तुल्य है। आठवें **सुप्रभ कूटसे** श्रीपुरुषदत्त तीर्थकर हजार मुनिसहित मुक्ति पधारे हैं तथा निन्यानवें करोड़ नव्वेलाख सात हजार चार सौ अस्सी मुनि और भी वहांसे मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवासके बराबर है। नववें

विद्युतवर कूटसे शीतलनाथ तीर्थकर एक हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं और भी वहांसे अठारह कोड़ाकोड़ी बियालीस करोड़ बत्तीस लाख बियालीस हजार नौसे पांच मुनियोंने मुक्ति पाई है। इस कूटके दर्शनका फल भी एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। दशवें **संकुल** कूटसे श्रेयांसनाथ तीर्थकर एक हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं और तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी छयानवें करोड़ छयानवें लाख नवहजार पांचसौ बियालीस मुनियों और भी वहांसे मुक्ति पाई है। इसकूटके दर्शन करनेका फल भी एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

चंपापुरसे वांसुपूज्य तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष पधारे हैं। सम्मेदशिखरके ग्यारहवें **वरिसंवल** कूटसे विमलनाथतीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं। और छह हजार छहसौ तथा सत्तर कोड़ाकोड़ी साठ लाख छह हजार सात सौ बियालीस मुनि और भी मुक्ति गये हैं। इसकूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। बारहवें **स्वयंभू** कूटसे अनंतनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं। इनके सिवाय पचहत्तर हजार, सातसौ तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी सत्तर लाख सत्तरहजार सात सौ मुनि और भी मोक्ष गये हैं। इस कूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके तुल्य है। तेरहवें **सुदत्तवर** कूटसे धर्मनाथ तीर्थकर आठसौ एक मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। तथा इसी कूटसे उन्नीस कोड़ाकोड़ी उन्नीस करोड़ नौ लाख नौ हजार सात सौ पंचानवे मुनि और भी मुक्त

हुए हैं, दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है, चौदहवें **शान्तिप्रभ** कूटसे श्रीशान्तिनाथ तीर्थकर नौ सौ मुनिसहित मुक्तिधामको गये हैं, तथा इसी कूटसे नौ सौ कोड़ा-कोड़ी छयानवै करौड़ बत्तीस लाख छयानवै हजार सात सौ बियालीस मुनियोंने और भी पंचमगति पाई है। इसके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। पन्द्रहवें **ज्ञानधर** कूटसे कुण्डनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष पधारे हैं। तथा छयानवै कोड़ाकोड़ी छयानवै करौड़ बत्तीसलाख छयानवै हजार सात सौ ब्यालीस मुनि और भी मोक्षधामको गये हैं। दर्शनकरनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। सोलहवें **नाटक** कूटसे अरुनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं, तथा निन्यानवै करौड़ निन्यानवै लाख निन्यानवै हजार मुनियोंने और भी मुक्ति लक्ष्मी प्राप्त की है। इस कूटके दर्शन करनेका फल छयानवै करौड़ उपवास करनेके बराबर है। सत्रहवें **संवलकट**से श्रीमल्लिनाथ तीर्थकर पांच सौ मुनियोंके सहित मुक्ति गये हैं। तथा छयानवै करौड़ मुनि औरभी वहांसे परमपदको प्राप्त हुए हैं। इसका दर्शन करना एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है, अठारहवें **निर्जर** कूटसे मुनिसुव्रतनाथ तीर्थकर हजार मुनि सहित मुक्त हुए हैं तथा निन्यानवै कोड़ाकोड़ी, सत्तानवै करौड़ नौ लाख नौ सौ निन्यानवै मुनि औरभी वहांसे मुक्त धामको गये हैं। इस टोंकके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके समान है। उन्नीसवें

मित्रधर कूटसे नमिनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित निर्वाण प्राप्त हुए हैं, तथा नौ सौ कोड़ाकोड़ी पैतालिस लाख सात हजार नौ सौ बियालीस मुनि औरभी कमोंसे छूटे हैं। इस टोंकके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

गिरनार पर्वतसे श्रोनेमिनाथ तीर्थकर पांच सौ छत्तीस मुनि सहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। तथा बहत्तर करोड़ सात सौ मुनि और भी गिरनार पर्वतसे मुक्त हुए हैं।

सम्मेशिखरके बोंसवें सुवर्ण भद्रकूटसे श्रोपाश्वनाथ तीर्थकर पांच सौ छत्तीस मुनिसहित परमधामको सिधारे हैं। तथा चौरासी लाख मुनि और भी वहांसे मुक्त गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

इसके पश्चात् श्रोगौतमगणधर बोले, हे राजन् ! ये महावीर भगवान् पावापुरीके पद्मसरोवरमेंसे छत्तीस मुनियोंके सहित मोक्ष जावेंगे। तथा शिखरजीकी जिन्होंने पूर्वकालमें यात्रा की है, उनमेंसे थोड़ेसे नाम मैं कहता हूँ। सगर, सागर, मघबा, सनत्कुमार, आनन्द, प्रभसेन, ललितदंत, कुंदसेन, सेनादत्त, बरदत्त, सोमप्रभ, चारुसेन, आदि इनके सिवाय और भी हजारों राजाओंने यात्राकी है, परन्तु उनमेंसे दर्शन केवल उन्हींको हुए हैं, जो भव्य थे, अभव्योंको दर्शन नहीं मिलते।

श्रेणिक—हे भगवन् ! शिखरजीकी यात्रा करनेका फल जो कुछ आपने कहा, सो तो यथार्थ है परन्तु उससे अधिक तथा सम्पूर्ण फल और क्या है, वह कृपा करके कहो।

गौतमस्वामी—हे राजन् ! शिखरजीकी यात्रा करनेवाला फिर संसारमें अधिक नहीं भटकता । उनचास भव लेकर वह जीव पचासवें भव अवश्य ही सिद्धस्थानमें जाकर अजर अमर अखंड सदा जागती जोत होकर अचल रहता है, यह नियम है । इसके सिवाय यात्रा करनेवाला नरक तिर्यच गतिमें तथा स्त्रीप-र्यायमें भी जन्म नहीं लेता ।

श्रेणिक—यदि ऐसा है, तो भगवन् रावणने शिखरजीकी यात्रा की थी, फिर उसे नरकगति क्यों प्राप्त हुई ?

गौतम ०—रावण शिखरजीकी यात्रा करनेके लिये नहीं किन्तु त्रैलोक्यमंडल हाथीको पकड़नेके लिये मधुवन गया था । इसलिये वह यात्राके फलका भागी न हो सका ।

श्रेणिक—भगवन् ! यदि कोई बिना भावसे शिखरजीकी यात्रा करे, तो उसकी नरक तिर्यच गति छूटे कि नहीं ?

गौतम ०—राजन् ! जिस प्रकारसे बिना भावसे खाई हुई मिश्री मीठी लगती है, और दवाई रोगको शांत करती है, उसी प्रकारसे बिना भावसे की हुई यात्रा भी ऐसा नहीं है कि, फलवती न हो ।

श्रेणिक—भगवन् ! आपने कहा कि, भव्यको यात्रा होती है, परन्तु अभव्यको नहीं होती, सो यह बतलाइये कि, खास शिखरजीमें भीलादिक तथा पृथ्वी जल वनस्पति एकेन्द्रियादिक जीव राशि हैं, वे सब भव्य हैं अथवा अभव्य ?

हर रविकला भव शस्य कों अमृत भरो ॥ २ ॥ वस्त्राभरण विन
 शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरे । नाशाग्र दृष्टि विकार वर्जित
 निरखि छवि संकट टरे ॥ तुम चरण पंकज नख प्रभा नभ कोटि
 सूर्य प्रभा धरे । देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुटमणि द्युति विस्तरे
 ॥ ३ ॥ अंतर बहिर इत्यादि लक्ष्मी तुम असाधारण लसे । तुम
 जाप पाप कलापनासे ध्यावते शिव थल वसे मैं सेय कुदृग कुबोध
 अब्रत चिरभ्रमो भववन सवे ॥ दुख सहे सर्व प्रकार गिर समसुख
 न सर्पण सम कवे ॥ ४ ॥ पर चाह दाह दहो सदा कबहुं न साम्य
 सुधा चखो । अनुभव अपूरव म्यादु विन नित विषय रस चारो
 भखो ॥ अब बसो मो उर में सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहों ।
 वर भक्ति अतिदृढ़ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चहों ॥ ५ ॥ एके-
 न्द्रियादिक अन्तर्गिहक तक तथा अन्तर घनी । पाये पर्याय अनन्त-
 वार अपूर्व सो नहिं शिव धनी ॥ ससृज भ्रमण तें थकित लखि
 निज दासकी सुन लीजिये । सम्यक द्रश वर ज्ञान चारित पथ
 विहारी कीजिये ॥ ६ ॥

(३) विनती भूकर कृत ।

गीता छन्द

पुलकंत नयन चकोर पक्षी हंसत उर इन्दीवरो । दुबुद्धि
 चकवी विलख बिछुड़ी निबड़ मिथ्या तम हरो ॥ आनंद अम्बुज
 उमग उछरो अखिल आतम निरदले । जिम बदन पूरण चन्द्र निर-
 खत सकल मन वांछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो
 पावन आज विघ्न नशाइयो । संसार सागर तीर निबटो अखिल

तत्त्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरो मुभ उभय भव निर्मल
ठये । दुख जरो दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भयो ॥ २ ॥
मनहरण मूरति हेर प्रभुकी कौन उपमा ल्याइये । मम सकल तन-
के रोम हुलसे हर्ष और न पाइये । कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभुको
लखें जो सुर नर घने । तिस समयकी आनन्द महिमा कहत क्यों
मुखसे वने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको और बांछा ना
रहो । मम सब मनोरथ भये पूरण रङ्ग मानो निधि लही । अब
होह भवभव भक्ति तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये । कर जोर भूधर-
दास विनवे यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥ इति ॥

(४) विनती भूधरदास कृत ।

अहो जगत गुरु देव सुनिये अर्ज हमारी । तुम प्रभु दीन
दयालु मैं दुखिया सखारी ॥ १ ॥ इस भव वनके मांहि काल अनादि
गमायो । भ्रमत चतुर्गति मांहि सुख नहिं दुख बहु पायो ॥ २ ॥ कमे
महारिपु जोर ये कलकान करेंजी । मन माने दुख देह काहसे नाहिं
डरेंजा ॥ ३ ॥ कवहूँ इतर निगोद कवहूँ कि नर्क दिखावे । सुर
नर पशुगति मांहि बहुत विधि नाच नचावें ॥ ४ ॥ प्रभु इनको परसग
भव भव मांहि वुरे जी । जा दुख देष देव तुमसे नाहिं दुरो
जी ॥ ५ ॥ एक जन्मकी बात कहि न सको सब स्वामी । तुम अनन्त
पर्याय जानत अन्तर यामी ॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट
घनेरें कियो बहुत बेहाल सुनिये साहय मेरे ॥ ७ ॥ ज्ञान महानिधि
लूट रङ्ग निवल कर डारो । इनही मो तुम मांहि हे प्रभु अन्तर पारो
॥ ८ ॥ पाप पुण्य मिल दोष पायन बेरी डारी । तन कारागृह मांहि
मूँद दियो दुख भारी ॥ ९ ॥ इनको नेक विगार मैं कुछ नाहिं करोजी

बिन कारण जगबन्धु बहुविधि बैर धरो जी ॥१०॥ अब आयो तुम
पास सुन कर सुयश तुम्हारो । नीति निपुण महाराज कीजे न्याय
हमारो ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकास साधुनको रख लीजे ॥ बिनवे
भूधरदास हे प्रभु ढोल न कीजे ॥ १२ ॥

(५) विनती नाथूराम जी कृत ।

दोहा—चौबीसो जिन पद कमल, बन्दन करों त्रिकाल ।

करो भवोदधि पार अब, काटो बहु विधि जाल ॥ १ ॥

छन्द ।

ऋषभनाथ ऋषि ईश तुम ऋषि धर्म चलायो । अजित अजित
अरि जीत बसु विधि शिवपद पायो ॥ संभव संभ्रम नाशि बहु
भवि बोधित कीने । अभिनन्दन भगवान् अभिरुचि कर व्रत दीने
॥ ३ ॥ सुमति सुमति वरदान दोजे तुम गुण गाऊँ । पद्म- प्रभु
पदपद्म उर धर शीश नवाऊँ ॥ ४ ॥ नाथ सुपारस पास राखा
शरण गहोंजी । चन्द्रप्रभू मुखचन्द्र देखत बोध लहोंजी ॥ ५ ॥
पुष्पदन्त महाराज विकसत दन्त तुम्हारो ॥ शीतलशीतल बैन जग
दुःखहरण उचारो ॥ श्रेयान्सनाथ भगवान् श्रेय जगतको कर्ता ।
बासपूज्य पद वास दीजे त्रिभुवन भर्ता ॥ ७ ॥ विमल विमल पद
पाय विमल किये बहु प्राणी । श्रीअनन्त जिनराज गुण अनन्त के
दानी ॥ ८ ॥ धर्मनाथ तुम धर्मतारण तरण जिनेश । शान्तिनाथ
अघ ताप शान्ति करो परमेश ॥ कुंथुनाथ जिनराज कुंथु आदि जिय
पाले । अरह प्रभू अरि नाश बहु भव के अघ टाले ॥१०॥ मल्लिनाथ
क्षण मांहि मोह मल्ल क्षय कीना । मुनिसुव्रत वृत्तसार मुनि गण

को प्रभु दीना ॥ ११ ॥ नमि प्रभुके पद पद्म नवत नशेँ अघ भारी ।
नेमि प्रभू तज राज जाय वरी शिव नारी ॥ १२ ॥ पारसवर्ण सरूप
कहु भविष्यण में कीने । वीर वीर विधि नाश ज्ञानादिक गुण
लीने ॥ १३ ॥ चार बीस जिनदेव गुण अनन्त के धारी । करो
विविध पद सेव मैटो व्यथा हमारी ॥ १४ ॥ तुम सम जगमें कौन
ताका शरण गहीजे । यासे मांगो नाथ निज पद सेवा दीजे ॥ १५ ॥

दोहा—नाथूराम जिन भक्त का, दूर करो भव वास ।

जब तक शिव अवसर नहीं, करो चरण का दास ॥

(६) विनती भूदरदास कृत ।

वे गुरु मेरे उर बसो तारण तरण जहाज । वे गुरु मेरे उर बसो ॥
आप तरें पर तार ही ऐसे ऋषिराज । वे गुरु मेरे उर बसो ॥ टेका ॥
मोह महा रिपु जीत के, छोड़ो है घरवार । भये दिगम्बर बन
बसे, आनम शुद्ध विचार ॥ १ ॥ रोग मदन तन ध्यावही, भोग
भुजङ्ग समान । कदली तरु संसार है, इम छोड़े सब जान ॥ २ ॥
रत्नत्रय निज उर धरें, वर निरग्रन्थ त्रिकाल । मारो काम खबीस
को, स्वामी परम दयाल ॥ ३ ॥ धर्म धरें दशलक्षणी भावन भाव
सार । सहें परीषह बीस दो, चारित्र रत्न भण्डार ॥ ४ ॥ ग्रीष्म
ऋतु रवि तेज से सूखे सरवर नीर । शैल शिखर मुनि तप तपें,
ठाड़े अचल शरीर ॥ ५ ॥ पावस रैनि भयावनी बरसै जलधर
धार । तरु तल निवसें साहसी चाले झंझा बयार ॥ ६ ॥ शीत
पड़े रवि मद गले दहे दाहे सब बनराय । ताल तरङ्गिणी तट
विषै, ठाड़े ध्यान लगाय ॥ ७ ॥ इस विधि दुर्द्धर तप तपें, तीनों
काल मंभार । लागे सहज स्वरूप में, तन से ममता टार ॥ ८ ॥

रङ्ग महल में सोवते, कोमल सेज बिछाय । सो अब पश्चिम रैनि
में पोढ़े सम्बर काय ॥ ८ ॥ गज चढ़ चलते गर्व से सेना सज
चतुरङ्ग । निरख निरख भूपद धरे । पालें करुणा अङ्ग ॥ १० ॥
पूर्व भोग न चिन्तवें, आगे वांछा नाहि । चहुं गति के दुख से डरे
सुरति लगी शिव मांहि ॥ ११ ॥ ते गुरु चरण जहां धरे तहं, तहं
तीरथ होय । सो रज मम मस्तक चढ़ी भूधर मांगे सोय ॥ १२ ॥

{ ७ } धारें भाषा

दोहा—श्रीजिनवर चौबीसवर कुनयच्यांत हर भान ।

अमित वीर्यं दृग बोध सुख युत तिष्ठो इह धान । १ ।

(परि पुष्पांजलि क्षिपेत्) इति स्थापनम् ।

त्रिभङ्गी छन्द

गिरीश शीश पाण्डु पै सतीश ईश थापियो । महोत्सवो
आनन्द कन्द को सबै तहां किया ॥ हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्तदेखि
हेतु आपना । यहां करे जिनेन्द्र चन्द्रकी मु विम्ब थापना । ० ।

सुन्दरी छन्द ।

कनक मणिमय कुम्भ सुहावने । हरि सुक्षीर भरे अति
पावने ॥ हम सुवासित नीर यहाँ भरे । जगन् पावन पांव तरे
धरे ॥ २ ॥ ॥ इति कलश स्थापना ॥

गीताका छन्द ।

शुद्धोपयोग समान भ्रम हर परम सौरभ पावनो । आकृष्ट भङ्ग
समूह गङ्ग समुद्रभवौ अति पावनो ॥ मणि कनक कुम्भ निशुम्भ
कित्विष विमल शीतल भरि धरो । श्रम स्वेद मल निरवार जिन-
त्रय धार दे पायन परो ॥ ४ ॥ ॥ इति जल धारा ॥

अति मधुर जिन ध्वनि सम सुप्रीणित प्राणि वर्ग स्वभावसों ।
बुध चित्त समहर पित्त नित्त सुमिष्ट इष्ट उछाव सों । तत्काल
इक्षु समुत्थ प्राशुक रत्न कुम्भ विषें भरों ॥ यम त्रास तात
निवार जिन त्रय धार दे पांयन परों ॥ ५ ॥ इति इक्षु रस धारा ॥

निष्ठत क्षिप्त सुवर्ण मद दमनोय ज्यों विधि जैनकी । आयु
प्रदा बल बुद्धिदा रक्षा सु यों जिय सैनकी ॥ तत्काल मंथित क्षीर
उत्थित प्राज्य मणि भारी भरों । दीजे अतुल बल मोहि जिन त्रय
धार दे पांयन परों ॥ इति घृत धारा ॥

शरदाभ्र शुभ्र सुहाटक द्युति सुरशि पावन सोहनो । क्लैव्यक
हर बल धरन पूरन पय सकल मन मोहनो ॥ कद उष्ण गोधन नें
समाहृत घट जटित मणि में भरों । दुर्बल दशा मो मेढ जिन त्रय
धार दे पायन परों ॥ ७ ॥ इति दुग्ध धारा ॥

वर विशद जैनाचार्य ज्यों मधुराम्ल कर्कशिता धरै । शुचि
कर रसिक मथन विमथित नेह दोनों अनुसरै ॥ गो दधि सुमणि
भृङ्गार दूरन त्याग करि आगे धरों । दुख दोष कोप निवार जिन
त्रय धार दे पायन परों ॥ ८ ॥ इति दधि धारा ॥

दोहो—सर्वोपधी मिलाय के, भरि कञ्चन भृङ्गार ।

यजो चरण त्रय धार दे, तारि तार भवतार ॥ ९ ॥

॥ इति सर्वोपधी धारा ॥

(८) प्रातःकालकी स्तुति ।

चोतराग सर्वज्ञ हिनंकर भविजनकी अब पूरो आस ॥

ज्ञानभानुका उदय करो मम मिथ्यातमका हो अब नाश ॥ १ ॥

जीवोंकी हम करुणा पाले' झूठ वचन नहीं कहै कदा ॥

परधन कबहुं न हरहुं स्वामी ब्रह्मवर्य व्रत रहे सदा ॥२॥
 तृष्णा लोभ बढ़ न हमारा तोष सुधा निधि पिया करें ॥
 श्री जिन धर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥३॥
 दूर भगावे' बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें' प्रचार ॥
 मेल मिलाप बढ़ावै हमसब धर्मोन्नतिका करें' प्रचार ॥ ४ ॥
 सुखदुखमें हम समता धारै रहैं अचल जिमि सदा अटल ॥
 न्याय मार्ग को लेश न त्यागे' वृद्धि करै निज आत्मचल ॥५॥
 अष्टकर्म जो दुःख हेतु हैं तिनके छयका करें उपाय ॥
 नाम आपका जपें निरंतर विघ्नशोक सब ही टल जाय ॥६॥
 आत्म शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहीं चढ़े कदा ॥
 विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हूं बढ़े सदा ॥ ७ ॥
 हाथ जोड़ कर शीप नवावे तुमको भविजन खड़े खड़े ॥
 यह सब पूरो आस हमारी चरण शरणमें आन पड़े ॥ ८ ॥

(६) सार्यंकालकी स्तुति

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिमय गुणमणि बालक जनपर करहु दया
 कुमति निशा अंधयारीकारी सत्य ज्ञान रवि छिपा दिया ॥१॥
 क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरे चहुं ओर ॥
 लूट रहे जग जीवनको यह देख अविद्या तमका जोर ॥ २ ॥
 मारग हमको सूझे नांही ज्ञान बिना सब अन्ध भये ।
 घटमें आप विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े नये ॥ ३ ॥
 सतपथ दर्शक जनमन हर्षक घट घट अंतरयामी हो ॥
 श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥

घोर विपतमें आन पड़ा हूं मेरा बेरा पार करो ॥

शिक्षाका हो घर घर आदर शिल्पकला संचार करो ॥ ५ ॥

मेलमिलाप बढ़ावे हम सब द्वेष भावकी घटा घटी ॥

नहीं सतावे किसी जीवको प्रती क्षीरकी गटागटी ॥ ६ ॥

मातपिता अरु गुरुजनकी हम सेवा निशदिन किया करे ॥

स्वार्थ तजकर सुखदे परको आशिश सबकी लिया करे ॥७॥

आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा ॥

विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हूं बढ़े सदा ॥८॥

दोऊ कर जोरे बालक ठाढ़े करें प्रार्थना सुनिये दास ॥

सुखसे बीते रैन हमारी जिनमतका हो शीघ्र प्रकाश ॥ ९ ॥

मातपिताकी आज्ञा पाले गुरुकी भक्ति धरें उरमें ॥

रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज २ पुरमें ॥१०॥

(१०) सङ्कटहरण विनती

हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी । अब मेरी व्यथा क्यों
ना हरो वार क्या लगी ॥ टेक ॥ मालिक हो दो जहानके जिनराज
आप ही । ऐबो हुनूर हमारा कुछ तुम से छिपा नहीं ॥ बेजान में
गुनाह जो मुझ से बन गया सही । ककरी के चोर को कटार
मारिये नहीं ॥ हो दीन० १ ॥ दुख हर्द दिलका आप से जिस ने
कहा सही । मुशकल कहर बहर से लई है भुजा गही ॥ सब वेद
और पुराणमें परमाण है यही । आनन्द कन्द श्रीजिनन्द देव है
तुही ॥ हो दीन० २ ॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती ।
गंगामें गिराहने गही गज राज की गती ॥ उस वक्तमें पुकार
किया था तुम्हें सती । भयटारके उभार लिया हौ कृपा पती ॥ हो

दीन०३ ॥ पावक प्रचण्ड कुण्डमें उमण्ड जब रहा । सीतासे सत्य
 लेनेको जब रामने कहा ॥ तुम ध्यान धरके जानकी पग धारती
 तहां । तत्काल ही सर खच्छ हुआ कमल लहलहा ॥ हो० ॥ जब
 चीर द्रौपदीका दुशासनने था गहा सबरे सभा के लोग कहते थे
 हा हा हा ॥ उस वक्त भीर पीरमें तुमने किया सहा । पड़दा ढका
 सती का सुयश जगत में रहा ॥ हो० ॥ सम्यक्त शुद्ध शीलवन्ति
 चन्दासती । जिस के नजीक लगती थी जाहर रती रती । बेड़ीमें
 पड़ी थी तुमें जब ध्यावती हुती ॥ तब बीरधीर ने हरी दुःख द्वन्द
 की गती ॥ हो० ६ ॥ श्रीपालको सागर बिखे' जब सेठ गिराया ।
 उसकी रमांरमने को आया था बेहया ॥ उस वक्त के संकट
 सती तुमको जो ध्याया । दुःख द्वन्दफन्द मेटके आनन्द बढ़ाया ॥
 हो० । हरपेण की माता को जब शोक सताया । रथ जैनका तेरा
 चले पीछे से बताया ॥ उस वक्त के अनशन में सती तुमको जो
 ध्याया । चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया । हो० ८ ॥
 जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजाला । तब सासु ने कलंक
 लगा घरसे निकाला ॥ बन बर्गके उपसर्गमें सती तुमको चितारा ।
 प्रभु भक्तियुत जानके भय देव निवारा ॥ हो० ९ ॥ सौमा से कहों
 जो तू सती शील विशाला । तो कुम्भमें से काढ़ भला नाग हो
 काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ जो डाला । तत्काल
 ही वो नाग हुआ फूलको माला ॥ हो० १० ॥ जब राज-रोग था
 हुवा श्रीपाल राजको । मैना सती तप आपकी पूजा इलाज को ॥
 तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को । वह राज भोग गया
 मुक्तिराजको ॥ हो० ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दाप

लगाया । रानीके कहे भूपने शूली पै चढ़ाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ
 ने निज ध्यान में ध्याया । शूली से उतार उसको सिंहासन पै
 बिठाया ॥ हो० १२ ॥ जब सेठ सुन्नाजी को बापी में गिराया ।
 ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने
 दिल अपने में ध्याया । तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया
 ॥ हो० १२ ॥ एक सेठके घरमें किया दारिद्र ने डेरा । भोजन का
 ठिकाना भी था नहीं सांभ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब
 ध्यान में घेरा । घर उसके तबकर दिया लक्ष्मी का ब्रसेरा ॥ हो०
 १४ ॥ बलि बादमें मुनिराज सों जब पार न पाया । तब रातको
 तलवार ले शठ मारने आया । मुनिराज ने निज ध्यानमें मन लीन
 लगाया । उस वक्त हो परतक्ष तहां देव बचाया ॥ हो० १५ ॥
 जब रामने हनुमन्त को गढ़लङ्क पठाया । सीता की खबर लेनेको
 विफौर सिधायी ॥ मग बीच दो मुनिराज की लख आगमें काया ।
 भटवार मूसलधारसे उपसर्ग बुभाया ॥ हो० २६ ॥ जिननाथ ही
 को माथ नवाता था उदारा । घेरेमें पढ़ा था वह कुम्भकरण
 विचारा ॥ उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें उचारा । रघुवीरने सब
 पीर तहां तुरत निवारा ॥ हो० १७ ॥ रणपाल कुंवर के पड़ी थी
 पांवमें बेरी । उस वक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सवेरी । तत्काल
 ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी बेरी । तुम राजकुंवरको सभी दुख
 द्वन्द निवेरी ॥ हो० १८ ॥ जब सेठके नन्दन को डसा नाग जु
 कारा । उस वक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा ॥ तत्काल ही उस
 बालका बिषभूर उतारा । वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा
 ॥ हो० १९ ॥ मुनि मानतुङ्गको दर्ई जब भूपने पीरा । तालेमें किया

बन्द भरी लोहे जंजीरा । मुनीशने आदोशको थुत की है गम्भीरा ।
 चक्रेश्वरी तब आनके भट दूर की पोरा ॥ हो० २० ॥ शिव
 कोटने हठता किया समन्तभद्र सो । शिवपिण्डकी बन्दन करो
 संको अमद्र सो ॥ इस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो ।
 जिन चन्द्रकी प्रतिमा तहां प्रगटो सुभद्र सो ॥ हो० २१ ॥
 सूवेने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया । मैडक ले चला फूल भरा
 भक्त का भाया ॥ तुम दोनोंको अभिराम स्वर्गधाम बसाया । हम
 आपसे दातारको लाख आज ही पाया ॥ २२ ॥ कपि स्वान सिंह
 नवल अज बैल विचारे । तिर्यंछ जिन्हें रख न था बोध चितारे
 इत्यादिको सुरधाम दे शिवधाममें धारे । हम आपसे दातारको
 प्रभु आज निहारे ॥ हो० २३ ॥ तुमहीं अनन्त जन्तु कार भय
 भीड़ निवार । वेदो पुराणमें गुरु गणधरने उच्चार । हम आपकी
 शरणागतिमें आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष कल्प वृक्ष इक्षु अहारा
 हो० २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्तके दानी । आनन्द कन्द
 वृन्दको हो मुक्तिके दानी । मोहि दान जान दीनबन्धु पातक भानी
 संसार विषय तार तार अन्तर यामी ॥ हो० २५ ॥ करुणा निधान
 बानको अब क्यों न निहारो । दानी अनन्त दानके दाता हो संभारो
 वृष चन्द नन्द वृन्दका उपसर्ग निवारो । संसार विषमक्षारसे प्रभु
 पार उतारो ॥ हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी । अब मेरी
 व्यथा क्यों न हरो बार क्या लगी ॥ २६ ॥

(११) स्तोत्र भूदरदास कृत

दोहा—कर जिन पूजा अष्ट विधि, भाव भक्ति बहु भाय ।

अब सुरेश परमेश थुति, करत शीश निज नाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

प्रभु इस जग समर्थ ना कोय । जासे तुम यश वर्णन होय ।
 चार ज्ञान धारी मुनि थकें । हमसे मन्द कहाकर सकें ॥ २ ॥ यह
 उर जानत निश्चय कीन । जिन महिमा वर्णन हम कीन ॥ पर
 तुम भक्ति थके वाचाल । तिस बस होय गहूं गुण माल ॥ ३ ॥ जय
 तीर्थकर त्रिभुवन धनी । जय चन्द्रोपम चूड़ामणी ॥ जय जय परम
 धाम दातार । कर्म कुलावल चूरण-हार ॥ ४ ॥ जय शिव कामिन
 कन्त महन्त । अतुल अनन्त चतुष्टय वन्त ॥ जय २ आश भरण
 बड़ भाग । तप लक्ष्मीके सुभग सुभाग ॥ जय २ धर्मध्वजा धर
 धीर । स्वर्ग मोक्षदाता वरवीर ॥ जय रत्नत्रय रत्न करण्ड । जय
 जिन तारण तरण तरण्ड ॥ ६ ॥ जय २ समोशरण शृङ्गार । जय
 संशय बन दहन तुषार ॥ जय २ निर्विकार निर्दोष । जय अनन्त
 गुण माणिक कोष ॥ ७ ॥ जय जय ब्रह्मचर्य्य दल साज । काम
 सुभट विजयी भट्टराज ॥ जय जय मोह महा तरु करी । जयजय
 मद कुंजार केहरी ॥ ८ ॥ क्रोध महानल मेघ प्रचण्ड । मान मोह-
 धर दामिन दण्ड ॥ माया वेल धनंजय दाह । लोभ सलिल शोषण
 दिन नाह ॥ ९ ॥ तुम गुण सागर अगम अपार । ज्ञान जहाज न
 पहुँचे पार ॥ तट हो तट पर डोले सोय । कार्य्य सिद्धि तहां ही
 होय । १० ॥ तुम्हारी कीर्त्ति बल बहु बढ़ी । यत्न बिना जग मण्डप
 चढ़ी । और कुदेव सुयश निज चहैं । प्रभु अपने थल हो
 यश लहैं ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमैं बिन ज्ञान । कीना मोह महा
 विष पान ॥ तुम सेवा विष नाशक जड़ी । तह मुनि जन मिल
 निश्चय करी ॥ १२ ॥ जन्म जरा मिथ्या मत मूल । जन्म मरण

लागे तहां फूल ॥ सो कषट्क बिन भक्ति कुठार । कटै नहीं दुख
फल दातार ॥ १३ ॥ कल्प सरोवर चित्रा बेलि । काम पोरवा नव
निधि मेल ॥ चिन्तामणि पारस पाषाण । पुण्य पदारथ और महान
॥ १४ ॥ ये सब एक जन्म संयोग । किञ्चित सुख दातार नियोग ।
त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव । जन्म २ सुखदायक देव ॥ १५ ॥ तुम
जग बांधव तुम जग तात । अशरण शरण विरद विख्यात ॥ तुम
सब जीवन रक्षापाल । तुम दाता तुम परम दयाल ॥ १६ ॥ तुम
पुनीत तुम पुरुष प्रमान । तुम सम दर्शो तुम सब जान । जयमुनि
यज्ञ पुरुष परमेश ॥ तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥ १७ ॥ तुम जग
भर्ता तुम जग जान । स्वामि स्वयम्भू तुम अमलान ॥ तुम बिन
तीन काल तिहुं खोय । नाहीं शरण जीवको होय ॥ १८ ॥ इससे
अब करुणानिधि नाथ । तुम सन्मुख हम जोड़ें हाथ ॥ जबलों
निकट होय निर्वाण । जग निवास छूटै दुख दान ॥ १९ ॥ तब लों
तुम चरणाम्बुज बास । हम उर होय यही अरदास ॥ और न कछु
बांछा भगवान । हो दयालु दीजे वरदान ॥ २० ॥

दोहा—इस विधि इन्द्रादिक अमर, कर बहु भक्ति विधान ।

निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सन्मुख सुख मान ॥ २१ ॥

जीति कर्म रिपु ये भये, केवल लब्धि निवास ।

सो श्रीपार्श्व प्रभू सदा, करो विघ्न घन नाश ॥

(१२) अरिहन्त परमेष्ठी मंगल ।

वन्दों श्रीअरिहन्त सिद्ध आचार्यजी । उपाध्याय नमि साधु
भवधर आर्यजी । पंच परमपद श्रेष्ठ जागति में ये कहे । इन ही
के सुप्रसाद भव्यजान सुख लहे ॥ लहे लेत ले'यगे सुख मुक्ति

रमणीके सही ॥ अहमेन्द्र इन्द्र नरेन्द्र सुखकी तास उपमा है नहीं ॥
 यासे तिन्होके एक सौ तिरकाल गुण नित ध्याइये । उर नेम धरके
 पंच पदके पंच मंगल गाइये ॥ १ ॥ सम चतुर संस्थान सुग-
 न्धित तन लसे । एक सहस्र गणि आठ सुलक्षण शुभ बसे ॥ मल
 मूत्र नहीं होय पसेव न होइये । क्षीर वर्ण वर रुधिर अतुल बल
 जोइये ॥ जोइये हितमित बचन सुन्दर रूपका ना पार जी । लख
 वज्र वृषभ नाराच्य सहनन जन्म दश गुण धारजी ॥ सुरभिक्ष
 योजन एक शतलों चार दिश जानिये । छाया विवर्जित चार
 आनन गगण गमन बखानिये ॥ २ ॥ नहीं बढ़े नख केश सकल
 विद्याधनी । प्राणी वाधा रहित सहिज अतिशय बनी ॥ नहि होय
 उपसर्गाहार कवला नहीं । नेत्र नहीं टमकार ज्ञान गुण दश सही ॥
 सही सब ही जीव केरे भाव मैत्री तहां बसें । सकलार्थ मागधी
 होय भाषा सुनत सब संशय नशें ॥ सब लोक में आनन्द बर्ते भूमि
 दर्पण सम छजे । आकाश निर्मल धान्य सब ही एकठे हो नीपजे
 ॥ ३ ॥ छः ऋतु के फल फूल फले इकबार ही । भू तृण कंटक
 आदि रहित सुखकार हो ॥ मन्द सुगन्धि चले पवन सकल जन
 मन हरै । गंधोदक की वृष्टि गगणसे सुर करें ॥ करें जय जय
 कार मुख से शब्द सुर आकाश में । सुर हेम कमल बिहार करते
 धरत पद तल जास में । अष्ट मङ्गल द्रव्य राजय धर्म चक्र चले
 तहां । ये देव कृत गुण जात चौदह जोड़ सब चौतिस यहां ।
 सोहे वृक्ष अशोक शोक हर लेत है । दिव्य ध्वनि सुन जीव मिथ्या
 तज देत हैं ॥ सुरकृत पुष्प सुवृष्टि चमर चौंसट दुरे । भामण्डल
 सुर गगण नाद दुंदुभी करें ॥ करें अपने हेतु को ये क्षत्रत्रय

शिर सोहना ॥ मणि जटित सिंहासन कनकमय लोकत्रय मन
मोहना ॥ ये प्रातिहार्य मिलाय आठों जोड़ गुण व्यालीस जी ।
ये ही जनावत प्रगट तुम को तीन जग के ईशजी ॥ दर्शन ज्ञान
अनन्त विषे षट द्रव्य से । गुण पर्याय अनन्त लखे दृष्टि सर्वके ॥
राजत सुक्ख अनन्तानन्त केवल धनी । अनन्त चतुष्टय जोड़
सकल छालिस गुणी । गणिये सुछालिस गुण विराजित देव
अरिहत सो लखो । गुण और कबलों कहों कैसे बुद्धि थोरी मैं
रखों ॥ इन्द्र गणधर आदि जिन गुण गणत पार न पाइयो । गणि
दोष अष्टादश जिनेश्वर मूल से जु नशाइयो । क्षुधा तृषा मद मोह
जरा चिन्ता टरी । आरति विस्मय रोग शोक निद्रा हरी ॥ स्वेद
खेद भय रोग हनो पुन द्वेषजी । जन्म मरण का दुख नहीं लव-
लेश जो ॥ लवलेश इनका नाहिं यासे मोहि तारण तरणजी ।
भव दुख निवारण सुक्ख कारण मोहि अशरण शरणजी ॥ यासे
सदा ही प्रात उठ छालीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद
पञ्च में अरिहन्त मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥

(१३) श्रीसिद्ध परमेष्ठी मंगल ।

तिहूँ जग शिरतन बात बलय में जानियो । प्रारम्भ नभ क्षेत्र
तहां उर आनियो ॥ मनुज क्षेत्र सम क्षेत्र महा अद्भुत सही ।
हाटक मणिमय मुक्ति शिला तासम कही ॥ कही तिहूँ जग शीर्ष
ऊपर क्षेत्रके आकार जी । मध्य भाग योजन आठ मोटी अन्त
अनुक्रम ढारजी । तापर विराजत सिद्ध शिव थल काय बिन बिन
रूपजी । लख पूर्व तन से ऊन किंचित आत्मरूप अनूप जी ॥ १ ॥

एक सिद्धके माँहि अनन्ते सिद्ध हैं । राजत गुण समुदाय लिये
निज ऋद्धि हैं ॥ किंचित कायोत्सर्ग और पदमासन । सकल सिद्ध
सम शीर्ष विराजत भासनं ॥ भासना आकार काजौ लखो इक
दृष्टान्त जी । सांचो करो इक मोम को फिर गारालेप धरन्त जी ॥
सुकबाय ताको अग्नि देकर मोम काढ़न ठानिये । पोलारवा में रहै
जैसी सिद्ध आकृति जानिये ॥ २ ॥ पौने सोलह सौ धनु महा
गिनाय जी । बात वलय तन की सुलखो मोटाय जी । पन्द्रह सौ
का भाग देव ताको सही । सबा पांच सौ धनुष होय संशय
नहीं ॥ संशय नहीं अवगाहना उत्कृष्ट सिद्धन की लखो । तन
बातकी मोटाई पुनः भाग नव लख का रखो ॥ अवगाहनादि जघन्य
गिनले हाथ साढ़े तीन जी । पुनः मध्य भेद अनेक हैं अवगाहनाके
चीत जी ॥ ३ ॥ मोहनी नामाकर्म महा बलवन्त जी । कीन्हों
बातिल बुद्धि सकल जग जन्तु जी ॥ ताहि मूल से नाश शुद्ध
सम्पति लही । प्रगटी गुण सम्यक्त्व प्रथम अद्भुत सही ॥ सहोदृण
यह जगतिके दुख नाशने को मूल है । या बिना सब ही अकारथ
वासना बिन फूल है ॥ बिन नीव मन्दिर मूल बिन तरु नीर बिन
सागर यथा । सम्यक्त्व गुण बिन सकल करणी सफल नाहीं
सबथा ॥ ४ ॥ ज्ञानावरणी कर्म द्यो सब टार जी । हस्त रेख सम-
लोक अलोक निहार जी ॥ दूजे गुण तब ज्ञान शुद्ध सुप्रगट लहो ।
यासम और न कोइ जगति में गुण कहो ॥ कहो तीजो कर्म नामो
दर्शना वरणी लखो । दीखे नहीं जाके उदय जिमि बख पर ढाकन
रखो ॥ इस कर्मको विध्वंस करके लहो केवल दर्शना । गुण होय
मिटे तब ही वस्तु देखन तर्सना ॥ ५ ॥ अन्तराय बलवान महा

दुःख देत है । जग जीवोंकी शक्ति सभी हर लेत है ॥ याको हति निज वीर्य अनन्त लहाय जी । सो चौथा गुण वीर्य लखो मन ल्याय जी ॥ मन ल्याय तिहुंजग मांहि जानो नाम कर्म महान हैं । इस कर्म बश जग जीव चहुं गति भटकते हैरान हैं ॥ याको हनो तब ही अमूर्खि भयो आतमराम है । सो मस गुण तब होत जगमें बहुर नाहीं काम है ॥ ६ ॥ आयु कर्म से जीव चहुं गतिमें बसे । बंदीखाने मांहि यथा कैदी फंसे ॥ याहि हरत गुण प्रगट होत अवगाहना । एक सिद्ध में सिद्ध अनन्त सम्भावना ॥ सम्भावना जग जीव सब ही गोत्र विधि के बश परे । पद ऊंच नीच लहैं सुबहु विधि दुःख दावानल जरे ॥ इस गोत्र कर्म बिनाशने से भाव सम प्रगटे सदा । सो गुण अगुण लघु होय तब ही ऊंच नीच न रहें कदा ॥ ७ ॥ वेदनी कर्म वशाय जगति के जीव जी । भोगे दुःख अपार अचिंत सदीव जी ॥ अव्यावाध गुण होइ हरे जब याहिजी । सुख दुःख दोनों रहित नहीं कछु चाह जी ॥ चाह तिहुं जगकाल तिहुंके सुख इकट्ठे कीजिये । तिनसे अनन्तः सुख है इक समय मांहि लहीजिये ॥ यासे तिन्हों के आठ गुण को प्रात उठ नित ध्याइये । उर नेम धर के पंचपद में सिद्ध मंगल गाइये ॥ ८ ॥

(१४) श्री आचार्यपरमेष्ठी मंगल ।

दर्शन मोह विनाश आप दर्शन लहो । सोही दशनाचार भिन्न परसे कहो ॥ स्वपर भेद लख ज्ञान थकी निज लीन जी । सो हो ज्ञानाचार लखो सु प्रवीणजी ॥ प्रवीण निज पद मांहि धिर हो यही खरित्र गुण सही । इच्छा अभ्यन्तर रोक अनसन बाह्य गुण

तप जानहीं ॥ जब कष्ट बहु विधि आवता नहिं टरें यह गुण
वीर्य जी । आचरे' पंचाचार यह गुण लहें बहु धर धीर्य जी ॥ १ ॥
वर्ष अयन ऋतु मास पक्ष आदिक तनी । करे' सदा उपवास लहें
गुण अनसनी ॥ पूर्ण ग्रास बत्तीस अन्न जलके गुणी । लेय तामें
ऊन ऊनोदर सो मुनी ॥ मुनिचर्या निमित्त वनमें व्रत अटपटे धर
चले' । व्रत परि संख्या कहो यह गुण और जनसे ना पले' ॥
कोई रसको तजें कबहुँ सर्व रस तज देत हैं । गुण जान रस
परित्याग सुन्दर महा अद्भुत भजात है ॥ २ ॥ गिरि कन्दर
एकान्त रहत सु मसान मे । धरें ध्यान अनागार लीन निज ज्ञान
में ॥ विव्यक्त शय्यासन सो कहत गुण याहि जी । साहस ऐसा
धार ममत्व सो नाहिं जी ॥ नाहिं तनको तनक सो भी ममत
तिनके उर बसे । पावस समय तरुके तले धरे' ध्यान पातक
सब नसे ॥ हेमन्त सरिता ग्रीष्म गिरि शिर उग्र जो तप करे' ।
गुण लखो काय कलेश येही सकल दुखको परिहरे' ॥ ३ ॥
प्रातः धरे' व्रत जेह सम्हाले सांभजीं । कोई लागो दोष लखे'
ता मांभ जी ॥ गुरुसे कह सब दोष दण्डको आचरे' । प्रायश्चित्त
गुण येह महा सुखको करे' ॥ करे' मन बच काय सेती देव गुरु
श्रु तिका विनय । अरु पूजनीक पदार्थ तिनकी विनय गुण तप के
गिनय ॥ रोगातिवृत्त या बृद्ध मुनिवर देख बैयावृत धरे' । उन्माद
मद तज लखे' बैयावृत्य गुण तब विस्तरे' ॥ ४ ॥ पंच भेद स्वा
ध्याय आप नित ही करे' । बोध बंधके हेतु परनको उच्वरे' ॥ सो
ही गुण स्वाध्याय सकलमें सारजी । नाशा द्वष्टि लगाय झड़े'
अनगारजी ॥ अनगार दोनों कर लुभाये' लीन निज आतम विषे' ।

१ क्षुधापरीषह—अनशन ऊनोदर तप पोषत हैं पक्ष मास दिन बीत गये हैं । जो नहीं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं ॥ तब तहां दुस्सह भूखकी वेदन सहित साधु नहीं नेक नये हैं । तिनके चरण कमल प्रति प्रति दिन हाथ जोड़ हम सोस नये हैं ॥

२ तृषा परीषह—पराधीन मुनिवरकी भिक्षा पर घर लेयं कहें कछु नाहीं । प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यासको त्रास तहां ही ॥ ग्रीष्मकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरे जब जाहीं । नीर न चहैं तीस से मुनिवर जयवन्तों वरतो जग माहीं ॥

३ शीत परीषह—शीतकाल सब ही जन कम्पै खड़े जहां वन वृक्ष दहे हैं । झंझा वायु वहे वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं ॥ तहां धीर तटिनी तट चौपट ताल पालपर कम दहे हैं । सहैं सम्हाल शीत की बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥

४ उष्ण परीषह—भूख प्यास पीड़ उर अन्तर प्रज्वले आंत देह सब दागे । अग्नि स्वरूप धूप ग्रीष्मकी ताती वायु भालसी लागे ॥ तपै पहाड़ ताप तन उपजै कोप पित्त दाहज्वर जागे । इत्यादिक गर्मीकी बाधा सहैं साधु धैर्य नहिं त्यागे ॥

५—दंशमशक परीषह—दंश मशक माखी तनु काटे पीड़े बन पक्षी बहुतेरे । डसें व्याल विषहारे बिच्छू लगे खजुरे आन घनेरे ॥ सिंघ स्याल शुण्डाल सतावे रीछ रोज दुःख देय घनेरे । ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे ।

६ नम्र परीषह—अन्तर विषय वासना वर्त्तें बाहिर लोक लाज भय भारी । तातें परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिं सके दीन

संसारि । ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषद् जीते' साधु शील व्रतधारी ।
निर्विकार बालकवत् निर्भय तिनके पायन धोक हमारी ॥

७ अरति परीषद्—देश कालको कारण लहिके होत अचेन
अनेक प्रकारैं । तब तहां खिन्न होयें जगवासी कलबलाय धिरता-
पन छारैं । ऐसी अरति परीषद् उपजत तहां धीर धैर्य्य उर धारैं ।
ऐसे साधुनके उर अन्तर बसो निरन्तर नाम हमारे ॥

८ स्त्री परीषद्—जे प्रधान केहर को पकड़ै पक्षग पकड़ पान
से चम्पत । जिनकी तनक देख भौ बांकी कोटिन सूर दीनता
जम्पत ॥ ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेद पयम्पन ॥
धन्य धन्य ते साधु साहसो मन सुमेरु जिनको नहिं कम्पत ॥

९ चर्या परीषद्—चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि
इत उत नहीं ताने' । कोमल पांच कठिन धरती पर धरत धीर
वाधा नहिं माने । नाग तुरङ्ग पालकी चढ़ते ते स्वाद उर याद न
आने'यो' मुनिराज सहें चर्या दुःख तब दूढ़ कर्म कुलाचल भानै ॥

१० आसन परीषद्—गुफा मसान शैल तरु कोटर निचसे'
जहाँ शुद्ध भू हेरे' । परिमित काल रहें निश्चल तन बारबार आसन
नहिं फेरे' ॥ मानुषदेव अचेतन पशु कृत बैठे बिपत आन जब घेरे'
ठौरन तजै भजै धिरता पद ते गुरु सदा बसो उर मेरे ॥

११ शयन परीषद्—जे महान् सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय
सुख जोवे' । ते अब अचल अङ्ग एकासन कोमल कठिन भूमिपर
सोवे' ॥ पाहन खण्ड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर नहीं होवे' ।
ऐसी शयन परीषद् जीतत ते मुनि कर्म कालिमा धोवे' ॥

१२ आक्रोश परीषद्—जगत् जीवयाधन्त चराचर सबके हित

सबको सुखदानी । तिन्हे देख दुर्वचन कहे शठ पाखण्डो ठग यह
अभिमानी । मारो याहि पकड़ पापीको तपसी भेष चोर है छानी ।
ऐसे कुवचन वाण की बिरियां क्षमा ढाल ओढ़ै मुनि शानी ॥

१३ बध बन्दन परीषह—निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको
दुष्ट लोग मिल मारै । कोई खैच खम्मसे बांधे कोई पावकमें पर-
जारै ॥ तहां कोप नहिं करै कदाचित् पूरव कर्म विपाक विचारै ।
समरथ होय सहै बध बन्धन ते गुरु सदा सहाय हमारे ॥

१४ याचना परीषह—घोर वीर तप करत तपोधन भये क्षीण
सूखी गलबांही । अस्थिचाम अवशेष रहे तनु नसा जाल झलके
जिस मांही ॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जांय पर या-
चित नाहीं । दुर्द्धर अयाचिक व्रत धारै करहिं न मलिन धर्म
परछांहीं ॥

१५ अलाभ परीषह—एकबार भोजनकी बिरियां मोन साध
बस्तीमें आवैं । जो नहिं बने योग भिक्षा विधि तो महन्त मन
खेदन लावैं । ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तब तप वृद्ध भावना
भावैं । यों अलाभकी कठिन परीषह सहैं साधु सोही शिव पावैं ॥

१६ रोग परीषह—घात पित्त कफ श्रोणित चारों थें जब
घटे बढ़े तनु माहीं । रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव
कायर हो जाहीं ॥ एसी व्याधि वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न
चाहीं । आत्मलीन विरक्त देहसे जैन यती निज नेम निवाहीं ॥

१७ तृण स्पर्श परिषह—सूखे तृण और तीक्ष्ण कांटे कठिन
कांकरी पांय विदारैं । रज उड़ आन पड़े लोचनमें तीर फांस तनु
पीर बियागैं ॥ तापर पर सहाय नहीं वांछत अपने करसों काढ़

न डारें । यों तृणस्पशं परीषह विजयी ते शुद्ध भव भव शरण
हमारे ॥

१८ मल परीषह—यावज्जीव जल नहौन तजो तिन नग्न रूप
बन थान खड़े हैं । चले पसेव धूपकी बिरियां उड़त धूल सब अङ्ग
भरे हैं ॥ मलिन देहको देख महा मुनि मलिन भाव उर नाहिं करे
हैं । यों मल जनित परीषह जोतैं तिन्हें पाय हम सीस धरे हैं ॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह—जे महान विद्यानिधिविजयी
चिर तपसी गुण अनुल भरे हैं । तिनकी बिनय वचन सों अथवा
उठ प्रणाम जन नाहिं करे हैं ॥ तौ मुनि तहां खेद नहिं माने उर
मलिनता भाव हरे हैं । ऐसे परम साधुके अहनिशि हाथ जोड़
हम पांय परे हैं ॥

२० प्रज्ञा परीषह—तर्क छन्द व्याकरण कलानिधि आगम
अलङ्कार पढ़ जाने । जाकी सुमति देख परवादी विलखे होय लाज
उर आनै ॥ जैसे सुनत नाद केहरिको बन गयन्द भाजत भय
मानै । ऐसी महाबुद्धिके भाजन ये मुनीश मद रञ्ज न ठाने ॥

२१ अज्ञान परिषह—सावधान बतैं निशि वासर संयम शूर
परम बैरागी । पालत गुंति गये दीरघ दिन सकल सङ्ग ममतापर
त्यागी ॥ अवधिज्ञान अथवा मनपर्यय केवल ऋद्धि न आजहुं जागी !
यों विकल्प नहिं करें तपोधन सो अज्ञान विजयी बड़ भागी ॥

२२ अदर्शन परीषह—मैं चिरकाल घोर तप कीनो अजहुं ऋद्धि
अतिशय नहिं जागे । तप बल सिद्ध होय सब सुनियत सो कलु बात
झूठसी लागे ॥ यों कदापि चितमें नहिं चिन्तत समकित शुद्ध
शान्तिरस पागे । सोई साधु अदर्शन विजयीताके दर्शनसे अघ भागे ।

ताल महा जल बरसे । बिन परसे श्रीभगवन्त मेरा जी तरसे ।
मैं तज दई तीज सलौन पलट गई पौन मेरा है कौन मुझे जग
तरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना ॥

भादों मास (भड़ी)

सखि भादों भरे तलाव मेरे चितचाव करुंगी उछाव से
सोलहकारण । करुं दसलक्षण के व्रत से पाप निवारण । करुं
रोट तीज उपवास पञ्चमी अकास अष्टमी खास निशल्य मनाऊं ।
तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म जलाऊं ॥

(भर्षट्टे)—सखि दुद्धर रसकी बारा । तजिहार चार पर-
कारा । करुं उग्र उग्र तप सारा । ज्यों होय मेरा निस्तारा ।

(भड़ी)—मैं रत्नत्रय व्रत धरुं चतुर्दशी करुं जगत् से तिरुं
करुं पखवाड़ा । मैं सब से क्षिमाऊं दोष तजूं सब राड़ा । मैं
सातों तत्व विचार कि गाऊं मल्हार तजा संसार तौ फिर क्या
करना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥

आसोज मास (भड़ी)

सखि आगया मास कुवार लो भूषण तार मुझे गिरतार का
दे दो आज्ञा । मेरे पाणिपात्र आहारकी है परतिज्ञा । लो तार ये
चूड़ामणी रतनकी कणी सुनों सब जनी खोल दो बैनी । मुझको
अवश्य परभातहि दीक्षा लैनी ॥

(भर्षट्टे)—मेरे हेतु कमण्डल लावो । इक पीछी नई मंगावो
मेरा मत ना जो भरमावो । मम सूते कर्म जगावो ॥

(भड़ी)—हैं जगमें असाता कर्म बड़ा वेशर्म मोहके भरमसे
धर्म न सूझै । इसके वश अपना हित कल्याण न बूझै । जहां मृग

तृष्णाकी धूर वहां पानी दूर भटकना भूर कहां जल भरना ।
निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना ।

कार्तिक मास (ऋद्धि)

सखि कार्तिक काल अनन्त श्रीअरहन्तकी सन्त महन्तने आज्ञा
पाली । धर योग यत्न भव भोगकी तृष्णा टाली । सजे चौदह
गुण अस्थान खपर पहचान तजे रु मक्कान महल दिवाली । लगा
उन्हें मिष्ट जिन धर्म अमावस काली ॥

(ऋर्वटै)—उन केवल ज्ञान उपाया । जगका अन्धेर मिटाया ।
जिसमें सब विश्व समाया । तन धन सब अधिर बताया ॥

(ऋद्धि)—हैं अधिर जगत सम्बन्ध अरी मतिमन्द जगत्का
अन्ध है धुन्ध पसारा । मेरे प्रीतमने सत जानके जगत् बिसारा ।
मैं उनके चरणकी चेरी तू आज्ञा दे मा मेरी । है मुझे एक दिन
मरना । निर्नेम नेम० ॥

अगहन मास (ऋद्धि)

सखि अगहन ऐसी घड़ी उदय में पड़ी मैं रह गई खड़ी दरस
नहिं पाये । मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही गँवाये ।

नहीं मिले हमारे पिया न जप तप किया न संयम लिया ।
अटक रही जगमें । पड़ी काल अनादिसे पापकी बेड़ी पगमें ॥

(ऋर्वटै)—मत भरियो मांग हमारी । मेरे शीलको लागे
गारी । मत डारो अञ्जन प्यारी । मैं योगन तुम संसारी ॥

(ऋद्धि)—हुये कन्त हमारे जती मैं उनकी सती पलट गई
रती तो धर्म नहिं खण्डू । मैं अपने पिताके बंशको कैसे भंडू ।
मैं मण्डा शील सिङ्गार अरी नथ तार गये भर्त्सारके संग आभरना
निर्नेम नेम बिन० ॥

पौष मास (ऋषी)

सखि लगा महीना पोह ये माया मोह जगतसे द्रोह रु प्रीत करावै । हरे ज्ञानावरणी ज्ञान अदर्शन छावै । पर द्रव्यसे ममता हरे तो पूरी परं जु सम्बर करै तो अन्तर टूटै । अस ऊँच नीच कुल नामकी संज्ञा छूटै ॥

(ऋर्वट्टे)—क्यों ओछी उमर धरावै । क्यों सम्पतिको बिल गावै । क्यों पराधीन दुःख पावै । जो संयममें चित लावै ॥

(ऋड्डी)—सखि क्यों कहलावै दीन क्यों हो छवि छीन क्यों विद्याहीन मलीन कहावै । क्यों नारि नपुंसक जन्मे कर्म नचावै । वे तजै शील शृङ्गार रलै संसार जिने दरकार नरकमें पड़ना । निर्न०

माघ मास (ऋड्डी)

सखि आगया माह बसन्त हमारे कन्त भये अरहन्त वो केवल-ज्ञानी । उन महिमा शील कुशीलकी ऐसे बखानी । दिये सेठ सुदर्शन सूल भई मखतूल वहां बरसे फूल हुई जयबाणी वे मुक्ति गये अरु भई कलङ्कित राणी ॥

(ऋर्वट्टे)—कीचकने मन ललचाया । द्रुपदीपर भाव धराया । उसे भीमने मार गिराया । उन किया जैसा फल पाया ॥

(ऋड्डी)—फिर गह्वा दुर्योधन चीर हुई दिलगीर जुड़ गई भीर लाज अति आवै । गये पाण्डु जुयेमें हार न पार बसावै । भये परगट शासन बीर हरी सब पीर बन्धाई धीर पकर लिये चरना । निर्नम नेम बिन० ॥

फागुन मास (ऋड्डी)

सखि आया फाग बड़ भाग तो होरी त्याग अटांही लाग कै

मैनासुन्दर । हरा श्रीपालका कुष्ट कठोर उदम्बर । दिया धवल
सेठने डार उदधिकी धार तो होगये पार वे उस हो पलमें । अरु
जापरणी गुणमाल न डूबे जलमें ॥

(भर्वट्टे)—मिली रैन मंजूषा प्यारी । जिन ध्वजा शील की
धारी । परी सेठ पै मार करारी । गया नकमें पापाचारी ॥

(भड्डी)—तुम लखो द्रोपदी सती दोष नहिं रती कहें दुर्मती
पक्षके बन्धन । हुआ धातकी खण्ड जरूर शील इस खण्डन । उन
फूटे घड़े मंभार दिया जल डाल तो वे आधार थमा जल भर
ना । निनेम नेम बिन० ॥

षैत्र मास (भड्डी)

सखि चेत्रमें बिन्ता करे न कारज सरे शीलसे टरे कर्मकी
रेखा । मैंने शीलसे भीलको होता जगत् गुरु देखा । सखी शीलमें
सुलसां तिरो सुतारा फिरी खलासी करी श्रीरघुनन्दन । अरु मिली
शील परताप पवनसे अञ्जन ॥

(भर्वट्टे)—रावणने कुमत उपाई । फिर गया विभीषण
भाई । छिनमें जा लंक गमाई । कुछ भी नहिं पार बसाई ॥

(भड्डी)—सीता सती अग्निमे पड़ी तो उस ही घड़ी वह
शीतल पड़ी चढ़ी जल धारा । खिल गये कमल भये गगनमें जय
जल कारा । पद पूजे इन्द्र धरेन्द्र भाई शीतेन्द्र श्रीब्रह्मेन्द्रेने ऐसा
बरना । निनेम नेम बिन० ॥

बैशाख मास (भड्डी)

सखी आई बैशाखी भेष लई में देख ये ऊरध रेख पड़ी मेरे
करमें । मेरा हुआ जन्म यु हीं उग्रसेनके घरमें । नहिं लिखा करम

मैं भोग पडा है जोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी । है मात पिता अरु भ्रातसे क्षमा हमारी ॥

(भवटै)—मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे । घर भोगे भोग अपारे । जो विधिके अड्डे हमारे । नहिं टरै किसीके टारे ॥

(भड्डी)—मेरो सखी सहेली बीर न हो दिलगीर धरो बित धीर मैं क्षमा कराऊं । मैं कुलको तुम्हारे कबहुं न दाग लगाऊं । वह ले आहा उठ खड़ी थी मङ्गल घड़ी बनमें जा पड़ी सुगुरुके चरना । निर्नेम नेम बिन० ॥

जेठ मास (भड्डी)

अजी पड़े जेठकी धूप खड़े सब भूप वह कन्या रूप सती बड़ भागन । कर सिद्धनको प्रणाम किया जग त्यागन । अजि त्यागे सब संसार चूड़ियां तार कमण्डलु धार के लई पिछोटी । अरु पहर के साड़ी स्वेत उपाटी बोटी ॥

(भवटै)—उन महाउग्र तप कीना । फिर अच्युतेन्द्र पद लीना । है धन्य उन्हींका जोना । नहिं विषयनमें वित दीना ॥

(भड्डी)—अजी त्रिया वेद मिट गया पाप कट गया पुण्यचढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ । करे धर्म अरथ फल भोग रुचे परमारथ, वो स्वर्ग सम्पदा भुक्ति जायगी मुक्ति जैनकी उक्तिमें निश्चय धरना । निर्नेम नेम० ॥

जो पढ़े इसे नर नारि बड़े परिवार सब संसारमें महिमा पावें । सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावें । नहिं रहें सुहागिन दुखी होय सब सुखी मिटे वेरुषी करै पति आदर । वे होय जगत् मैं महा सतियोंकी बाहर ॥

या संसार महावन भीतर भर्मत छोर न आवे । जन्मन मरन जरायों
 दाहे जीव महा दुःख पावे ॥ ३ ॥ कबहुँ कि जाय नर्क पद भुजे
 छेदन भेदन भारी । कबहुँ कि पशु पर्याय धरे तहां बध बन्धन भय
 कारी ॥ सुरगतिमें परि सम्मति देखे राम उदय दुख होई । मानुष
 योनि अनेक विपति मय सर्व सुखी नहीं कोई ॥ ४ ॥ कोई इष्ट
 वियोगी बिलखे कोई अनिष्ट संयोगी । कोई दीन दरिद्री दीखे कोई
 तनका रोगी ॥ किस ही घर कलिहारी नारी के बैरी सम भाई ।
 किस हीके दुख बाहर दीखे किसही उर दुचिदाई ॥ ५ ॥ कोई
 पुत्र बिना नित भूरे होय मरे तब रोवै । छोटी सन्ततिसे दुख
 उपजे क्यों प्राणी सुख सोवै ॥ पुण्य उदय जिनके तिनको भी
 नाहि सदा सुख साता । यह जग बास यथार्थ दीखे सबहो हैं
 दुःख दाता ॥ ६ ॥ जो संसार विषे सुख होते तीर्थकर क्यों त्यागे ।
 काहेको शिव साधन करते संयमसे अनुरागे । देह अपावन अधिर
 घिनावनी इसमें सार न कोई । सागरके जलसे शुचि कीजै तोभी
 शुद्धि न होई ॥ ७ ॥ सप्त कुधातु भरी मलमूत्र चम लपेटो सोहै ।
 अन्तर देखत या सम जगमें और अपावनको है ॥ नव मल द्वार
 श्रवै निश वासर नाम लिये घिन आवे । व्याधि उपाधि अनेक
 जहां तहां कौन सुधी सुख पावे ॥ ८ ॥ पोषत तो दुख दोष करे
 अति सोचत सुख उपजावे । दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख
 प्रीति बढावे ॥ राचन योग्य स्वरूप न याको बिरचन योग्य नहीं
 हैं । यह तन पाय महातप कीजै इसमें सार यही है ॥ ९ ॥ भोग
 बुरे भवरोग बढावे बैरी हैं जग जीके । वे रस होय विपाक समय
 अति सेवत लागे नीके ॥ बज्र अग्नि विषसे विषधरसे हैं अधिक

दुखदाई । धर्म रत्नको खोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहदाई ॥१०॥
 मोह उदय सह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने । ज्यों कोई जन
 खाय धतूरा सब सो सब कञ्चन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग
 मनोहर मन बाँछित जन पावे । तृष्णा नागिन त्यों त्यों ऋके लहर
 लोभ विष लावे ॥११॥ मैं चक्रो पद पाय निरन्तर भोगै भोग घनेरे ॥
 तो भी तनक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे । राज समाज महा
 अध कारण धैर बढ़ावन हारा । वेश्या सम लक्ष्मी अति चञ्चल
 इसका कौन पत्यारा ॥१२॥ मोह महा रिपु बैर विचारे जग जीव
 सङ्कट डारे । घर कारागर बनिता बेड़ो परजन है रखवारे ॥ सम्य
 गदर्शन ज्ञान चरण तप ये जियको हितकारी । ये ही सार असार
 और सब यह चक्री जिय धारी ॥१३॥ छोड़े चौदह रत्न नबोनिधि
 और छोड़े सङ्ग साथी । कोड़ी अठारह छोड़े छोड़े चौरासी लख
 हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण त्रणवत त्यागी । नीति
 विचार नियोगी सुतको राज्य दिया बड़ भागी ॥ १४ ॥ होइ
 निस्सल्य अनेक नृपति संग भूषण बसन उतारे । श्रीगुरु चरण
 धरी जिन मुद्रा पञ्च महाव्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि
 जगोत्तम धन्य यह धैर्यधारी । ऐसी सम्पति छोड़ बसै बन तिन
 पद धोक हमारी ॥१५॥

दोहा—परिग्रह पोट उतार सब, लीनो चारित्र पंथ ।

निज स्वभाव में स्थिर भये, बज्र नामि निर्ग्रन्थ ॥

(२७) समाधिमरण ।

(कवि दानतराय कृत)

गौतम स्वामी बन्दो नामी मरण समाधि भला है । मैं कब

पाऊं निसदिन ध्याऊं गाऊं बचन कला है ॥ देव धरम गुरु प्रीति
महा दूढ़ सात व्यसन नहीं जाने । त्यागि बाइस अमक्ष संयमी बारह
व्रत नित ठाने ॥१॥ चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी ब्रत न विराधे ।
बनिज करे पर द्रव्य हरे नहिं छहो करम इमि साधे ॥ पूजा शास्त्र
गुरुनकी सेवा संयम तप चहुं दानी । पर उपकारी अल्प अहारी
सामायक विधि ज्ञानी ॥ २ ॥ जाप जपे तिहुं योग धरे दूग तनकी
ममता टारै । अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारै ॥
आग लगे अरु नाब डुबे जब धर्म विघन जब आवे । चार प्रकार
अहार त्यागिके मन्त्र सु मनमें ध्यावे ॥३॥ रोग असाध्य जहाँ बहु
देखे कारण और निहारे । वात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को
डारे ॥ जो न बने तो घरमें रह करि सबसों होय निराला । मात
पिता सुत त्रियको सोंपै निज परिग्रह इहि काला ॥४॥ कछु चैत्या-
लय कछु श्रावक जन कछु दुखिया धन देई । क्षमा क्षमा सबहो सों
कहिके मनकी शल्य हनेई ॥ शत्रुन सों मिलि निज कर जोरे मैं बहु
करी है बुराई । तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥५॥
धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे संतोषे । छहो कायके प्राणी,
ऊपर करुणा भाव विशेषे ॥ ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कछु
भोजन कछु पेंले । दूधा धारी क्रम क्रम तजिके छाछ अहार पहेले
॥ ६ ॥ छाछ त्यागिके पानी राखे पानी तजि संधारा । भूमिमांहि
फिर आसन माढ़े साधर्मिं ढिग प्यारा ॥ जब तुम जानो यह न जपै
है तब जिनबाणी पढ़िये । यों कहि मौन लियो सन्यासी पंच परम
पद गहिये ॥७॥ चौ आराधन मनमें ध्यावे बारह भावन भावे । दश
लक्षण मन धर्म विचारै रत्नत्रय मन लावे ॥ पैतिस सोलह षट पन

चौ दुइ इक बरम विचारे । काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञान मई तू
सारे ॥ ८ ॥ अजर अमर निज गुण सो पूरे परमानन्द सुभावे ।
आमन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावे ॥ क्षुधा तृषा-
दिक होइ परीषह सहै भाव सम राखे । अतीचार पांचो सब त्यागे
ज्ञान सुधारस चाखे ॥ ९ ॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम
लीन तन त्यागे । अदभुत पुण्य उपाय सुरगमें सेज उठे ज्यों जागे ।
तहं तैं आबे शिवपद पावे बिलसे सुख अनन्तो । दानत यह गति
होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥ १० ॥

(२८) अठारहनाते लिख्यते ।

(प्रियुत कुन्दनलाल कृत)

कोई किसीका सगा नहीं भूँठी सब नातेदारी । अठारह नाते
हुए हैं एक जन्मही मैं जारी ॥ टेक ॥ मालवदेश उज्जैन शहरमें
सेठ सुदत्त वसें भारी, वसन्ततलिका वेसवा जिन्होंने निज घरमें
डारी । रोग सहित जब भई बेसवा सेठि अरुचि चितमें धारी,
गर्भवतीको महलसे छिनमें कर दीनी उनने न्यारी ॥

शैर—निरादर हो गणिका वहां से घर अपने आई है । खड़ी
दिलगीर हो सोचें पड़ी कैसी तबाही है ॥ जने लड़का और लड़की
जोड़ले ऐसी भाई है । जुदे इनको करूं घरसे जमी मेरी रिहाई है ॥
सुतडारा उत्तरदिशि माहीं तनुजा दक्षिणदिशि डारी । अठारह नाते
हुए हैं एक जन्मही मैं जारी ॥ १ ॥ प्रयागवासी बनजारेकी लड़की
पर जा नजर पड़ी । उठा गोदमें नाम कमला जा रक्खा बिसी घड़ी ॥
दूजे बनजारे सुभद्रकी लड़के पर जा दृष्टि पड़ी । उठा गोदमें नाम
धनदेव रक्खा परधरिस करी ॥ ले लड़का अरु लड़की दोनों वे

अपने घर आए हैं । परवरिस पा बड़े हुये व्याहने योग्य पाए हैं ॥
 बनी दुलहिन कमला दुलहा धनदेव भाई हैं । मिला संयोग जुर
 ऐसा बहिन भाई बिबाहे हैं ॥ भोग भोगवें भाई बहिन मिलि
 विधना तेरी बलिहारी । अठारह नाते हुये हैं एक जन्मही में जारी
 ॥ २ ॥ समय पाय व्योपार हेत धनदेव गया उज्जैन नगर । देव
 योगसे भई निज मातासे दो चार नजर ॥ अनरथ ऐसा हुआ
 किया बिभचार जु दोनोंने मिलकर । भेद न जाना भोगने भोग
 लगे माता सुत जुर ॥ कई दिन तक वहां धनदेवको गणिका
 रमाया में । रोग संयोग जुग ऐसा वरुण एक लाल जाया है ।
 कहीं कमलाने यह सब भेद मुनिवर सेनी पाया है । पालना भूलता
 बालक वरुण जहँ पर बताया है । पहुंची सो उज्जैन नगर जहँ
 रचना देखी संसारी । अठारह नाते हुये हैं एक जन्मही में जारी
 ॥ ३ ॥ हाय हाय सो करै अरे विधना तूने कीनी क्वारी । होतै
 ही से मुझे क्यों नहिं तूने गर्दन मारी ॥ क्या कहके अब झुलाऊं
 इस वीरनको बता विधातारी । छै नाते हैं मेरे इस बालकसे सुन
 महतारी ॥ प्रथम तो पुत्र है मेरा जु मुझ भरतार से उपजा । तनुज
 धनदेव भाईका लगा जिससे भतीजा है ॥ मेरी तेरी एक है माता
 जगा इस रीतिसे भ्राता है । मेरे मालिकका लघु भाई लगा देवरका
 नाता है ॥ माता मेरीका तू देवर चचा इस तरह होता है । सौतके
 पुत्रका तू पुत्र इस नातेसे पोता है ॥ छहनातेकर विरन झुलाऊं
 कथा करी जाहर सारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्म ही में
 जारी ॥ ४ ॥ गणिका पतिसे हुआ पिता जिसलघु भाई मुझ चाचा
 है । चचा पिता सो सगा धनदेव लगा मो दादा है ॥ मेरा मालिक

हुआ धनदेव जिसने मुझे व्याहा है । मेरी तेरी है मात एक जिससे लगता तु भाया है ॥ वेश्या सौत है मैं हूँ धनदेव पुत्र मेरा है । मैं गणिकासुत बधू गनिकापति यों लगा ससुरा है ॥ कहे धनदेवसे नाते जताया मेद सारा है । सुना अहवाल घबराके शब्द हाहा पुकारा है ॥ देखा जगका हाल हुए कैसे कैसे अखर जकारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही मैं जारी ॥ ५ ॥ प्रथम पैदा किया मुझको इस नाते महतारी हैं । मेरे भाईकी स्त्री है जिस करके मुझ भावी है । पिता मुझ धनदेव है जिसकी माता तू दादी हैं ॥ सौत भी है वह जु मेरे मालिककी प्रिय प्यारी हैं ॥ सौत पुत्र बधू गणिका सो मेरी भी बधू जाहिर । मैं उसके पुत्रकी स्त्री लगी मेरी सासू सरासर । कहे नाते अठारह अंतमें एक सुगुरु सीख है । छुटा जगजालसे यहां कर्म शत्रुका बड़ा डर है । कुंदन ऐसे अनर्थ माया विधना जगमें विस्तारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्म ही मैं जारी ॥ ६ ॥ * इति *

(२६) अठारह नाते की कथा

मालवदेश उज्जयनीविषे राजा विश्वसैन तहां सुदक्ष नाम श्रेष्ठी वसे सो सोलह कोटिको धनी, सो वसन्ततिलका नाम वेश्यापर आशक्त होय ताहि अने घरमें राखी, सो गर्भवती भई, जब रोगसहित देह भई, तब घरमें से काढ़ि दई बहुरि वसन्ततिलका दुखी हो कर अने घर आई सो उसके गर्भमें एक पुत्र और एक पुत्री साथही जुगल उत्पन्न होने के कारण खेद विम्वन हुई

तब क्रोधित हो कर तिन दोऊ बालकनको जुदे २ कम्बलमें लपेटि पुत्रीको तो दक्षिण द्वारपर डाली सो प्रयागनिवासी बनजारे ने लेकर अपनी स्त्रीको सौंपा कमलानाम धरा, अरु पुत्रको उत्तर द्वारपर डाला सो साकेतपुरेके एक सुभद्र बनजारेने अपनी स्त्री सुव्रताको दिया और धनदेव नाम धरा बहुरि पूर्वोपार्जित कर्मके वशतैं धनदेव और कमलाके साथ विवाह हुआ स्त्री भरतार हुए, पाछे धनदेव व्यापार करने वास्ते उज्जयनी नगरो गया तहां बसन्ततिलका वेश्यासों लुब्ध भया तब ताके संयोगतैं बसन्ततिलकाके पुत्र भया वरुण नाम धरा, उधर एक दिन कमला ने निमित्तज्ञानो मुनिसे इसकी कुशल बार्ता पूछी सो मुनिने पूर्वभवसों लेकर वर्तमान तक सकल वृत्तान्त कहा ।

इनका पूर्वभव वर्णन ।

इसी उज्जयनी नगरोविषै सोमशर्मा नाम ब्राह्मण ताक काश्यपो नाम स्त्री तिनकें अग्निभूत सोमभूत नामके दोय पुत्रसो दोनों कहीं तैं पढ़ कर आवैं थे, मार्गमें जिनदत्तमुनिको ताकों माता जो जिनमती नाम अर्जिकाकू' शरीर समाधान पूछता देखा और जिनमद्रनामा मुनिकों सुमद्रानामा अर्जिका पुत्रकी स्त्री थी सो शरीर समाधान पूछती देखी तहां दोनों भाई ने हास्य करी कि तरुणकें तौ वृद्धस्त्री और वृद्धकें तरुणी स्त्री, विधाता ने अच्छी विपरीति रचना करी सो हांस्यके पापतैं सोमशर्मा तौ बसन्त-तिलका वेश्या हुई बहुरि अग्निभूत दोनो भाई मरि करि बसन्त-तिलकाके पुत्र पुत्री जुगल हुये तिनने कमला अरु धनदेव नाम

पाये बहुरि काश्यपी ब्राह्मणीका जीव धनदेवके संयोग तै वरुण नाम पुत्र भया इस प्रकार पूर्वभवका उज्जयनी नगरीविषै सकल वृत्तान्त सुनने से कमला को पहिले जन्म का जातीस्मरण हुआ तब वह बसन्ततिलकाके घर गई तहां वरुण पालनेमें झूठे था सो ताको कहती भई कि हे बालक ! तेरे साथ मेरे छे नाते हैं सो सुन

१ प्रथम तो मेरा भरतार जो धनदेव ताके संयोगतै तू पैदा भया सो मेरा भी (सौतेला) पुत्र है—२ दूजे धनदेव मेरा भाई है ताका तू पुत्र तातै मेरा भतीजा भी है ।—३ तीजे तेरी माता बसन्ततिलका सो ही मेरी माता है तिस तै सहोदर भी है—४ चौथे तू मेरे भरतार धनदेवका छोटा भाई तिसकारण मेरा देवर भी है—५ पांचवें धनदेव मेरी माता बसन्ततिलकाका भरतार है तातै धनदेव मेरा पिता भया ताका तू छोटा भाई तातै मेरा चाचा भी है—६ छठयें मैं बसन्ततिलकाकी सौतिन तातै धनदेव मेरा पुत्र ताका तू पुत्र तातै तू मेरा पोता भी है ।

इस प्रकार वरुणके साथ छह नाते कहतो हती सो बसन्त-तिलका तहां आई और कमलाको बोली कि तू कौन है सो मेरे पुत्रसों इस प्रकार छे नाते सुनावै है ? तब कमला बोली तेरे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुन—

१ प्रथम तो तू मेरी माता है क्योंकि धनदेवके साथ तेरे ही उदरसे युगल उपजी हूं—२ दूजे धनदेव मेरा भाई ताकी तू ली तातै मेरी भौजाई भी है—तीजे तू मेरी माता ताका भर्तार धनदेव मेरा पिता भया ताकी तू माता तातै मेरी दादी भी है—४ चौथे मेरा भरतार धनदेव ताको तू ली तातै मेरी सौतिन

भी है—५ पांचवें धनदेव तेरा पुत्र सो मेरा भी पुत्र ताको तू खो तातैं मेरी पुत्रबधू भी है—६ छठे मैं धनदेवकी खो तू धनदेवकी माता सो मेरी सासू भी है ।—इस प्रकार वेश्या छे नाते सुनकर चित्तमें बिचारने लगी त्यों ही तहां धनदेव आया ताकों देखि कमला बोली कि तुम्हारे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुनो—१ प्रथम तो तू और मैं इसी वेश्याके उदर सों जुगल छपजे सो मेरा भाई है—२ दूजे तेरा मेरा विवाह भया सो मेरा पति भी है—३ तीजे बसन्ततिलका मेरी माता ताका तू भरतार तातैं मेरा पिता भी है—४ चौथे बरुण तेरा छोटा भाई सो मेरा काका भया ताका तू पिता सो काकाका पिता सो मेरा दादा भी भया—५ पांचवें मैं बसन्ततिलकाकी सौति अरु तू मेरा सौतिनि पुत्र तातैं तू मेरा भी पुत्र है—६ छठे तू मेरा भरतार तातैं तेरी माता बसन्ततिलका मेरी सासु भई और सासु के तुम भरतार तातैं मेरे ससुर भी भये ।

इस प्रकार एक ही जन्ममें इन प्राणियोंके परस्पर अठारह नाते भये ताको उदाहरण (दृष्टांत) कहा कि इस भांति इस संसार की विचित्र विडंबना है इसमें कुछ सन्देह नहीं ।

इस प्रकार अठारह नातेका व्योरा समाप्त ।

(३०) चौबीस तोर्थकरोंके चिन्ह ।

१ ऋषभनाथके बैल २ अजित नाथके हांथी ३ संभवनाथके घोड़ा ४ अभिनन्दन नाथके बन्दर ५ सुमति नाथके चकवा ६ पद्म प्रभके कमल ७ सुपार्श्वनाथके सांघिया ८ चन्द्रप्रभके चन्द्रमा ९ पुष्पदन्तके नाकू १० शीतलनाथके कल्पवृक्ष ११ श्रेयांसनाथ

के गेंडा १२ बांसुपूज्यके भेंसा १३ विमलनाथके सुअर १४ अनंत
नाथके सेहो १५ धर्मनाथके बज्रदण्ड १६ शान्तिनाथके हिरण
१७ कुंथनाथके बकरा १८ अरहनाथके मच्छो १९ मल्लिनाथके
कलश २० मुनिसुव्रतनाथके कछवा २१ नमिनाथके कमल २२
नेमिनाथके शंख २३ पार्श्वनाथके सर्प २४ महावीरके सिंह ।

(३१) बारह चक्रवर्ती ।

भरतचक्रो, २ सगरचक्रो, ३ मघवाचक्रो ४ सनत्कुमारचक्रो
५ शान्तिनाथचक्रो (तीर्थंकर), ६ कुन्थनाथचक्रो, (तीर्थंकर), ७
अरनाथकी (तीर्थंकर), ८ सम्भूमचक्रो, ९ पदमचक्रो वा महापद्म
१० हरिवेणचक्रो, ११ जयचक्रो, १२ ब्रह्मदत्तचक्रो ।

(३२) नव नारायण ।

१ त्रिपृष्ठ, २ द्विपृष्ठ, ३ स्वयंभू, ४ पुरुषोत्तम, ५ पुरुषसिंह,
६ पुण्डरीक, ७ दत्त ८ लक्ष्मण, ९ कृष्ण ।

(३३) नव प्रतिनारायण ।

१ अश्वघ्रीव, २ तारक, ३ मेरू, ४ मधु (मधुकैटभ) ५
निशुंभ, ६ बली, ७ प्रह्लाद, ८ रावण, ९ जरासंध ।

(३४) बलभद्र

१ अचल, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ ५ सुदर्शन, ६ आनंद,
७ नंदन (नंद), ८ पद्म (रामचन्द्र), ९ राम (बलभद्र) ।

(३५) नव नारद ।

१ भीम, २ महाभीम, ३ रुद्र, ४ महारुद्र, ५ काल, ६ महा-
काल ७ दुर्मुख, ८ नरकमुख, ९ अधोमुख ।

[३६] ग्यारह रुद्र ।

१ भीमबली २ जितशत्रु ३ रुद्र ४ विश्वानल ५ सुप्रतिष्ठ ६ अचल
७ पुण्डरीक ८ अजितधर, ९ जितनाभि, १० पीठ, ११ सात्यकी

(३७) चौबीस कामदेव ।

१ बाहुबली, २ अमिततेज, ३ श्रीधर ४ दशभद्र, ५ प्रसेनजित्,
६ चंद्रवर्ण, ७ अग्निमुक्ति, ८ सनत्कुमार (चक्रवर्ती) ९ बत्सराज,
१० कनकप्रभ, ११ सेधवर्ण, १२ शान्तिनाथ (तीर्थंकर), १३ कुंथु
नाथ (तीर्थंकर), १५ विजयराज, १६ श्रीचंद्र, १७ राजा नल, १८
हनुमान्, १९ बलराजा, २० वसुदेव, २१ प्रद्युम्न, २२ नागकुमार,
२३ श्रीपाल, २४ जंबूस्वामी ।

[३८] चौदह कुलकर

१ प्रतिश्रुति, २ सन्मति, ३ क्षेमंकर, ४ क्षेमंधर, ५ सीमंकर,
६ सीमंधर, ७ विमलवाहन, ८ चक्षुष्मान् ९ यशस्वी, १० अमि-
चंद्र, ११ कंदाम्ब, १२ मरुदेव, १३ प्रसेनजित् १४ नाभिराजा ।

(३९) बारह प्रसिद्ध पुरुष

१ नाभि, २ श्रेयांस, ३ बाहुबली, ४ भरत, ५ रामचन्द्र, ६

नोट—तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, प्रतिनारायण वलभद्र यह चोखट
बलाका पुरुष कहाते हैं तथा नारद, रुद्र, कामदेव, कुलकर, और तीर्थंकरोंके
मातापिता १६९ पुरुष पुरुष कहाते हैं ।

हनुमान्, ७ सीता, ८ रावण, ९ कृष्ण, १० महादेव, ११ भीम,
१२ पार्श्वनाथ ।

(४०) विदेहक्षेत्रके २० विद्यमान तीर्थंकर ।

१ सीमन्धर, २ युगमंधर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ सुजात, ६
स्वयंप्रभ, ७ वृषभानन, ८ अतन्तवीर्य, ९ सूरप्रभ, १० विशाल-
कीर्ति, ११ बज्रधर, १२ चंद्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ भुजंगम, १५
ईश्वर, १६ नेमप्रभ (नमि), १७ वोरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयश,
२० अजितवीर्य ।

(४१) भूतकालकी चौबीसी

१ श्रीनिर्वाण, २ सागर, ३ महासिंधु, ४ विमलप्रभ, ५ श्रोधर
६ सुदत्त, ७ अमलप्रभ, ८ उद्धर, ९ अंगिर, १० सन्मति, ११
सिंधुनाथ, १२ कुसुमांजलि, १३ शिवगण, १४ उत्साह, १५ ज्ञाने-
श्वर, १६ परमेश्वर, १७ विमलेश्वर, १८ यशोधर, १९ कृष्णमति, २०
ज्ञानमति, २१ शुद्धमति, २२ श्रीभद्र, २३ अतिक्रान्त, २४ शांति ।

४२ भविष्यकी चौबीसी ।

१ श्रीमहाप्रभ, २ सुरदेव, ३ सुपार्श्व, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वा-
त्मभू, ६ श्रीदेव, ७ कुलपुत्रदेव, ८ उदकदेव, ९ प्रोष्ठिलदेव, १०
जयकीर्ति, ११ मुनिसुव्रत, १२ अरह (अमर) १३ निष्पाप, १४
निःकषाय, १५ विपुल, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्त, १८ समाधिगुप्त,
१९ स्वयंभू, २० अनिवृत्त, २१ जयनाथ, २२ श्रीविमल, २३ देव-
पाल, २४ अनन्तवीर्य ।

(४३) गुणस्थान

१ मिथ्यात्व, २ सासादन, ३ मिश्र, ४ अविरत सम्यक्त्व, ५ देशव्रत, ६ प्रमत्त, ७ अप्रमत्त, ८ अपूर्वकरण, ९ अनिवृत्तिकरण, १० सूक्ष्मसांपराय, ११ उपशांतकषाय वा उपशांतमोह, १२ क्षीण कषाय वा क्षीणमोह, १३ संयोगकेवली, १४ अयोगकेवली ।

(४४) शीलहकारणा भावना

१ दर्शनविशुद्धि, २ विनयसंपन्नता, ३ शीलव्रतेष्वनतिवार, ४ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, ५ संवेग, ६ शक्तिस्त्याग, ७ तप ८ साधु-समाधि, ९ वेद्यावृत्त्य, १० अर्हद्भक्ति, ११ आचार्यभक्ति, १२ बहुश्रुतभक्ति, १३ प्रवचनभक्ति, १४ आवश्यकपरिहाणी, १५ मा - प्रभावना, १६ प्रवचनवात्सल्य ।

(४५) श्रावकोंके उत्तरगुण ।

१ लज्जावंत, २ दयावंत, ३ प्रसन्नता, ४ प्रतीतिवन्त, ५ पर-दोषाच्छादन, ६ परोपकारी, ७ सौम्यदृष्टि, ८ गुणग्राही, ९ मिष्ट-वादी, १० दीर्घचिचारी, ११ दानवंत, १२ शीलवंत, १३ कृतज्ञ, १४ तत्त्वज्ञ, १५ धर्मज्ञ, १६ मिथ्यात्व रहित, १७ संतोषवंत १८ स्याद्वाद भाषी, १९ अभक्ष्यत्यागी, २० षट्कमंप्रवीण २१ ।

(४६) श्रावककी ५३ क्रिया ।

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १ समताभाव, ११ प्रतिमा, ४ दान, ३ रत्नत्रय, जल छाणन क्रिया, १ रात्रिभोजन त्याग और दिनमें अग्नादिक भोजन शोधकर खाना अर्थात् छाननी कर देकर भालकर खाना ।

श्रावकके ८ मूलगुण—५ उदंबर । ३ मकार ।

१२ व्रत—५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत ।

५ अगुणव्रत—१ अहिंसा अणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ परस्त्री त्याग अणुव्रत, ४ (अचौर्य) चोरी त्याग अणुव्रत, ५ परिग्रहप्रमाण अणुव्रत ।

३ गुणव्रत—१ दिगव्रत २ देशव्रत, ३ अनर्थदंडत्याग ।

४ शिक्षाव्रत—३ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अतिथि-संविभाग, भोगोपभोगपरिमाण ।

१२ तप

आचार्यके ३६ गुणोंमें लिखे हैं । इनके भी वही नाम । श्रावकोंके अणुव्रत कम परीषहवाले ।

११ प्रतिमा—दर्शनप्रतिमा, व्रत, सामायिक, प्रोषधोपवास, सवित्तत्याग, रात्रिभुक्ति त्याग, ब्रह्मचर्य, आरम्भ त्याग, परिग्रहत्याग, अनुमति, त्याग, उद्दिष्ट त्याग ।

चारदान-आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान, अभयदान

३-रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र्य ।

दातारके २१ गुण-८ नवधाभक्ति, ७ गुण ५ आभूषण । यह २१ गुण दातारके हैं अर्थात् दान देनेवाले दातामें यह २१ गुण होने चाहिये ।

नवधाभक्ति-पात्रको देख बुलाना, उच्चासनपर बैठाना,

चरण घोना, चरणोदक मस्तकपर चढ़ाना, पूजा करना, मन शुद्ध रखना, विनयरूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना शुद्ध आहार देना ।

दातारके सात गुण—श्रद्धावान्, शक्तिवान्, अलोभी, दयावान्, भक्तिवान्, क्षमावान् और विवेकवान् ।

दाताके पांच भूषण—आनन्दपूर्वक देवे, आदरपूर्वक देवे प्रिय बचन कहकर देवे, निर्मल भाव रखे, जन्म सफल माने ।

दाताके पांच दूषण—बिलम्बसे देवे, विमुख होकर देवे, दुर्वचन कहकर देवे, निरादर करके देवे, देकर पछतावे ।

(४७) ग्यारह प्रतिमाओंका सामान्य स्वरूप ।

प्रणम पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार, श्रावकप्रतिमा एक दश, कहुं भविजन हितकार ॥ १ ॥ सर्वैया ३१ ॥ श्रद्धाकर व्रत पाले सामयिक दोष टालै, पौसौ मांठ सचित कौं त्यागैलौं घटायकै रात्रिभुक्त परिहरै, ब्रह्मचर्य नित धरै, आरम्भको त्याग करै मन बच कायकै । परिग्रह काज टारै अघ अनुमत छारै, खनिमित कृत टारै असत बनायकै । सब एकादश येह प्रतिमा जु शर्म गेह, धारै देशव्रती उर हरष बढ़ायकै ।

दर्शन प्रतिमा

अष्ट मूलगुण संग्रह करै, विशुन अभक्ष्य सबे परिहरै ॥

युत अष्टांग शुद्ध सम्यक्त, धरहिं प्रतिज्ञा दरशन रक्त ॥ १ ॥

व्रत प्रतिमा स्वरूप

अणुव्रतपन अतिचार विहीन, धारह जो पुन गुणव्रत तीन,
शिक्षाव्रत संजुत जो सोय; व्रत प्रतिमा धर आधक होय ॥२॥

सामायक प्रतिमा स्वरूप- गीतका छंद-सब जियन में समभाव धर शुभ भावना संयममहीं, दुरध्यान आरत रौद्र तज कर त्रिविध काल प्रमाणहीं । परमेष्ठि पन जिन वचन निज वृष बिम्ब जिन जिनग्रह तनी, बंदन त्रिकाल करह सुजानहु भव्य सामायक धनी ॥ ३ ॥

पोषध प्रतिमा स्वरूप- (पद्धरी छंद —
वर मध्यम जघन्य त्रिविध धरेय, पोषध विधि युत निजबल प्रमेय, प्रति मास चार पवो मभार, जानहु सो पोषध नियम धार ॥ ४ ॥

सचित्तत्याग प्रतिमा स्वरूप- चौपाई—
जो परि हरै हरीं सब चीज, पत्र प्रवाल-कंद फल-बीज,
अरु अप्रासुक जल भी सोय, सचित्त त्याग प्रतिमा धर होय
रात्रिभुक्त्याग प्रतिमा स्वरूप- अडिह छंद—
मन बच तन कृत कारित अनुमोदै सही, नवविध मैथुन दिवस माहिं जो बर्ज हो । अरु चतुविध आहार निशा माहो तजै, रात्रिभुक्ति परित्याग प्रतिमा सो सजै ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्याप्रतिमा स्वरूप- चौपाई—
पूर्व उक्त मैथुन नव भेद, सब प्रकार तजै निरखेय,
नारि कथादिक भी परिहरे ब्रह्मचर्य प्रतिमा सो धरे ॥ ७ ॥

आरंभ त्याग प्रतिमा स्वरूप- चौपाई—
जो कछु अल्प बहुत अघ काज, ग्रह संबंधी सो सब त्याज,
निरारम्भ वहे वृष रत रहै, सो जिय अष्टमो प्रतिमा वहै ॥ ८ ॥

परिग्रहत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई

बख्ख मात्र रख परिग्रह अन्य, त्याग करै जो व्रतसंपन्न,
तापे पुनः मूर्छा परहरै, नवमी प्रतिमा सो भवि धरै ॥८॥

अनुमतत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई

जो प्रमाण अघमय उपदेश, देय नहीं परको लवलेस, ॥
अरु तसु अनुमोदन भी तजे, सोही दशमी प्रतिमा सजे ॥१०॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमास्वरूप—चौपाई—

ग्यारम थान भेद है दोय, इक छुल्लक इक पेलक सोय,
खण्ड बख्खधर प्रथम सुजान, युन कोपीनहि दुतिय प्रछान ॥११॥
ए ग्रह त्याग मुनिन ढि'ग रहै, वा मठ, मन्दिरमें निबसहै,
उत्तर उदण्ड उचित आहार, करहि शुद्ध अंत्रायन बार ॥
दोहा—इम सब प्रतिमा एकदश दौल देशव्रत यान,

ग्रहै अनुक्रम मूल सह, पालै भवि सुखदान ॥

(४८) श्रावकोंके १७ नियम ।

१ भोजन, २ अचित्त वस्तु, ३ गृह, ४ संग्राम, ५ दिशागमन, ६
औषधिविलेपन, ७ तांबूल, ८ पुष्पसुगन्ध, ९ नाच, १० गीतश्रवण
११ स्नान, १२ ब्रह्मचर्य, १३ आभूषण, १४ वस्त्र १५ शय्या, १६
औषध खानी, १७ घोड़ा बैलादिककी सवारी । ॥

⊗ नोट—प्रतिदिन जिन २ चीजोंकी जरूरत हो उसका प्रमाद करे कि आज
यह करूंगा ; शेषका प्रतिदिन त्याग करे ।

(४६) सात व्यसनका त्याग ।

जूवा, मांस, मदिरा, गणिका, शिकार चोरी परस्त्री ।

(५०) बाईस अभक्ष्यका त्याग ।

पांच उदम्बर—१ उदम्बर (गुलर), २ कटूम्बर, ३ बड़फल,
४ पीपलफल, ५ पाकर फल (पिलखन फल) ।

तीन मकार—१ मांस, २ मधु, ३ मदिरा ।

शेष १४ अभक्ष्य—ओला, विदल, रात्रि भोजन,
बहुबीजा, बैंगन, कन्दमूल, बगैर जाना फल, अचार, बिष, माटी,
बरफ, तुच्छ फल, चलित रस, माखन ।

(५१) श्रावकके षट् कर्म ।

देव पूजा, गुरुसेवा, स्वध्याय, संयम, तप, दान यह छह
कर्म प्रत्येक श्रावकको करना चाहिये ।

(५२) दशलक्षणा धर्म ।

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग
आकिंचन, ब्रह्मचर्य ।

(५३) लघु अभिषेक पाठ ।

श्रीमज्जिनैन्द्रमभिवन्धजगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।

श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृते कहेतु जैनैर्द्रव्यव्यविधिरेष महाभ्यधायि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर जिनचरणोंमें पुष्पांजलि छोड़नी चाहिये)

श्रीमन्मन्दरसुन्दरे शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षतैः

पीठेमुत्तिकरंनिधाय, रचितं त्वपादपमलजः

इन्द्रोऽहंनिजभूषणार्थकमिदं यद्वोपवीतं दधे ।

मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥

(इस श्लोकको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीत तथा नाना प्रकारके सुन्दर आभूषण धारण करना चाहिये ।)

सौगन्धसंगतमधुव्रतहंकृतेन, सौवर्ण्यमानमिव गंध्रमनिंद्यमादौ ।
आरोपयामि बिबुधेश्वरवृन्दवन्द्य पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानां
इसे पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको अङ्गमें चन्दनके नवतिलक करना चाहिये ।

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदपयुता
विवोधाः । संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः
स्नपनस्य भूमिम् ॥

(इसको पढ़कर अभिषेकके लिये भूमिका प्रज्ञालन करे)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुखरैर्येदने-
कवारम् । अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभव
तापहारि ॥

(जिस सिंहासन पर विराजमान करके अभिषेक करना हो उसका प्रज्ञालन करे
श्रीशारदासुमुखनिर्गतवाजवर्णं श्रीमङ्गलोकवरसर्वजनस्य नित्यं ।
श्रीमत्स्वयं क्षयतयस्य विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णं लिखितं जिन-
भद्रपीठे ।

(इस श्लोकको पढ़कर पीठपर श्रीकार लिखना चाहिये ।)

इन्द्राग्निदंडधरनैऋतपाशपाणि वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।
आगत्य यूयमिहसानुचराः सचिन्हाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं
जिनपाभिषेके ॥

(श्रीचै लिखे संज्ञोंको पढ़कर क्रमसे दश दिक्पालोंके लिये अर्घ्य चढ़ाओ)

१ ॐ आँ कौँ ह्रीँ इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।



श्रीमुनि शान्तिसागरजी

श्रीमुनि सूर्यसागरजी

श्रीमुनि अनंतसागरजी

इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं । अ० ।

दोहा—स्वपर प्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसे ।

घर धूप तासु सुगन्धिताकरि सकल परिमलता हसे ॥

इह भांति धूप चढ़ाय नित भवज्वलनमांहीं नहिं पचूं । अ० ।

दोहा—अग्निमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलोचन ।

जासों पूजों परम पद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं ॥

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं ।

मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फलगुणसार हैं ॥

सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन, परम अम्रतरस सचूं ॥ अ० ॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण-रसलीन ।

जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।

घर धूप निरमल फल विविध, बहु जनमके पातक हरूं ॥

इहभांति अर्घ चढ़ाय नित भवि, करत शिवपङ्कति मचूं । अ० ।

दोहा—वसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मन कीन ।

जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ अक्षमाला

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीज रतन करतार ।

भिन्न भिन्न कहूँ आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥

चक्रकर्मकी त्रैलोक्य प्रकृति नाशि । जीते अष्टादशदोषराशि ।

जे परम सुगुण हैं अनंत धीर । कहवतकेछयालिस गुण गँभोर ॥ २ ॥

शुभ समवशरणशोभा अपार ! शत इन्द्र नमत कर शीस धार

देवाधिदेव अरहंत देव । बन्दो मनवचन करि सु सेव ॥ ३ ॥

जिनकी धुनि है ओंकाररूप । निरक्षरमय महिमा अनूप ।

दश अष्ट महा भाषा समेत । लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥

सो स्यादवादमय सप्त भङ्ग । गणधर गूँथे बारह सुअङ्ग ।

रविशशि न हरै सो तम हराय । सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ।

गुरु आचारज उवभाय साधु । तन नगन ^तस्त्रय निधि अगाध ।

संसारदेह बैराग धार । निरवांक्षि तपै शिवपद निहार ॥ ६ ॥

गुण छत्तिस पचिस आठवीस । भवतारन तरन जिहाज ईस

गुरुकी महिमा वरनी न जाय । गुरु नाम जपों मन बचनकाय ॥ ७ ॥

सोरठा—बीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।

‘द्यानत’ सरधावान, अजर अमर पद भोगबै ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्बपामीति स्वाहा ।

(५६) वासतीर्थंकर पूजा भाषा ।

द्वीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस ।

तिन सबकी पूजा करूँ मनवच तन धरि शीस ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरा ! अत्र अवतर अतवर ।

तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

इन्द्रफणीन्द्रनरेन्द्रबन्ध, पद निर्मलधारी । शोमनीक संसार,

सारगुण हैं अविकारी ।

क्षीरोदधिसम नीरसों (हो) पूजों तृषा निवार ॥

सीमन्धर जिन आदि दे, बीस विदेह मँभार ॥

श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जिहाज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं ॥

(इस पूजामें यदि बीस पुञ्ज करना हो तो इस प्रकार मन्त्र बोलना चाहिये ।)

ॐ ह्रीं सीमन्धरगुग्मन्धर-बाहु-सुबाहु-सुजात-स्वयंप्रभ-ऋषभा-
नन अनन्तवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-बज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-
भुजगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशाऽजितवीर्य्येति-
विंशतिविद्यमानतीर्थकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं ॥ १ ॥

तीन लोकके जीव, पाप आताप सताये । तिनकों साता दाता,
शीतल वचन सुहाये ॥ बावन चन्दनसों जजूं (३), भ्रमनतपन
निरवार । सीमं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी ।

तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जग नामी ॥

तंदुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार । सीमं० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥

भविक-सरोज-विकाश, निंदितमहर रविसे हो ।

जतिश्रावकआचार कथनको, तुम्ही बड़ेहो ॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदन प्रहार । सीमं० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनायपुष्पं ॥

कामनाग विषधाम,—नाशको गरुड़ कहे हो ।

क्षुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥
 नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख घिडार । सीमं० ॥ ५ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनायनैवेद्यं ॥
 उद्यम होन न देत, सब जगमाहिं भस्यो हैं ।
 मोह महातम घोर, नाश परकाश कस्यो हैं ॥
 पूजों दीप प्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनायनैवेद्यं
 कर्म आठ सब काठ, भार विस्तार निहारा ।
 ध्यान अगनि कर प्रगट, सरब कीनों निरवारा ॥
 धूप अनूपम खेबतें (हो), दुःख जलै निरधार । सीमं० ॥ ७ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय, धूपनि० ॥
 मिथ्यावादी दुष्ट, लोभहंकार भरे हैं ।
 सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं ।
 फल अति उत्तमसों जजों (हो), वांछित फल दातार सी० ॥ ८ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं ॥
 जल फल आठों दर्ब, अरघ कर प्रीत धरी हैं ।
 गणधर इन्द्रनिहंतै, थुति पूरी न करी हैं ।
 'द्यानत' सेवक जानके (हो), जगतें लेहु निकार । सीमं० ॥ ९ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घनि०
 अथ जयमाला आरतो ।
 सोरठा-ज्ञानसुधाकर चन्द, भविकखेतहित मेघ हो ।
 भ्रमतमभान अमन्द, तिर्थकर बीसों नमों ॥ १ ॥
 सीमन्धर सीमन्धर स्वामी । जुगमन्धर जुगमन्धर नामी ।

(६३) सोलह कारण पूजा

अङ्गि—सोलहकारण भाय तीर्थकर जे भवे । हरषे इन्द्र अपार मेरुपे ले गये ॥ पूजा करि निज धन्य लख्यौ बहु चावसौ । हमहू षोडशकारण भावै भावसौ ॥१॥

ओं हीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणानि ! अत्रावतरअवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितोभव भव वषट् ।

चौपाई—कंचनभारी निरमल नीर । पूजौं जिनवर गुणगंभीर ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थकर पदपाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ॐ हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं ।

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥२॥

ॐ हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः चन्दनं० ।

तन्दुल घबल सुगन्ध अनूप, । पूजौं जिनवर तिहुँ जगभूप ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ३ ॥

ओं हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

फूल सुगन्ध मधुपगुंजार । पूजौं जिनवर जगदाधार ।

परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ४ ॥

ओं हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः कामवण विश्वंसनायपुष्पं॥

सदनेवज बहुविध पकवान । पूजौं श्रीजिनवर गुणखान

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यश्च धारोगविनाशनाय नैवेद्य

दीपकजोति तिमर छयकार । पूजूं श्रीजिन केवलधार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दोषं ॥

अगर कपूर गन्ध शुभ खेय । श्रीजिनवर आगे महकेय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार । पूजौं जिन बांछितदातार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ८ ॥

ओं ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताये फलं

जल फल आठों दरब चढ़ाय । 'द्यानत' वरत करो मनलाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।

पाप पुण्य सब नाशकै, ज्ञान भान परकास ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा ।

दर्शविशुद्ध धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥

विनय महा धरै जो प्राणी । शिवबनिताकी सखी बखानी ॥ २ ॥

शील सदा दिढ़ जो नर पालै । सो ओरनकी आपद टालै ॥

ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं । ताकै मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥

जो संवेगभाव विस्तारै । सुरगमुक्तिपद आप निहारै ॥

दान देय मन हरष विशेषे । इह भव जस परभवसुखदेखे ॥ ४ ॥

जो तप तपै खपै अभिलाषा । चुरै करमशिखर गुरु भाषा ॥
 साधुसमाधि सदा मन लावै । तिहुँ जगभोग भोगि शिव जावै ॥५॥
 निशादिन बयावृत्य करैया । सो निहचै भवनीर तिरैया ॥
 जो अरिहन्तभगति मन आनै । सो जन बिषय कषाय न जानै ॥६॥
 जो आचारजभगति करै हैं । सो निर्मल आचार धरै हैं ॥
 बहुश्रुतबन्तभगति जो करई । सो नर सम्पूरण श्रुत धरई ॥७॥
 प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानन्द दाता ॥
 पट् आवश्य काल जो साथै । सो ही रतनत्रय आराधै ८ ॥
 धरमप्रभाव करै जे ज्ञानो । तिन शिवमार्ग रीति पिछानो ॥
 बात्सलअङ्ग सदा जो ध्यावै । सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥ ९ ॥
 दोहा—एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।

देवइन्द्रनरवन्धपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥

ओं ह्रीं दशैनविशुद्धयादिषाडशकारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्बपामि ॥

{६४} अथ दशलक्षणधर्मपूजा ।

अडिल—उत्तम क्षिमा मारदव आरजव भाव हैं । सत्य शौच
 सज्जम तप त्याग उपाव हैं ॥ आकिञ्चन ब्रह्मवरज धरम दश सार
 हैं । चहुँ गतिदुखतैं काढ़ि मुक्त करतार हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतर अवतर ! संवौषट् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा—हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभ ।

भबआताप निवार, दश लच्छन पूजों सदा ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मां जल' निर्बपामि ॥ १ ॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा । भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामि ॥ २ ॥

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ ॥ भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान निर्वपामि ॥ ३ ॥

फूल अनेक प्रकार, महकै ऊरधलोक लों । भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

नेबज बिबिध प्रकार, उत्तम पटरससंजुतं ॥ भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि ॥

बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भवआ० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

अगर धूप विस्तार, फैले सब सुगन्धता ॥ भवआ० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

फलकी जाति अपार, घ्राण नयन मनमोहने ॥ भवआ० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

आठों दरब संभार 'द्यानत' अधिक उछाह सों ॥ भवआ० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायाध्यं निर्वपामि ॥ ९ ॥

अंग पूजा ।

सोरठा—पीडै दुष्ट अनेक, बांध मार बहुबिधि करै ।

धरिये क्षिमा चिवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीताङ्गन्द ।

उत्तम छिमा गहो रे माई । इहभव जस परभव सुखदाई ॥

गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥

कहि है अयानो वस्तु छीने, बांध मार बहुबिधि करे । घरतैं

निकारै तन विदारै, बैर जो न तहां धरै ॥ जे करम पूरब किये
छोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा । अति क्रोध अगनि बुझाय प्राणी,
साम्य जल ले सोयरा ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मान महाविषरूप करहिं नीचगति जगत में । कोमल सुधा
अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ॥ २ ॥ उत्तम माद्वेगुन मन माना ।
मान करनको कौन ठिकाना ॥ वस्यो निगोदमाहिं तैं आया ।
दमरी रुं'कन भाग विकाया ॥ रुं'कन विकाया भागबशतैं, देव
इकइन्द्री भया । उत्तम मुआ चण्डाल हूआ, भूप कीड़ोंमें गया ।
जीतव्य जोबन धनगुमान, चहा करे जलबुदबुदा । करि बिनय
बहुगुन बड़े जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥

ओं ह्रीं उत्तममाद्वेगधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना बसै । सरल सुभावो होय
ताके घर बहु सम्पदा ॥ ३ ॥ उत्तमआर्जव रीति बखानी । रंचक दगा
बहुत दुखदानी ॥ मनमें हो सो बचन उचरिये । बचन होय सो
तनसों करिये ॥ करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निमल आरसी
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अँगारसी ॥ नहिं लहै
लछमी अधिक छलकरि, करमबंध विसेखता । भय त्यागि दूध
बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ।

ओं ह्रीं उत्तमानेवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसों । शौच सदा निरदोष,
धरम बढ़ो संसारमें ॥ उत्तम शौच सर्थ जग जाना । लोभ पापको
बाध बखाना ॥ आसाफांस महा दुखदानी । सुख पावै सन्तोषी

इहभव विभवचाह दुखदानी । परभवभोग सहै मत प्रानी ॥
 प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ।
 परदोष ढकिये धरम डिगतेको सुधिर कर हरखिये ।
 चहुसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना ।

गुन आठसों गुन आठ लहिके, इहां फेर न आवना ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय
 पूर्णाख्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

(६८) ज्ञानपूजा ।

दोहा—पंचभैद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान ।

मोह तपन हर चन्द्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर । सगौषट्
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । नषट्
 सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।

सम्यकज्ञान विचार; आठ भेद पूजौं सदा ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

अछत अनुप निहार, दारिद नाशे सुख भरै । सम्यग्ज्ञा० ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरे मन शुचि करै । सम्यकज्ञा० ॥४॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

नेवज विविध प्रकार, लुधा हरै धिरता करै । सम्यकज्ञा० ॥५॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दीपज्योतितमहार, घटपट परकाशे महा । सम्यक्ज्ञा० ॥६॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥
घपघ्नानसुखकार, रोग विघ्न जड़ता हरै । सम्यक्ज्ञा० ॥७॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥
श्रीफल आदि विधार निहचै सुरशिवफल करै । सम्यक्ज्ञा० ॥८॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीमि स्वाहा० ॥८॥
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यक्ज्ञा० ॥९॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

अथ जयमाला

दोहा—आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार ।

संशय विभ्रम मोह विन, अष्टअङ्ग गुणकार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछन्द

सम्यक्ज्ञान रतन मन भाया । आगम तीजा नैन बताया ।

अक्षर शुद्ध अरथ पहिचानौ । अच्छर अरथ उभय संग जानौ ॥

जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।

तपरीति गहि बहु मान देकै, विनयगुन चित लाइये ॥

ए आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पन देखना ।

इस ज्ञानहीसों भरत सीम्हा, और सब पटपेखना ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

(६६) चारित्र पूजा ।

विषयरोग औषध महा, द्रवकषायजलधार ।

तीर्थकर जाकौं धरै, सम्यक्चारितसार ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संवो
षट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । उः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै भल छय करै ।

सम्यक्चारित्र सार, तेरहविधि पूजौ सदा ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामि० ।
जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यक्चा० ॥२॥ ओं
ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा । अछत
अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यक्चा० ॥३॥ ओं ह्रीं
त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा । पुहपसु
वास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यक्चा० ॥४॥ ओं ह्रीं त्रयो
दशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा । नेवज चिविध
प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै । सम्यक् ॥५॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यक्चा० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक् चारित्राय दीपं निर्वपामि० ।

धूप घान सुखकार, रोग विघन जड़ता हर । सम्यक्चा० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफलआदि विधार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यक्चा० ॥८॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु दीप धूप फल फूल चरु । सम्यक्चा० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

आप आप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार ।

स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥१॥

बौपाई मिश्रित गोता छंद ।

सम्यक्चारित रतन सँभालो । पांच पाप तजिकै व्रत पालो ।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै । नरभव सफल करहु तन छोजे ॥
छीजै सदा तनकों जतन यह एक संजम पालिये ।
बहु क्लयो नरकनिगोदमांहीं, कषायविषयनि टालिये ॥
शुभ करमजोग सुघाट आया पार हो दिन जात है ।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥ २ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधिसम्यक्चारित्र्याय महार्घ्य ।

अथ समुच्चय जयमाला ।

दोहा—सम्यक्दर्शन ज्ञान व्रत, इन बिन मुक्त न होय ।

अंध पंगु अरु आलसी, जुड़े जले दब लोय ॥ १ ॥

बौपाई १६ मात्रा ।

तापे ध्यान सुथिर बन आवे । ताके करम बंध कट जावे ॥
तासों शिवतिय प्रीति बढ़ावे । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥२॥
ताकों बहु गतिके दुख नाहीं । सो न परे भवसागरमांहीं ॥ जनम-
जरामृतु दोष मिटावे । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥३॥ सोई दश-
लच्छनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ॥ सो परमात्म पद
उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥४॥ सोई शक्रचक्र पदलेई ।
तीनलोकके सुख विलसेई ॥ सो रागादिक भाव बहावै । जो सम्य
करतनत्रय ध्यावै ॥५॥ सोई लोकालोक निहारे । परमानंददशा वि
सतारै ॥ आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥६॥
दोहा—एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कछो नहिं जाय ।

तीन भेद व्योहार सब, द्यानतको सुखदाय ॥७॥

ओं ह्रीं सम्यक्प्रज्ञत्रयाय महार्घ्य निर्वाणमीति स्वाहा ।

(७०) श्रीनन्दीश्वर पूजा ।

अडिह—सरब परबमें बड़ो अठाई परब है । नंदीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है ॥ हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना । पूजों जिनगृह प्रतिमा है हित आपना ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।
अत्र अवतर अवतर । संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

कंचनमणिमय भृगार, तीरथनीरभरा ।

तिहुं धार दयो निरवार, जामन मरन जरा ॥

नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करों ।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनदभाव धरों ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चासज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो (इतना मंत्र प्रत्येक अष्टकके अंतमें बोलना
चाहिये) जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्बपामोति स्वाहा ॥१॥

भवतपहर शोतलवास, सो चंदननाहीं ।

प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठाहीं ॥नंदी०॥

ओ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे भवाताप विनाशनाय चंदनं ॥२॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहे ॥

सब जीते अक्षसमाज; तुम सम अरुको हैं ॥ नंदी० ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥३॥

तुम कामबिनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं ।

छहिं शील लच्छमी एव, छूटें सुलनसौं ॥नंदी०॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं ॥ ४ ॥
 नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।
 चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नन्दी० ॥
 ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे क्षुधारोगविनाशनाय नेत्रेद्यं ॥ ५ ॥
 दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमांहिं लसै ॥
 टूट करमनकी राश, ज्ञानकणी दरसै ॥ नन्दी० ॥
 ओं ह्रीं श्री नदीश्वर द्वीपे मोहान्धकार विनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥
 कृष्णागरुधूपसुवास दशदिशिनारि बरै ।
 अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ॥ नन्दी० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनदीश्वरद्वीपे अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥
 बहुबिधफल ले तिहुंकाल, आनंद राचत हैं ।
 तुम शिवफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥ नन्दी० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥
 यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों ।
 'द्यानत' कीनो, शिवखेत, भूप समरपत हों ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनदीश्वरद्वीपे अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥ ९ ॥
 अथ जयमाला ।

दोहा—कार्तिक फागुन साढ़के, अंत आठ दिनमाहि ।

नदीसुर सुर जात हैं, हम पूजे इह ठाहिं ॥ १ ॥
 एकसौ त्रैसठ कोड़ि जोजनमहा । लाख चौरासिया एक दिशमें
 लहा ॥ आठमों द्वीपे नदीश्वरं भास्वरं । भौन बावन् प्रतिमा
 नमो सुखकरं ॥ २ ॥ चारदिशि चार अंजनगिरी राजहीं । सहस्र
 चौरासिया एकदिश छाजहीं । ढोलसम गोल ऊपर तले सुंदरं ।

भौन० ॥ ३ ॥ एक एक चार दिशि चार शुभ बावरी । एक एक लाख जोजन अमल जलभरी ॥ चहुंदिशा चार वन लाखजोजन वरं ॥ भौन० ॥ ४ ॥ सोल वापीनमधि सोल गिरि दधिमुख । सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ॥ बावरीकोन दो माहि दो रतिकरं । भौन० ॥ ५ ॥ शैल बत्तोस एक सहस जोजन कहे । चार सोलै मिले सर्व बावन लहे ॥ एक एक सीसपर एक जिन-मंदिरं । भौन० ॥ ६ ॥ बिंब अठ एकसौ रतनमई सोह ही । देव-देवी सरव नयनमन मोह ही ॥ पांचसै धनुष तन पद्मआसनपरं । भौन० ॥ ७ ॥ लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं । स्यामरंग भोंह सिर केश छबि देत हैं ॥ वचन बोलत मनो हंसत कालुष-हरं ॥ भौन० ८ ॥ कोटशशि भानदुति तेज छिप जात है । महा-वैराग परिणाम ठहरात है ॥ बयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक-धरं । भौन० ॥ ९ ॥

सोरठा—नंदीश्वर जिनधाम, प्रतिमा महिमाको कहे ॥

‘द्यानत’ लोनों नाम, यही भगति सब सुख करे ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रोनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे दिपञ्चाशज्जि-
नालयस्यजिनप्रमिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(७१) निर्वर्णाक्षेत्रपूजा ।

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।

सिद्ध भूमि निशदीस, मनबचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अयतरत
अवतरत । संवौषट् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत, ठः ठः अत्र मम सन्नि-
हितानि भवत । वषट् ।

गीता छंद ।

शुचि क्षीर दधि सप्त नीर निरमल, कनकभारीमें भरौ ।

संसारपार उतार स्वामी, जोरकर विनती करौ ॥

सम्मेदगिरि गिरनार च'पा, पावापुरी कैलासकों

पूजों सदा चौबीसजिननिर्वाण भूमिनिवासकों ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं ॥ १ ॥

केशर कपूर सुगंध चंदन सलिल शीतलं विस्तरौ ।

भवपापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं ॥ २ ॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनंदधरि तरौ ।

औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान्

शुभफूलरास सुवासवासित, खेद सब मनके हरौ ।

दुखधाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं ॥ ४ ॥

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौ ।

यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहिं डरौ ।

संशयविमोहविभरम—तमहर, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं ॥ ६ ॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौ ।

सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं ॥७॥

बहु फल मँगाय चढाय उत्तम, चारगतिसों निरवरों ।

निहचै मुक्तफल देहु मौकों, जोर कर विनती करों ॥सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं ॥८॥

जल गंध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरों ।

‘द्यानत’ करो निरभय जगतते, जोर कर विनती करों ॥सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ॥९॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—श्रीचौबीस जिनेश, गिरिकैलाशादिक नमों ।

तीरथ महाप्रदेश महापुरुष निरवाणतें ॥१॥

चौपाई १६ मात्रा ।

नमों रिपभ कैलासपहारं । नेमिनाथ गिरनार निहारं ॥ वासु-
पूज्य चंपापुर बंदों । सनमति पावापुर अभिनंदों ॥२॥ बंदों अजित
अजितपददाता । बंदौ संभवभवदुखघाता ॥ बंदों अभिनंदन गण
नायक । बंदो सुमति सुमतिके दायक ॥३॥ बंदों पदम मुक्तप-
दमाकर । बंदों सुपार्श आशपासाहर ॥ बंदों चंदाप्रभ प्रभुचंदा,
बंदों सुविधि सुविधि निधि कंदा ॥४॥ बंदो शीतल अघ तप
शीतल । बंदों श्रियांस श्रियांस महीतल ॥ बंदों विमल विमल
उपयोगी । बंदों अनंत अनंत सुखभोगी ॥५॥ बंदों धर्म धर्म
बिसतारा । बंदौ शांति शांतिमनधारा ॥ बंदों कुंथु कुंथु रख-
वाल । बंदों अरि अरहर गुणमालं ॥ ६ ॥ बंदों मल्लि काममल
चूरन । बंदों मुनिसुव्रतव्रतपूरन । बंदौ नमि जिन नमित सुरा
सुर । बंदौ पार्श्व पास भ्रमजगहर ॥७॥ बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर

सिखर सम्मेद महागिरि भूपर ॥ एकबार बंदे जो कोई । ताहि
नरक पशुगति नहिं होई ॥८॥ नरगति नृप सुर शक्र कहावै । तिहुं
जग भोग भोगि शिव पावै ॥ विघन विनाशक मंगलकारी । गुण
बिलास बंदो नरनारी ॥ ८ ॥

घटा—जो तीरथ जावे पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करे ।
ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुणको बुध उचरै ॥१०॥
ॐ ह्रीं वतुर्विशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ।

(७२) देवपूजा ।

दोहा—प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ।

तुम पद पूजा करत हू, हमपै करुना होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितपदचत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-
भगवन् अत्र अवतरअवतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट् ।

छंद विभंगी ।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्राशुक निर्मल, गुन गायो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो, ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितपदचत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-
भगवद्भ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
अघतपत निरंतर, अगनि पठंतर, मो उर अंतर, खेद करयौ ।
ले बावन चंदन दाहनिकंदत, तुमपदबंधन, हरष धरयौ ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो वन्दनं
औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ।

तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित प्रीति धरै ॥ प्र० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित अक्षतान ।

सुरनर पशुको दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोहि लिया ।

ताकेशरलाऊं फूल चढ़ाऊं, भगति बढ़ाऊं, खोल हिया ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित पुष्पं ।

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा हो, मो लागै ।

सद घेवर बावर, लाडू बहु धर, थार कनक भर तुम आगै ॥ प्र०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित नैवेद्यं० ॥

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम दुख पावै ।

तम मेटनहारा, तेज अपारा, दोष सँभारा, जस गावै ॥ प्रभु०

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित दीपं ॥

इह कर्म महावन, भूल रह्यो जन, शिवमारग नहिं पावत हैं ।

कृष्णागरधूपं, अमल अनूपं, सिद्धस्वरूपं, ध्यावत हैं ॥

प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।

यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै दया धरो ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित धूपं० ॥

सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघ्न करि डारत हैं । फल

पुंज विविध भर, नयनमनोहर, श्रीजिनवरपद धारत हैं ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित फलं० ॥

आठौं दुखदानी, आठनिशानी, तुम ढिग आनी, निवारन हो ।

दीनन निस्तारन, अधमउधारन, 'द्यानत' तारन, कारन हो ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित अर्घ ।

अथ जयमाला ।

दोहा—गुण अनैतको कहि सकै, छियालीस जिनराय ।

प्रगट सुगुन गिनती कहूँ, तुमहो होहु सहाय ॥१॥

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अध्यातम नामी ॥
तीन काल विधि परगट जानी । चार अनंत चतुष्टय ज्ञानी ॥२॥
पंच परावर्तन परकासी । छहों दरबगुनपरजयभासी ॥ सात भग-
वानी परकाशक । आठों कर्म महारिपु नाशक ॥३॥ नव तत्त्वनकै
भाखनहारे । दशलच्छनसौं भविजन तारे । ग्यारह प्रतिमाके उप-
देशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥४॥ तेरहिविधि चारितके दाता
चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥ पंद्रह भेद प्रमाद निवारी । सोलह भा-
वन फल अविकारी ॥५॥ तारै सत्रह अङ्क भरत भुव । ठारै थान
दान दाता तुव ॥ भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन । बीस अंकगण
धरजीकी धुन ॥६॥ इकइस सर्व घात विधि जानै । बाइस बंध
नवम गुन थाने ॥ तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर । सो पूजै चौ-
वीस जिनेश्वर ॥७॥ नाश पचीस कषाय करी हैं । देशघाति छब्बीस
हरी हैं ॥ तत्व दरब सत्ताइस देखे । मति विज्ञान अठाईस पेखे ॥८॥
उनतिस अंक मनुष सब जाने । तीस कुलाचल सर्व वखाने ॥
इकतिस पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समाइक टारे ॥९॥
तेतिस सागर सुखकर आये । चोतिस भेद अलब्धि बताये ॥ पैंतिस
अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥१०॥ सैंतिस
मग कहि ग्यारह गुनमें । अड़तिस पद लहि नरक अपुनमें । उन-
तालीस उदीरन तेरम । चालिस भवन इंद्र पूजै नम ॥११॥ इक-

तालीस भेद आराधन । उदै बियालीस तीर्थकर मन ॥ तैतालीस
 बंध हाता नहिं, द्वार चवालिस नर चौथे महिं ॥१२॥ पैतालीस
 पल्यके अच्छर छियालीस विन दोष मुनीश्वर । नरक उदै न
 छियालिस मुनि धुनि प्रकृति छियालिस नाश दशमगुन ॥ १३ ॥
 छियालीस धन राजु सात भुव । अङ्क छियालीस सरसो कहि कुव ।
 भेद छियालीस अन्तर तपवर । छियालीस पूरन गुन जिनवर ॥१४॥
 अडिल्ल—मिथ्या तपन निवारन चन्द समान हो मोहितिमिर
 वारनको कारन भान हो ॥ काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश
 हो 'द्यानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो ॥१५॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र
 भवद्भ्यो पूर्णाऽर्घ्यं निर्वपामि ॥ इति श्रीदेव पूजा समाप्त ।

[७३] सरस्वती पूजा ।

दोहा—जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जड़ रीति ।

भवसागरसो ले तिरै, पूजै जिनवचप्रीति ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीबाग्वादिनी ! अत्र अवतर
 अवतर । संवोषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो
 भव भव । वषट् ।

त्रिभंगी ।

छीरोदधि गङ्गा, विमल तरंगा, सलिल अभङ्गा, सुखगङ्गा ।

भरि कंचन भारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चङ्गा ।

तीर्थकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई ।

सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै जलं निर्वपामि ।

करपूर मंगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रङ्ग भरी ।

शारदपद बंदों, मन अभिनंदों, पापनिकंदों दाह हरी ॥तीर्थ० ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै जलं निर्वपामि ।

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अतिअनुमोदं, चंदसमं ।

बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मातामं ॥तीर्थ० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि ।३।

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनंदरासं, लाय धरै ।

मम काम मिटायौ, शील बढ़ायौ, सुख उपजायौ, दोष हरै ॥तीर्थ०

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि ॥४॥

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा ।

पूजूं थुति गाऊं, प्रीति बढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा ॥तीर्थ०

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामी ॥६॥

करि दीपक ज्योतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।

तुम हो परकाशक, भ्रमविनाशक, हम घट भासक, ज्ञान बढ़ै ॥ती०

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि० ॥६॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।

सब पाप जलावै, पुण्य कमावै, दास कहावै खेवत हैं ॥तीर्थ०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि ॥७॥

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं ।

मनवांछित दाता मेठ असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥तीर्थ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि ॥८॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वलभारी, मोद धरै ।

शुभगंधसम्भारा, वसन निहारा, तुमतर धारा, ज्ञान करै ॥
 तीर्थकरकी धुनि, मणधरने सुनि अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
 सो जिनवरवानो, शिवसुखदानो, त्रिभुवनमानो, पूज्य भई ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वल्लं निर्वपामि ॥८॥

जलचंदन अच्छत, फूल चरु चत, दीप धूप अति, फल लावै ।
 पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर“द्यानत”सुख पावै ॥तीर्थ॥
 ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अव्यं निर्वपामि ॥१०॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—ओङ्कार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल ।

नमो भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै ॥

वेसरी छन्द—पहला आचारांग वखानो । पद अष्टादश सहस्र
 प्रमानो । दूजा सूत्रकृत अमिलाष । पद छत्तीस सहस्र गुरु
 भाषं ॥ १ ॥ तीजा ठाना अंग सुजानं । सहस्र बियालिस पद-
 सरधानं ॥ चौथो समवायांग निहारं । चौसठ सहस्र लाख
 इकधारं ॥ २ ॥ पंचम व्याख्याप्रगपति दर्शं । दोय लाख आठ-
 इस सहस्र छटा ज्ञातृकथा बिसतारं । पांचलाख छप्पन हजारं
 ॥ ३ ॥ सतम उपासकाध्ययनंगं । सत्तर सहस्र ग्यारलख भंगं ।
 अष्टम अंतकृतदस ईसं । सहस्र अठाइस लाख तेईसं ॥ ४ ॥ नवम
 अनुत्तरदस सुविशालं । लाख बानवै सहस्र चवालं । दशम
 प्रश्नव्याकरण विचारं । लाख तिरानवै सोल हजारं ॥ ५ ॥
 ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोड़ चौरासी लाखं । चार
 कोड़ि अरु पंद्रह लाखं । दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥
 द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । इकसौ आठ कोड़ि पन वेदं ॥ अड़सठ

लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥ एक
सौ बारह कोड़ि बखानो । लाख तिरासो ऊपर जानो ॥ ठावन
सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोड़ि इकावन आठहि लाख । सहस चुरासी छहसौ भाखं
साढे इकीस शिलोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥ ९ ॥

ग्रन्था—जा बानीके ज्ञानमें, सूझे लोक अलोक ।

‘द्यानत’ जग जयवत हो, सदा देत हों धोक ॥ इत्याशीर्वादः ॥

{ ७४ } गुरुपूजा ।

दोहा—चहुंगति दुखसागरविपै, तारनतरनजिहाज ।

रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतराव-
तर संवौषट । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो
भव भव । वषट् ।

शुचि नोर निरमल छोरदधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।

तिहुं धार तिहुं गतिटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥

भवभोगतनवैराग्य धार, निहार शिव तप तपत हैं ।

तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु पूज नित गुणजपत है ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जलं नि०

करपूर चंदन सलिलसौं घसि सुगुरुपद पूजा करौं ।

सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल बिस्तरौं ॥

भव भोगतन वैराग धार निहार, शिवतप तपत हैं ।

तिहुं जगतनाथ अराध साधुसु, पूज नितगुन जपत हैं ॥ २ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो चन्दनं नि०
 भिनवा कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपातर धरत हैं ।
 गुनधार औगुनहार स्वामी, बंदना हम करत हैं ॥ भव भो० ॥३॥
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
 शुभफूलराशप्रकाश परिमल, सुगुरुपांयनि परत हों ।
 निरवार मोर उपाधि स्वामी, शील दृढ़ उर धरत हों । भव०॥४॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः पुष्पं ।
 पकवान मिष्ट सलोन सुंदर, सुगुरु पांयन प्रीतिसौं ।
 कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसौं ॥भव०॥५॥
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः नैवेद्यं ।
 दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा ।
 तमनाश ज्ञानउजास स्वामी मोहि मोह न हो कदा । भव० ॥६॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो दीपं ।
 बहु अगर आदि सुगंध खेऊं सुगुण पद पझहिं खरे ।
 दुख पुंज काट जलाय स्वामी गुण अल्य चितमें धरे ॥ भव०७॥
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि०
 भर धार पूर बदाम बहुविधि, सुगुरु क्रम आगे धरों ।
 मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर बिनती करों ॥ भव०॥८॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०
 जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।

‘धानत’ सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली ॥ भव० ॥९॥
 ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

अथ जयमाला ।

दोहा—कनककामिनी-विषयवश, दीसै सब संसार ।

त्यागी वै रागीमहा, साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥

तीन घाटि नव कोड़ सब, बंदो सीस नवाय ।

गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूँ आरती गाय ॥ २ ॥

बेसरो छंद ।

एक दया पालै मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं । तीनों लोक
प्रगट सब देखै, चारों आराधननिकरं ॥ पंच महाव्रत दुद्धर धारे,
छहो दरब जानै सुहितं । सप्तभंगवानी मन लावै, पावै आठ
रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥ नवो पदारथ विधिसों भाखै, बन्द दशों
चूरन शरनं । ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह वृत धरनं ।
तेरह भेद काठिया चूरे, चौदह गुनथाणक लखियं । महाप्रमाद
पंचदश नाशे, सोलकपाय सबै नखियं ॥ ४ ॥ बधादिक सत्रह
सुतर लाखा, ठारह जन्म न मरन मुनं । एक समय उनईस परी-
षह, बीस प्ररूपनिमें निपुनं ॥ भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस
अभख न त्याग करं । अहिमन्दिर तेईसों बंदै, इन्द्र सुरग
चौबीस बरं ॥ ५ ॥ पच्चीसों भावन नित भावै, छह सौ अंग
उपंग पढै । सत्ताइसों विषय विनाशै, अट्ठाईसों गुण सु बढै ॥
शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीष्मगिरिसम जोग धरै । वर्षा
वृक्ष तरै धिर ठाढ़े आठ करम हनि सिद्ध बरै ॥ ६ ॥
दोहा—कहो कहाँ लो भेद मैं, बुध थोरी गुन भूर ।

हेमराज, सेवक हृदय, भक्ति करौ भरपूर ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधु गुरुभ्यो नमः ।

मैं अल्प बुद्धि जयमाल गाय । भवि जीव शुद्ध जेकी बनाय ॥२३॥
 तुम क्या विशाला सब क्षितिपाला तुम गुणमाला करठधरी ।
 ते भव्य विशाला तज जग जाला नागत भाला मुक्तिवरी ।

इत्याशीर्वादः ॥

(७७) सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पूजा ।

अबिल्ल छन्द ।

जम्बूद्वीप मभार भरत क्षेत्र सुकहों । आर्यखण्ड सुजान भद्र
 देशे लहो ॥ सुवर्णगिरि अभिराम सुपर्वत है तहां । पञ्चकोडि अरु
 अर्द्ध गये मुनि शिव जहां ॥१॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर, बहुत जिनालयु जान ।

चन्द्रप्रभू जिन आदिदे, पूजों सब भगवान ॥२॥

ओं ह्रीं अत्रवत्रवतरः संवोषटाह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
 स्थापनं ॥ अत्र ममऽसन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं

सारंग छंद—पदमद्रहको नीर ल्याय गंगासे भरके । कनक कटोरी
 माहि हेम थारनमें धरके । सोनागिरिके शीश भूमि निर्वाण सुहाई
 पंचकोडि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुंचे मुनिराई ॥ चन्द्रप्रभु जिन आदि सकल
 जिनवर पद पूजो । स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाय अविचल पद हूजो ॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराय ।

तिनपद धारा तीन दे, तृषा हरणके काज ॥

ऊँ ह्रीं श्रीसोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो ॥ जलं ॥१॥

केसर आदि कपूर मिले मलयागिरि चन्दन । परमल अधिबी
 तास और सब दाह निकन्दन ॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब
 जिनराज । ते सुगन्ध कर पूजिये, दाह निकन्दन काज । सुगन्ध ॥२॥

तन्दुल धवल सुगन्ध ल्याय जल धोय पक्षारो । अक्षय पदके
हेतु पुंज द्वादश तहां धारो । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन
राज । तिन पद पूजा कीजिये, अक्षय पदके काज ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

बेला और गुलाब मालती कमल मंगाये । पारिजातके पुष्प
ल्याय जिन चरण चढ़ाये ॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन
राज । ते सब पूजों पुष्प ले, मदन विनाशन काज ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

विंजन जो जगमांहि खांडघृत माहि पकाये । मीठे तुरत बनाय
हेम थारी भर ल्याये ॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज ।
ते पूजों नैवेद्य ले, श्रुधा हरणके काज ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥

मणिमग दीप प्रजाल धरौं पंकति भरधारी । जिन मन्दिर तम
हार करहु दर्शन नरनारी । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन-
राज । करों दीपले आरती, ज्ञान प्रकाशन काज ॥ दीपं ॥ ६ ॥

दशविधि धूप अनूप अरि न भोजनमें डालों । जाकी धूप सुगन्ध
रहे भर सर्व दिशालों । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज
धूप कुम्भ आगे धरों, कर्म दहनके काज ॥ ७ ॥

उत्तम फल जग मांहि बहुत मीठे अरु पाके । अमृत अनार
अचार आदि अमृत रस छाके । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब
जिनराज । उत्तम फल तिन ले मिलो, कर्म विनाशन काज ॥ फलं ८ ॥

दोहा—जल आदिक बसु द्रव्य अघ करके धर नाचो । बाजें
बहुत बजाय पाठ पढ़के मुख सांचो । सोनागिरिके शीशपर जेते सब,
जिनराज । ते हम पूजें अर्घ ले । मुक्ति रमणके काज ॥ अर्घ ॥ ९ ॥

अष्टिल छन्द ।

श्री जिनवरकी भक्ति सो जे नर करत हैं । फल बांटा कुल

नाहिं प्रेम उर धरत हैं ॥ ज्यों जगमाहिं किसानसु खेतीको करें ।
नाज काज जिय जान सु शुभ आपहि भरे ॥ ऐसे पूजादान भक्ति
वश कीजिये । सुख सम्पति गति मुक्ति सहज पा लीजिये
॥ पूर्णार्घ ॥ १० ॥

अब जयमाला ।

दोहा—सोनागिरिके शीसपर, जिन मन्दिर अभिराम ।

तिन गुणकी जयमालिका, वर्णत आशाराम ॥ १ ॥

फदरी छंद ।

गिरि नोचे जिन मन्दिर सुचार । ते यतिन रचे शोभा अपार ।
तिनके अति दीरघ चौक जान । तिनमें यात्रीभ्रेलों सुआन ॥ २ ॥
गुमठी छज्जे शोभित अनूप । ध्वज पंकित सोहैं विविधरूप ।
बसु प्रातिहार्य तहां धरे आन । सब मंगल द्रव्यिनकी सुखान ॥ ३ ॥
दरवाजोंपर कलशा निहार । करजोर सुजय जय ध्वनि उचार ।
इक मन्दिरमें यतिराजमान । आचार्य विजयकीर्ती सुजान ॥ ४ ॥
तिन शिष्य भागीरथ विबुध नाम । जिनराज भक्ति नहिं और काम ॥
अब पर्वतको चढ़ चलो जान । दरवाजो तहां इक शोभमान ॥ ५ ॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार । तिन बंदि पूज आगे सिधार ।
वहां दुःखित भुखितको देत दान । याचकजन जहां हैं अप्रमाण ६
आगे जिन मन्दिर दुहं ओर । जिन गान होत वाजिन्न शोर ।
माली बहु ठाढ़े चौक पौर । ले हार कल्गी तहां देत दौर ॥ ७ ॥
जिन यात्री तिनके हाथ मांहि । वस्त्रशीस रीक तहां देत जाहिं ।
दरवाजो तहां दूजो विशाल । तहां क्षेत्रपाल दोउ ओर लाल ॥ ८ ॥
दरवाजे भीतर चौक माहिं । जिन भवन रचे प्राचीन आहिं ।

तिनकी महिमा बरणी न जाय । दो कुंड सजलकर अति सुहाय ॥
 जिन मन्दिरकी वेदी विशाल । दरवाजे तीनों बहु सुदाल ।
 ता दरवाजेपर द्वारपाल । ले लकुट खड़े अरु हाथ माल ॥ १० ॥
 जे दुर्जनको नहिं जान देय । ते निन्दकको ना दरश देय ॥
 चल चन्द्रप्रभूके चौकमाहिं । दालाने तहां चौतर्फ आयं ॥ ११ ॥
 तहां मध्य सभामंडप निहार । तिसकी रचना नाना प्रकार ।
 तहां चन्द्रप्रभूके दरशपाय । फल जात लहो नरजन्म आय ॥ १२ ॥
 प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात । कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात ।
 बंदे पूजें तहां देय दान । जननृत्य भजनकर मधुरगान ॥ १३ ॥
 ताथेई थेई थेई बाजत सितार । मृदंग वीन मुहचंग सार ।
 तिनकी ध्वनि सुनि भवि होत प्रेम । जयकार करत नाचत सुपम ॥
 ते स्तुतिकर फिर नाय शीस । भवि चल मनो कर कर्म स्त्रीस ।
 यह सोनागिरि रचना अपार । बरणन करको कवि लहै पार ॥ १५ ॥
 अति तनक बुद्धि आशासुपाय । बस भक्ति कही इतनी सुगाय ।
 मैं मन्दबुद्धि किम लहों पार । बुद्धिवान चूक लीजो सुधार ॥ १६ ॥
 दोहा—सोनागिरि जय मालिका, लघुमति कहो बनाय ।

पढ़े सुने जो प्रीतिसे, सो नर शिवपुर जाय ॥ १७ ॥

इत्याशीर्वादः ।

(७८) रविव्रतपूजा ।

अष्टि ।

यह भवजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही । करहु भव्य-
 जन लोग, सुमन देके सही ॥ पूजों पार्श्व जिनैन्द्र त्रियोग लगाय-

के । मिटे सकल सन्ताप मिले निध आपके ॥ माँत सागर इक
सेठ कथा ग्रन्थन कही । उनहीने यह पूजा कर आनन्द लही ॥
ताते रविवृत्त सार, सो भविजन कीजिये । सुख सम्पति सन्तान,
अतुल निध लीजिये । दोहा—प्रणमो पार्श्व जिनेशको, हाथजोड़
शिर नाथ । परभव सुखके कारने, पूजा करूँ बनाय । एतवार
वृत्तके दिना एही पूजन ठान । ता फल सुरग सम्पति लहै, निश्चय
लीजे मान ॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर तिष्ठ २
ठ: ठ: अत्र मम सन्निहितो ।

अष्टक ।

उज्जल जल भरके अति लायो रतन कटोरन माहीं । धार
देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं ॥ पारसनाथ जिने
श्वर पूजों रविवृत्तके दिन भाई । सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत ही
आनन्द मंगलदाई ॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु
घिनाशनाथ जलं निर्वपामोति स्वाहा ॥ मलयागिरि केशर अति
सुन्दर कुमकुम रंग बनाई । धार देत जिन चरनन आगे भवेआ-
ताप नसाई । पारसनाथ० । सुगन्ध । मोती सम अति उज्जल
तन्दुल ल्यावो नीर पखारो । अक्षय पदके हेतु भावसो श्री जिन-
वर दिग धारो । पारस० । अक्षतं । केला अर मचकुन्द बमेली
पारजातके ल्यावो । चुन चुन श्री जिन अग्र चढ़ाऊ मनवान्छित
फल पावो । पारस० । पुष्पं । बाबर फेनी गोजा आदिक घृतमें
लेत पकाई । कञ्चन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई । पारस० ।
नवेद्यं । मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई । जिनके

बसुविध कर्म हरो ॥ हरि मेरु० धूपं । श्रोफल अंगूर अनार, खारक
धार भरों । तुम चरन चढ़ाऊं सार, ताफल मुक्ति वरों ॥ हरि मेरु०
फलं । जल आदिक आठ अदोष, तिनका अर्घ्य करो । तुम पद
पूजों गुण कोष, पूरन पद सुधरों ॥ हरि मेरु० अर्घ्य ।

आरती जोगीरासा ।

जन्मसमय उच्छव करनेको, इन्द्र शची युत धायो । तिहको
कलु वरणन करवेको, मेरो मन उमगायो ॥ बुधिजन मौको दोष
न दीजो, थोरो बुद्धि भुलायो । साधू दोष क्षमै सब हीके, मेरी करो
सहायो ॥ १ ॥

(छंद कामिनी—मोहन—मात्रा २०)

जन्म जिनराजको जबहि निज जानियों । इन्द्र धरनिन्द्र सुर
सकल अकुलानियों ॥ देव देवाङ्गना चलि'य जयकारतीं । शचिय
सुरपति सहित करति जिन आरतीं ॥ २ ॥ साजि गजराज हरि
लक्ष जोजन तनो । बदन शत बदन प्रति दन्त बसु सोहनो ॥ सजल
भरि पूर सरदन्त प्रति धारती । शचिय सुरपति सहित, करति
जिन आरती ॥ ३ ॥ सरहिं सर पंच दुय एक कमलिनि बनी । तासु
प्रति कमल पञ्चीस शोभा घनी ॥ कमल दल एकसो आठ विसता-
रतीं । शचिय सुरपति सहित करत जिन आरतीं ॥ ४ ॥ दलहिं दल
अप्सरा नाचहीं भावसों । करहिं सङ्गीत जयकार सुर चावसों ॥
तगड़दा तगड़ थई करत पग धारतीं । शचिय सुरपति स० ॥ ५ ॥
तासु करि बैठि हरि सकल परिवारसों । देहि परदक्षिणा जिनहि
जयकारसों ॥ आनि कर शचिय जिन नाथ उर धारतीं । शचिय

सुरपति स० ॥६॥ आनि पांडुकशिला पूर्व मुख थाप जिन । करहिं
अभिषेक उच्छाहसो अधिक तिन ॥ देखि प्रभु बदन छवि कोटि
रवि वारती । शचियं सुरपति सहित कर० ॥ ७ ॥ जोजनह आठ
गम्भीर कलशा बने । चारि चौड़ाई मुख एक जोजन तने ॥ सहस
अरु आठ भरि कलश शिर ढारतीं । शचियं सुरपति सहि० ॥८॥
छत्र मणि खचित ईशान करतारहीं । सनत माहेंद्र दोऊ चमर
शिर ढारहीं ॥ देव देवीय 'पुष्पांजलिय' ढारतीं । शचिय सुरपति
सहित करत जिन० ॥ ९ ॥ जलसु चन्दन पुहप शालि चरु ले
धरों । दीप अरु धूप फल अर्घ पूजा करों ॥ पिंडिका और नीरां-
जना वारतीं । शचियं सुरपति सहित कर० ॥१०॥ कियो शृंगार
सब अंग सामानसों । आनि मातहिं दियो बहुरि जिनराजकों ॥
तृपत नहिं होत द्रुग रूप नीहारतीं । शचियं सुरपति सहित करत
जिन आर० ॥ ११ ॥ ताल मिरदंग धुनि सप्त सुर बाजहीं । नृत्य
तांडव करत इन्द्र अति छाजहीं ॥ करत उच्छाहसों निजसु पद
धारती । शचियं सुरपति सहित कर० ॥१२॥ भव्य जन आय जिन
जन्म उत्सव करै । आपने जन्मके सकल पातिक हरै ॥ भक्ति
गुरुदेवकी पार उत्तारतीं । शचिय सुरपति साहत करहिं जिन
वारतीं ॥१३॥

घत्ता — जिनवर पद पूजा भावसु हूजा, पूरण चित आनन्द भया ।
जयवन्त सु हूजौ आसा पूजो, लाल विनोदी भाल नया ।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित पद चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद्-
ऽहर्त्परमेष्ठिने पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चौपाई—मंगल गर्भ समयमें जोय । मंगल भयो जन्ममें जोय ।

मंगल दीक्षा धारत जोय । मंगल ज्ञान प्राप्तिमें जोय ॥ मङ्गल मोक्ष
मगनमें जोय । इन्द्रन कीनों हर्षित होय । जाचूँ बार बार हौं
सोय । हे प्रभु ! दीजे मङ्गल मोय ।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(८२) श्री सम्मेदशिखरपूजाविधान

दोहा—सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सु थान ॥ शिखर
सम्मेद सदा नमौ, होय पापकी हान ॥१॥ अगनित मुनि जहँ तें
गए, लोक शिखरके तीर । तिनके पद पंकज नमौ, नासै भवकी
पीर ॥२॥ अडिह छन्द—है वह उज्जल क्षेत्र सु अति निर्मल सही,
परम पुनीत सुठौर महा गुनकी महो ॥ सकल सिद्धि दातार
महा रमनीक है । वंदौ निज सुख हेत अवल पद देत है ॥३॥
सोरठा—शिखर सम्मेद महान, जगमें तीर्थ प्रधान है ॥ महिमा
अद्भुत जान, अल्पमती में किम कहो ॥ ४ ॥ पद्धरी छन्द—सरस
उन्नत क्षेत्र प्रधान है । अति सु उज्जल तीर्थ महान है । करहि
भक्तिसो जे गुन गाइकैं । बरहि शिव सुरनर सुख पायकैं ॥ ५ ॥
अडिह छन्द—सुर हरि नरपति आदि सुजिन बन्दन करै । भवसा-
गर तै तिरे नहीं भवदधि परै ॥ सुफल होय जो जन्म सु जे
दर्शन करै । जन्म जन्मके पाप सकल छिनमें टरै ॥ ६ ॥ पद्धरी
छन्द—श्री तीर्थकर जिनवर सु बीस । अरु मुनि असंख्य सब
गुनन ईस ॥ पहुंचे जहँ थे केवल सुधाम । तिन सबकोँ अब मेरी
प्रणाम ॥ ७ ॥ गीतका छन्द—सम्मेद गढ़ है तीर्थ भारी सबनको
उज्ज्वल करै । चिरकालके जे कर्म लागे दरस ते छिनमें टरै ॥ है

परम पावन पुन्य दाइक अतुल महिमा जानिए । है अनूप सरूप
गिरिवर तासु पूजा ठानिए ॥ ८ ॥ दोहा—श्रीसम्मेद शिखिर
महा, पूजो मनघचकाय ॥ हरत चतुरगति दुःख कौ, मन वांछित
फल दाय ॥ उँहीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अत्रावतराव-
तर संवौषट् इत्याह्वाननम् परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् उँ हीं श्री
सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्परि
पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । ओंहीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रमम
सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

अष्टकं ।

अडिह छन्द—क्षीरोदधि सम नीर सु उज्जल लीजिये ।
कनक कलस में भरकें धारा दीजिये ॥ पूजौ शिखिर सम्मेद सुमन
वचकाय जू । नरकादिक दुःख टरै अचल पद पाय जू ॥ उँहीं श्री
सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं ।
पयसौ घिस मलयागिर चन्दन ल्याइये । केसर आदि कपूर सुगंध
मिलाइये ॥ पूजौ शिखिर० चन्दनं । तंदुल धवल सु उज्जवल खासे
धोयके । हेम वरनके थार भरौ शुचिहोय कै ॥ पूजौ शिखिर० ।
सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षय पदप्राप्ताय अक्षतं ॥ ३ ॥ फूल
सुगंध सु ल्याय हरष सौ आन चढ़ायौ । रोग शोक मिट जाय
मदन सब दूर पलायौ ॥ पूजौ० पुष्पं ॥ षट् रस कर नैवेद्य कनक
थारी भर ल्यायो ॥ क्षुधा निवारण हेतु सु पूजौ मन हरषायौ
॥ पूजौ शिखिर० नैवेद्यं ॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत
हो । पूजत होत स्वज्ञान मोह तम नाश हो ॥ पूजौ शिखिर० ।
दीपं ॥ ६ ॥ दस विधि धूप अनूप अग्नि में खेवड़ं । अष्ट कर्मकौ

जिन धाम ॥२३॥ तीन लोक हित करत अनूप । मंगल मय जगमें
 सिद्धू प ॥ चिंतामणी स्वर वृक्ष समान । रिद्ध सिद्ध मङ्गल सुख
 दान ॥२४॥ पार्श्व और काम सुर धैन । नाना विध आनन्दको देन ।
 व्याध विकार जाहिं सब भाज । मन चिंतै पूरे सब काज ॥२५॥
 भवदधि रोग विनाशक होई । जो पद जगमें और न कोई ॥ नि-
 र्मल परम धाम उत्कृष्ट । बन्दत पाप भजै अरु दुष्ट ॥२६॥ जो नर
 ध्यावत पुन्य कमाय । जश गावत ऐ कर्म नशाय ॥ करै अनादि
 कर्मके पाप । भजै सकल छिनमें सन्ताप ॥२७॥ सुर नर इन्द्र
 फणिन्द्र जू सबै । और खगेन्द्र महेन्द्र जु नमै ॥ नित सुर सुरी
 करै उच्चार । नाचत गावत विविध प्रकार ॥२८॥ बहु विध भक्त
 करै मन लाय । विविध प्रकार वाजिंत्र बजाय ॥२९॥ द्रुम द्रुम
 द्रुम बाजे मृदङ्ग । घन घन घंट बजे मुह चङ्ग । भन भन भनिया
 करै उच्चार । सरसारंगी धुन उच्चार ॥ ३० ॥ मुरली बोन बजे
 घन मिष्ट । पट हांतुरी स्वरान्वत पुष्ट ॥ नित सुरगण धित गावत
 सार । सुरगण नाचत बहुत प्रकार ॥३१॥ भननन भननन नूपुर
 तान । तननन तननन टोरत तान । ता थेई थेई थेई थेई थेई चाल ।
 सुर नाचत निज नाचत भाल ॥३२॥ गावत नाचत नाना रङ्ग । लेत
 जहां शुभ आनंद सङ्ग ॥ नित प्रति सुर जहां बन्दे जाय ॥ नाना
 विध मङ्गल को गाय ॥३३॥ आनन्द धुन सुन मोर जु सोय ।
 प्रापत व्रतकी अति ही होय ॥ तातै हमकूँ हैं सुख सोई । गिरवर
 बंदो कर धर दोई ॥३४॥ मारुत मन्द सुगन्ध चलेय । गंधो दूक
 तहां बरषै सोय ॥ जियकी जात विरोध न होई । गिरवर बंदे कर
 धर दोई ॥३५॥ ज्ञान चरित तपसा धन होई । निज अनुमौकौ

ध्यान धरेई ॥ शिव मंदिरको धारै सोई । गिरवर बंदै कर धर
 दोई ॥३६॥ जो भव बन्दे एक जु वार । नरक निगोद पशू गति टार ॥
 सुर शिवपदकूँ पावै सोय । गिरवर बंदै कर धर दोय ॥३७॥ ता
 की महिमा अगम अपार । गणधर कबहुँ न पावै पार ॥ तुम अहुत
 में मतिकर हीन । कहो भक्त वसु केवल लीन ॥३८॥ घसा—श्री
 सिद्ध क्षेत्र अति सुख देत ॥ सेवतु नासौ विघ्न हरा ॥ अरु कर्म
 बिनाशे सुख पयासै केवल भासै सुख करा ॥ ३९ ॥ ओं ह्रीं
 सम्मेदशिखर सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो महाधर्म । दोहा—
 शिखरसम्मेद पूजो सदा । ममवच तन कर नारि ॥ सुर शिवके जे
 फल लहै, कहते दास जवारि ॥४०॥ इत्यादि आशीर्वादः ।

{ ८३ } दीपमालिका विधान ।

श्री महावीर पूजा (कवि मनरङ्गजी)

गोता छंद ।

शुभनगर कुण्डलपुर सिद्धार्थरायके त्रिशलातिया ॥ तजि पुष्प
 उत्तर तासु कुक्ष्या वीर जिन जन्मन लिया ॥ कर सात उन्नत कनक
 सा तनु बंशवर इक्ष्वाक है ॥ द्वे अधिक सत्तरि वरस आउष सिंह
 चिन्ह भला कहै ॥१॥

छंदमालिनी—सो जिनवीर दयानिधिके जुग पाद पुनीत पुनीत
 करेंगे । जावत मोक्ष न होय हमें शुभ तावत थापन रोज करेंगे ।
 आय बिराजहु नाथ इहां हम पूजिके पुण्य भण्डार भरेंगे । ॐ ह्रीं
 श्रीबीरनाथ जिनेन्द्राय पुष्पांजलि क्षिपेत् ॥ पुष्पोंको घालीमें डाले ।
 कनक कूँभसु वारि भरायके । विमल भाषत्रिशुद्ध लगायके ॥ कर

अष्टक छंद द्रुतबिलंब ।

मदैव जिनेश्वर वीरके । चरण पूजत नाशक पीरके ॐ ह्रीं श्रीवीर
नाथ जिनेन्द्राय जन्मरोगविनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा
जलं ॥ १ ॥

परम चन्दन शीतल वामना । करि सुकेशरि मिश्रित पावना ॥
चरमदैव जिनेश्वर वीरके । चरण पूजत नाशक पीरके ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाथ चन्दनं ॥ २ ॥
धवल अक्षत चाव चढ़ावही । करि सुपुंज महामन भावही ।
चरम० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥
पुहप माल बनाय हिरायकै । जुगतिसो प्रभु पास लियायके ॥
चरमदैव० । चरण पूजत० ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विनाशनाथ पुष्पं ॥ ४ ॥
नबल घेबरबाबर लायके । घृतसुलोलित पूव बनायके ।
चरमदैव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगनाशाय नेवेद्यं ॥ ५ ॥
करि अमोलक रत्नमई दिया । जगत ज्योति उद्योतमई किया ॥
चरमदैव० । चरण पूजत० ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाथ दीपं ॥ ६ ॥
उठत धूप घटावलि जासुते । इम सुधूप सुगन्धित तासुते ॥
चरमदैव० ॥ चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥
फणसदाड़िम आम्र पके भये । कनक भाजनमें भरके लये ॥

चरमदेव० । ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोक्षपद
प्राप्तये भलं ॥ ८ ॥

अरघ ले शुभ भाव चढ़ायके । धवल मङ्गलतूर बजायके ।
चरमदेव० । ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय सर्वसुखप्राप्ताय
अर्घ ॥ ९ ॥

अथ पंचकल्याणकं गाथा ।

मास आषाढ़ सुदीमे । पष्ठीदिन जानि महा सुखकारी ।
त्रिसला गरम पधारे । तुमपद जजत अर्घ सीरी ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय आषाढ़ सुदी ६ गर्भकल्याण काय
अर्घ ॥

चैत्र त्रयोदशि कारी । तादिन जनमे प्रभाव बिस्तारी ॥
अर्घ महाकर धारी । जजत तिहारे चरण हितकारी ॥
ओं ह्रीं श्रीवीर जिनेन्द्राय चैत्रसुदीतेरसज्जन्मकल्याणकाय अर्घ ॥ २ ॥
दशमी अगहन बदीमें । लखि सबजग अथिर भये वैरागी ॥
प्रभू महाव्रत धारै । हम पूजत होत बड़ भागी ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अगहनवदी १० तपकल्याणकाय अघ
केवलज्ञानी हूवे । दशमी बैसाख सुदीके माहो ।

सकल सुरासुर पूजै । हम इह पद लखि अरघ चढ़ाही ॥
ओं ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय बैसाखसुदी १० ज्ञानकल्याणकाय अर्घ
कार्तिक नष्ट कलादिन । पावापुरके गहनते स्वामो ॥
मुक्ति तिया परनाई । हम चरण पूजि होत बड़ नामी ॥
ओं ह्रीं श्रीचरमदेव महावीर जिनेन्द्राय कार्तिकवदी अमावस
निर्वाण कल्याणकाय अर्घ ॥ ५ ॥

जयमाला (छन्द मूलना)

वीर जिन धोरधर सिंहपग चिन्हधर तेजतप धरन जयसूर
भारी । धर्मकी धुराधर अक्षर बिनु गिराधर परम पद धरन जय
मदन हारी । दयाधर सीमधर पंचवर नाम धर अमल छबि
धरण जय शरमकारी । पञ्चपरवर्तकी भर्मना ध्वंसिके अचलपद
लहत जयजस बिथारी ॥ १ ॥

(छन्द त्रोटक)

जय आनन्दके घनघोर नमों, जय नाशक हौ भवभीर नमों ।
जयनाथ महासुख दायक हौ, जमराजबिहंडन लायक हो ॥ २ ॥
जय चरमशरीर गंभीर नमो, जय चर्मतिर्थकर धीर नमो ।
जय लोक अलोक प्रकाशक हो, जन्मान्तरके दुखनाशक हो ॥ ३ ॥
जय कर्म कुलाचल छेद नमो, जय मोह बिना निरखेद नमो ।
जय पूज्यप्रताप सदा सुथिरा, प्रगटी चहुं ओर प्रशस्त गिरा ॥ ४ ॥
तन सात सुहास विधाल नमो कनकाभ महा दशतालनमो ।
शुभमूरति मो मन माहिं बसी, सिगरी तबते भव भ्रांति नसी ॥ ५ ॥
जय क्रोध दवानल मेघ नमो, जय त्याग करो जगनेह नमो ।
जय अम्बर छांड़ि दिगम्बर भे, गति अम्बरकी धरि अंमरभे ॥ ६ ॥
जय धारक पञ्चकल्याण नमो, जय रोजनमें गुणवान नमो ।
जय पाद गहें गणराज रहैं, सचिनायकसे मुहताज रहैं ॥ ७ ॥
जय भौद्धि तारण सेत नमो, जय जन्म उधारन हेत नमो ।
जय मूरति नाथ भली दरसी, करुणामय शांति छया करसी ॥ ८ ॥
जय सार्थिक नाम सुवीर नमो, जय धर्मधुराधर वीर नमो ।
जय ध्यान महान तुरी चढ़के, शिवखेत लिया अति ही बढ़के ॥ ९ ॥

अनुष्टुप—प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानमास्कराः । कुर्वन्तु जगतः
शान्तिं बुधभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥ प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अंत्येष्ट प्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गति सर्वदार्यैः । सद्वृत्तानां
गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् । सर्वस्यापि प्रियहितबचो भावना
चात्मतत्त्वे । सम्पद्यन्तां मम भवमवे यावदेतेऽपवर्गः ॥९॥

आर्यावृत्तम—तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठत जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्बाणसम्प्राप्तिः ॥१०॥

आर्या—अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मये मणियं । तं
खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥११॥ दुःक्खक्खओ
कम्मक्खओ समाहिमरणं च वोहिलाहो य । मम होउ जगतवन्धव
तव जिणवर चरणशरणेण ॥१२॥ (परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

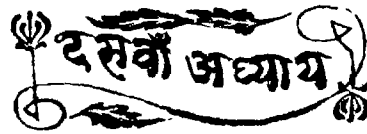
विसर्जन पाठ—ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्व पूर्णं मेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥ आव्हानं नैव
जानामि नैव जानामि पूजनम् । विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमे-
श्वर ॥ २ ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैवच । तत्सर्वं क्षम्यतां
देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥ आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथा-
क्रमम् । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

(८७) भाषास्तुति पाठ ।

तुम तरण तारण भवनिवारण, भविकमन आनन्दनो । श्रीनामिन-
न्दन जगत बन्धन, आदिनाथ निरञ्जनो ॥१॥ तुम आदिनाथ अनादि

सेऊं, सेय पद पूजा करूं । कैलासगिरिपर रिषमजिनघर, पदकमल
 हिरदै धरूं ॥ २ ॥ तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महा-
 बली । यह बिरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीजे नाथजो ॥ ३ ॥ तुम
 चन्द्रबदन सुचन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो । महासेननन्दन,
 जगतबन्दन, चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥ तुम शांति पांच कल्याण
 पूजो, शुद्ध मन वच कायजू । दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय
 पलायजू ॥ ५ ॥ तुम बाल ब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविकाशो
 श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥ जिन
 तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या—वश करी । चारित्र रथ चढ़ि
 भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥ कन्दर्प दर्प सुसर्प लच्छन
 कमठ शठ निर्मल कियो । अश्वसेननन्दन जगतबन्दन, सकलसंघ
 मंगल कियो ॥ ८ ॥ जिन धरीं बालकपने दीक्षा, कमठमान
 बिदारकै । श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमों शिरधारकै ॥ ९ ॥
 तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जान दया करो । सिद्धार्थनन्दन
 जगतबन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥ छत्र तीन सोहैं सुर नर
 मोहे, बीनती अबधारिये । कर जोड़ि सेवक, बीनवें प्रभु, आवाग
 मन निवारियो ॥ ११ ॥ अब होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा
 सेवक रहों । कर जोड़ यों बरदान मांगो, मोक्षफल जावत लहों
 ॥ १२ ॥ जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहि अनेकनो । इक अनेक
 की नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥ मैं तुम चरणकम-
 लगुणगाय । बहुविधि भक्ति करी मनलाय । जनम २ प्रभु पाऊं
 तोहि । यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥ कृपा तिहारी पेसी होय
 जनम मरन मिटावो मोय । बारबार मैं बिनती करूं । तुम से ये

भवसागर तरुं ॥ १५ ॥ नाम लेत सब दुख मिट जाय । तुम दर्शन देखो प्रभु आय । तुम हो प्रभु देवनके देव । मैं तो करुं चरण तब सेव ॥ १६ ॥ मैं आयो पूजनके काज । मेरो जनम सफल भयो आज । पूजा करके नवाऊं शीश । मुझ अपराध छमहु जगदीश ॥ १७ ॥



(द्व) सुगन्ध दशमी व्रत कथा ।

चौपाई—बद्धमान बंदो जिनराय । गुरु गौतम बंदो सुखदाय ॥ सुगन्ध दशमी व्रतकी कथा । बद्धमान सुप्रकाशी यथा ॥ १ ॥ मगधदेश राजगृह नाम । श्रेणिक राज करे अभिराम ॥ नाम चेलना गृह पटरानि । चन्द्रोहिणी रूप समान ॥ २ ॥ नृप बैठो सिंहासन परे । बनमाली फल लायो हरे ॥ कर प्रणाम बच नृपसे कहो । वित्त प्रमोदसे ठाड़ो रहो ॥ ३ ॥ बद्धमान आये जिन स्वामि । जिन जीतो उद्यम अरि काम ॥ इतनी सुनत नृपति उठ चलो । पुरजन युत दलबलसे भलो ॥ ४ ॥ समोशरण बन्धे भगवान् । पूजा भक्ति धार बहुमान ॥ नरकोठा बैठो नृपजाय । हाथ जोड़ पूछे शिर नाय ॥ ५ ॥ सुगन्ध दशमी व्रत फल भाषि । ता नरकी कहिये अब सा-
खि ॥ गणधर कहें सुनों मगधेश । जम्बूद्वीप विजयार्द्ध देश ॥ ६ ॥ शिव मन्दिर पुर उत्तरश्रेणी । विद्याधर प्रीत कर जैनी ॥ कमला खती नारि अति रूप । सुरकन्तासे अधिक अनूप ॥ सागरद्व

बसे तहां साह । जाके जिनव्रतमें उत्साह ॥ धनवत्त बनितौ गृह
 कहौ । मनोरमा ता पुत्री सही ॥ ८ ॥ सुगुप्तचार्य गृह आइयो ।
 देख मुनीन्द्र दुःख पाइयो ॥ कन्या मुनिकी निन्दा करी । कुछ मन-
 में नहिं शङ्का धरी ॥ ९ ॥ नग्न गात दुर्गन्ध शरीर । प्रगट पने देही
 नहिं चीर । मुख ताम्बूल हतो मुनि अङ्ग । मानो सुखको कीनो भङ्ग
 ॥ १० ॥ भोजन अन्तराय जब भयो । मुनि उठ जाय ध्यान वन
 दियो ॥ समताभाव धरे उरमांहि । किञ्चित् खेद चित्तमें नाहिं
 ॥ ११ ॥ जीत अवधि समय कछु गयो । मनोरमाका काल सुभयो ।
 भई गंधी पुनि कुकरी ग्राम । अपर ग्राम भई सूकरी नाम ॥ १२ ॥
 मगध सुदेश तिलकपुर जान । विजय सेन तहका नृप मान ॥
 चित्ररेखा ता रानी कहीं । ता पुत्री दुर्गन्धा भई ॥ १३ ॥ एक स-
 मय गुरुबन्दन गयो । पूजा कर चिनतीको ठयो ॥ मो पुत्री दुर्गन्ध
 शरीर । कहो भवान्तर गुण गम्भीर ॥ १४ ॥ राजा बचन मुनी-
 श्वर सुने । मुनि वृत्तान्त रायसे भने ॥ सब वृत्तान्त हालिजो जान
 मुनि राजासे कहो बखान ॥ १५ ॥ सुन दुर्गन्धा जोड़े हाथ । मो
 पर कृपा करो मुनिनाथ । ऐसा व्रत उपदेशो मोहि । यासे तनु नि-
 रोग अब होहि ॥ १६ ॥ दयावन्त बोले मुनिराय । सुन पुत्री व्रत
 चित्त लगाय ॥ समता भाव चित्तमें धरो । तुम सुगन्धदशमी व्रत
 करो ॥ १७ ॥ यह व्रत कीजे मन बच काय । यासे रोग शोक सब
 जाय ॥ दुर्गन्धा दिनवे निकुताय । कहिये सविधि महा मुनिराय
 ॥ १८ ॥ ऐसे वचन सुने मुनि जबै । तब बोले पुत्री सुन अबै ॥
 भादों शुक्ल पक्ष जब होय । दशमी दिन आराधो सोय ॥ १९ ॥
 चारो रसकी धारा देव । मनमें राखो श्रीजिनदेव ॥ शीतलनाथकी

पूरण करो । उद्यापन विजिसे आचरो ॥ २१ ॥ भक्तकाल वे कन्या
 चार । सुमिरण करो पञ्च नवकार ॥ चारों मरण समाधि सु कियो ।
 दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥ २२ ॥ षोड़स सागर आयु प्रमाण ।
 धर्म ध्यान सेवें तहां जान ॥ सिद्ध क्षेत्रमें कर विहार । क्षायक
 सम्यक उदय अपार ॥ २३ ॥ सुभग अवन्ती देश विशाल । उज्जै-
 नी नगरो गुणमाल ॥ स्थूलभद्र नामा नरपती । रानी चार सो अति
 गुणवती ॥ २४ ॥ देव गर्भमें आये चार । ता रानीके उदर मन्धार
 प्रथम सुपुत्र देवप्रभु भयो । दूजो सुत गुणचन्द्र भाषियो ॥ २५ ॥
 पद्मप्रभा तीनों बलवीर । पद्म स्वारथो चौथो धीर ॥ जन्म महो-
 त्सव तिनको करो । अशुभ दोष ग्रह दोनो हरो ॥ २६ ॥ निकल
 प्रभा राजाकी सुता । ते चारो परणी गुण युता ॥ प्रथम सुता सो
 ब्राह्मी नाम । दुतिय कुमारी सो गुणधाम ॥ २७ ॥ रूपवती तोजी
 सुकुमाल । मृगाक्ष चौथी सो गुणमाल ॥ करो व्याह घर को
 आइयो । सकल लोक घर आनन्द कियो ॥ २८ ॥ स्थूलभद्र राजा
 इक दिना । मोग विरक्त भयो भव तना ॥ राजपुत्रको दीनो सार ।
 बनमें जाय योग शुभ धार ॥ २९ ॥ तपकर उपजो केवल ज्ञान ।
 वसु विधि हनि पायो निर्वाण ॥ अब वे पुत्र राजको करें । पुण्यका
 फल पावें ते घर ॥ ३० ॥ चारों बांधव चतुर सुजान । अहि
 निशि धर्म तनो फल मान ॥ एक समय विरक्त सो भये । आत्म
 कायं चिन्तवत ठये ॥ ३१ ॥ चारों बान्धव दिक्षा लई । बनमें
 जाय तपस्या ठई ॥ निज मनमें चिद्रपाराधि । शुद्ध ध्यानको पायो
 साधि ॥ ३२ ॥ सर्व विमल केवल ऊनो । सुख अमृत तबही
 सो ठनो ॥ करो महोत्सव देव कुमार । जय जब शब्द सयो तिहि

बार ॥ ३३ शेष कर्म निर्वल तिन करे । पडुंछे मुक्तिपुरीमें करे ।
अगम अगोचर भव जल पार । दशलक्षण व्रतके फल सार
॥ ३४ ॥ वीर जिनेश्वर कही सु जान । शीतल जिनके बाड़े मान ।
गौतम गणधर भाषी सार । सुनि श्रेणिक आये दरबार ॥ ३५ ॥
जो यह व्रत नरनारो करे । ताके गृह सम्पति अनुसरे ॥ भट्टारक
श्री भूषण वीर । तिनके चेला गुण गम्भीर ॥ ३६ ॥ ब्रह्मज्ञान
सागर सुविचार । कही कथा दशलक्षण सार ॥ मन बचतन व्रत
पाले जोह । मुक्ति बारांगणा भोगे सोह ॥ ३७ ॥ सम्पूर्ण ।

(६२) मुक्तावली व्रत कथा ।

दोहा—कृष्णभनाथके पद नमों, भवि सरोज रवि जान ।

मुक्तावलि व्रतकी कथा, कहूं सुनो घर ध्यान ॥ १ ॥

चौपाई—मगध देश देशोंमें प्रधान । तामें राजगृह शुभ धान ॥ राज्य
करे तहां श्रेणिकराय । धर्मवन्त सबको सुखदाय ॥ २ ॥ ता गृह
नारि चेलना सती । धर्म शील पूरण गुणवती ॥ एक दिन समो-
शरण महावीर । आयो विपुलान्वल पर धीर ॥ ३ ॥ सुन नृप
अत्यानन्दित भयो । कुटुम्ब सहित बन्दनको गयो ॥ पूजा कर बैठो
सुख पाय । हाथ जोड़ कर अर्ज कराय ॥ ४ ॥ हे प्रभु मुक्ता-
वलि-व्रत कहो । यह कर कौनै क्या फल लहो ॥ तब गौतम बोले
हर्षाय । सुनो कथा मुक्तावलिराय ॥ ५ ॥ याही जम्बूद्वीप मंभार ।
भरत क्षेत्र दक्षिण दिशि सार ॥ अङ्गदेश सोहै रमनीक । नगर
कसे चम्पापुर ठोक ॥ ६ ॥ नगर मध्य एक ब्राह्मण कसे । नाम
सोम शर्मा तसु लसे ॥ ता गृह एक सुता जो भई । बोलन मध

कर पूरण छई ॥ ७ ॥ एक दिन देखे श्रीगुरु जबे । नम्र नात सो
 निन्दे तबे ॥ अति छोटे दुर्धचन कहाय । बहुत ही ग्लानि चित्तमें
 लाय ॥ ८ ॥ ताकरि महा पाप बांधियो । अवधि व्यतीते मरण जु
 कियो ॥ नरक जाय नाना दुःख सहै । छेदन भेदन जाय न कहे
 ॥ ९ ॥ मरक आयु पूरी कर जोइ । भव भ्रमि द्विज गृह पुत्री होइ ।
 निर्जामिका पड़ा तिस माम । अति दुर्गंधा देख निकाम ॥ १० ॥
 कोई द्विग भखे नहिं तहो । क्रमकर बड़ो भई सो वहां ॥ अन्न
 पानकर दुःखित महा । भूठन भखे कष्ट अति लहा ॥ ११ ॥ एक
 दिवस देखे मुनिराय । कर प्रणाम बिनवे शिर नाय ॥ कौन पाप
 मैं कीनों देख । मैं पायो अति दुःख अमेव ॥ १२ ॥ तब मुनिवर
 पूरव भव कहे । गुरुकी निन्दासे दुःख लहे । तब दुर्गंधा जोड़े
 हाथ । ऐसा व्रत दीजे मोहि नाथ ॥ १३ ॥ यासे रोग शोक सब
 जाय । उत्तम भव पाऊँ गुरुराय ॥ तब श्रीगुरु बोले हर्षाय । मुक्ता-
 वली करौ मन लाय ॥ १४ ॥ तासे सब पाप जर जाय । सुख
 सम्पत्ति मिले अधिकाय ॥ तब दुर्गंधा कहे विचार । कौन मांति
 कीजे व्रत सार ॥ १५ ॥ तब मुनिवर इम वचन कहाय । सुनो
 भेद व्रतका चित लाय ॥ भादों सुदी सप्तम दिन होइ । ता दिन
 व्रत कीजे भवि लोइ ॥ १६ ॥ प्रात समय जिन मन्दिर जाय ।
 पूजा कथा सुनो मन लाय ॥ सब आरम्भ तजो दिन मान ।
 संयम शील सजो गुणखान ॥ १७ ॥ मोर भये जिन दर्शन करो ।
 शुद्ध भसव कीजे तब करो ॥ दुजो व्रत पूर्ववत् करो । अश्विन
 यदि छठि पापनि हरो ॥ १८ ॥ तीजो व्रत कीजे उर धीर । अश्विन
 यदि ढेरसि सुखकार ॥ कर उपवास पालो गुण रसी । चौथी

अजिब सुदी ग्यारसी ॥१८॥ पञ्चम व्रत कीजे मन लाय । कार्तिक
 वदी बारसि सुखदाय ॥ फिर छठवां उपवास सुजान । कार्तिक
 शुक्ल तीज गुणखान ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनबरने कहो । कार्तिक
 सुदि ग्यारसि शुभ लहो ॥ फेर करो अष्टम व्रत लोय । मार्गसिर बदि
 ग्यारसि जब होय ॥ २१ ॥ नवमों व्रत मार्ग सुदी तीज । ये व्रत धर्म
 वृक्षके बीज ॥ या विधि करौ नव वर्ष प्रमान । मन घच कथ्य
 शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत पूरण होय निदान । उद्यापन कीजे
 गुणखान ॥ श्रीजिनवर अमियेक कराय । करो माइनों जिनगृह
 जाय ॥ २३ ॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो । जन्म २ के पातक हरो ॥
 यथाशक्ति उपकरण बनाय । श्रीजिन धाम खड़ावो जाय ॥ २४ ॥
 उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥ सब विधि
 सुन दुर्गंधा बाल । मन बच तन व्रत लीनो हाल ॥ २५ ॥ गुरु
 भाषित तिन व्रत ये कियो । पूर्व भव अघ पानी दियो ॥ ता फल
 नारि लिङ्ग छेदियो । सौधर्म स्वर्ग देव सो भयो ॥ २६ ॥ तहां
 आयु पूरण कर सोय । चलत भयो मथराको लोय ॥ श्रीधर राजा
 राज करन्त । ताके सुत उपजो गुणवन्त ॥ २७ ॥ नाम पञ्चरथ
 पंडित भयो । एक दिवस बन क्रीड़ा गयो ॥ गुफा मध्य मुनिवर
 को देख । बन्दन कर सुन धर्म विशेष ॥ २८ ॥ तहां पूछ मुनि-
 वरसी सोय । तुमसे अधिक प्रमा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले
 सुन बाल । बांसपूज्य दिन दीप्त विशाल ॥ २९ ॥ चरपापुर राज
 जिनराज । तेज पुत्र प्रभु धर्म जहाज ॥ यह सुन धर्म विवे वित्त
 दयो । समोशरण जिन बन्दन गयो ॥ ३० ॥ नमस्कार कर दीक्षा
 लई । तप कर गणधर पदवी भई ॥ अष्ट कर्म इस विधिसे जाइ ॥

पहुँचो शिवपुर सिद्ध मंकार ॥ ३१ ॥ लखो मध्य व्रतका सो
प्रमाण । राज भोगि भयो शिवपुर राय ॥ जो नर नारि करे व्रत
सार । सुर सुख लहि पावे भव पार ॥ ३२ ॥

(६३) पुष्पांजलि व्रत कथा ।

दोहा—वीर देवको प्रणमि कर, अर्चा करों त्रिकाल ।

पुष्पांजलि व्रतकी कथा, सुनो मध्य अध्याल ॥

चौपाई—पर्वत विपुलाचलपर आय । समोशरण जिनवरका पाय ।
तहां सुन राजा श्रेणिकराय । बन्दन चले प्रियायुत भाय ॥२॥
बन्दन कर पूछे नृप तबे । हे प्रभु पुष्पांजलि व्रत अबे ॥ मोसे कहो
करोँ चित लाय । कोने करो कहा भई आय ॥ ३ ॥ बोले गौतम
वचन रसाल । जम्बू द्वीप मध्य सो विशाल । सीता नदी दक्षिण
दिशि सार । मंगलावती सुदेश अपार ॥४॥

दोहा—रत्न संचयपुर तहां, वज्रसेन नृप आय ।

जयवंती बनिता लसे, पुत्र बिहानी थाय ॥५॥

चौपाई—पुत्र बाढ़ जिन मन्दिर गई । ज्ञानोदधि मुनि बंदिता भई ॥

हे मुनिनाथ कहो समझाय । मेरे पुत्र होइके नाय ॥६॥

दोहा—मुनि बोले हे वालकी, पुत्र होय शुभ सार । भूमि छह खंड
सुसाधि है, मुक्ति तनो भरतार । ७ ॥ सुनके मुनिके वचन तब, उपजो
हर्ष अपार । क्रमसे पूरे मास नव, पुत्र भयो शुभ सार ॥८॥ चौबन
वयस सो पायके, क्रोडा मण्डप सार । तहां व्योमसे आइयो जग
भूप रति सवार ॥९॥ रत्नशेखरको देखकर, बहुल प्रीति उर माहि ।
मेखवाहनने पांच सो, विद्या दीनीं ताहि ॥१०॥

एकासन कर लोय ॥४२॥ फल उपवास सहस्र दश होइ । अब
 तीजो दिन सुनिये लोइ जिन पूजा कर पात्रहि दान । भोजन पानी
 भात प्रमान ॥४३॥ नाम त्रिलोकसार दिन कहो । साठ लाख प्रोषध
 फल लहो ॥ चतुर्थ दिन कर आमौदय । नाम चतुर्मुख दिनसोहर्य
 ॥४४॥ तहां उपवास लक्ष फल होइ । पञ्चम दिन विधि करियो
 सोइ ॥ जिन पूजा एकासन करो । हय लक्षण जु नाम दिन धरो
 ॥ ४५ ॥ फल चौरासी लक्ष उपास । जासे जाय भ्रमण भव
 नास ॥ षष्ठम दिन जिन पूजा दान । भोजन भात आमिली पान
 ॥ ४६ ॥ ता दिन नाम स्वर्ग सोपान । व्रत चालीस लक्ष फल
 जान ॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान । कीजे भविजनका सन्मान
 ॥ ४७ ॥ सब सम्पति नाम दिन सोइ । भोजन भात त्रिवेली
 होय ॥ फल उपवास लक्षकों जान । अष्टम दिन व्रत चितमें
 आन ॥ ४८ ॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो । पात्र दान दे
 सुकृत गुनो ॥ इन्द्रध्वजवृत दिन तस नाम । सुमिरो जिनवर
 आठों जाम ॥४९॥ तीन करोड़ अति लाख पचास । यह फल होय
 हरे सब त्रास ॥ यह विधि आठ वर्षमें होइ । भाव सहित कीजे
 भवि लोइ ॥५०॥ उत्तम सात वर्ष विधि जान । मध्यम पांच तीन
 लघु मान ॥ उद्यापन विधि पूर्वक सचो । वेदी मध्य माडनो रचो
 । ५१ । जिन पूजारु महा अभिषेक । चन्द्रोपम ध्वज कलश अ-
 नेक ॥ छत्र चमर सिंहासन करो । बहुविधि जिन पूजा अघ हरो
 ॥५२॥ चारों दान सुपात्रहि देउ । बहुत भक्ति कर विनय करेउ ।
 बहु विधि जिन प्रमायना होइ । शक्ति समान करो भवि लोइ
 ॥५३॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तो कूनो व्रत कीजे लोइ ॥ जिन

यह व्रत कीर्तो अमिराम । तिन पद लयो सु कलको घाम । ५४ ।
 यह व्रत पूर्व महा फल लियो । प्रथम ऋषम जिनवरने कियो ॥
 अनन्तवीर्य अपराजित पाल । चक्रवर्त्ति पदवी भई हाल । ५५ ।
 श्रीपाल मैना सुन्दरी । व्रत कर कुष्ट व्याधि सब हरी ॥ बहुतक
 नर नारी व्रत करो । तिन सब अजर अमर पद धरो । ५६ ।
 सुनो विधानराय हरसेन । अति प्रमोद मुख जंपे बेन ॥ सब परि-
 वार सहित व्रत लयो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर दयो । ५७ । व्रत
 कर फिर उद्यापन करो । धर्म ध्यान कर शुभ पद धरो ॥ अन्त
 समाधिमरणको पाय । भयो देव हरसेन सुराय । ५८ । पर्या-
 यान्तर जैहैं मुक्ति । श्रैणिक सुनो सकल व्रत युक्ति ॥ गौतम कहो
 सकल अधिकार । सुनो मगधपति चित्त उदार । ५९ । जो नर
 नारी यह व्रत करें । निश्चय स्वर्ग मुक्ति पद धरैं ॥ संकट रोग
 शोक सब जाहिं । दुःख दरिद्रता दूर बिलाहिं । ६० । यह व्रत
 नन्दीश्वरकी कथा । हेमराज सु प्रकाशी यथा ॥ शहर इटावा उत्तम
 स्थान । श्रावक करें धर्म शुभ ध्यान । ६१ । सुने सदा ये जैन
 पुराण । गुणीजनोंका राखैं मान । तिहिठा सुना धर्म सम्बन्ध ।
 कीनी कथा चौपाई बंध । ६२ । कहैं सुनें देवें उपदेश । लहैं
 भावसे पुण्य अशेष ॥ जाके नाम पाप मिट जाय । ता जिनवरके
 बन्दों पाय ॥ ६३ ॥ श्रीनन्दीश्वर व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

(६६) निशिभोजन कथा ।

दोहा—नमों सारदा सार बुध, करें हरे अघ लेप ।

निशि भोजनभुंजकी कथा, लिखू सुगम संक्षेप ॥ १ ॥

जंबूदीप जगत विख्यात । भरत खंड छवि कहिय न जात ॥
तहां देश कुछ जांगल नाम । हस्तनागपुर उत्तम ठाम ॥ यशो
भद्र भूपत गुण वास । खूबचत द्विज प्रोहित तास ॥ सन्ध्यामास
तिथि दिन आराध । पहिली पड़वा कियो सराध ॥ बहुत बिनय
सों नगरी तने । न्योत जिमाये ब्राह्मण घने ॥ दान मान सबहीकों
दियो । आप विप्र भोजन नहिं कियो ॥ इतने राय पठायो दास ।
प्रोहित गयो रायके पास ॥ राज काज कछु ऐसो भयो । करम
करावत सब दिन गयो ॥ घरमें रात रसोई करी । चुल्हें ऊपर
हांड़ी धरी ॥ हींग लैन उठि बाहर गई । यहां विधाता औरहीठई ।
मैंडक उछल परो ता माहि । त्रिया तहां कछु जानो नाहि । वेंगन-
छोंक दिये तत्काल । मैंडक मरो होय बेहाल ॥ तबहुं विप्र नहि
आयो धाम । धरी उठाय रसोई ताम ॥ पराधीनकी ऐसी बात ।
औसर पायो आधी रात ॥ सोय रहे सब घरके लोग । आग न
दीवा कर्म संयोग ॥ भूखो प्रोहित निकसे प्रान । ततछिन बैठो
रोटी खान ॥ बेगन भोले लीनो ग्रास मैंडक मुंहमें आयो तास ॥
दांतन चले खबा नहिं जबै । काढ़ धरो थालीमें तब ॥ प्रात हुए
मैंडक पहिचान । तौ भी विप्र न करी गिलान ॥ तिथि पूरो कर
छोड़ी काय । पशुकी योनी उपजो आय ॥

सोरठा छन्द—१ घुघू २ काग ३ विलाव, ४ साधर ५ गिरध्र
पखेरुआ । ६ सूकर ७ अजगर भाव, ८ घाघ ९ गोह जलमें १०
मगर । दश भव इहि विधि थाय, दसों जन्म नरकहि गयो ।
दुर्गति कारण पाय, फली पाप बट बीजवत् ।

दोहा—निशि भोजन करिये नहीं, प्रगट दोष अविलोय ।

परमवसब सुख संपजो यह भव रोग न होय ॥

छप्पय (छन्द)

कोड़ी बुध बल हरे, कम्प गद करे कसारी । मकड़ी कारण .
पाय कोढ़ उपजे दुख भारी । जुआं जलोदर जने फांस गल विधा
बढ़ावे । बाल सबे सुरभंग बमन माखी उपजावे ॥ तालुवे छिद्र बीछू
भखत और व्याधि बहुकरहि सब । यह प्रगट दोष निश असनके
परमव दोष परोक्ष फल ॥

जो अघ इहि भव दुख करे, परमव क्यों न करेय । डसत सांप
पीड़े तुरत, लहर क्यों न दुख देय । सुवचन सुन डाहारजै, मूरख
मुदित न होय । मणिधर फण फेरे सही, नहीं सांप नहीं होय ॥
सुवचन सत गुरुके वचन, और न सुवचन कोय । सत गुरु वही
पिछानिये, जा उर लोम न होय ॥५॥ भूधर सुवचन सांभलो, स्वपर-
पक्ष कर बौन । समुद्र रेणुका जो मिले, तोड़े तें गुण कौन ॥ इति

(६७) श्रीरविव्रत कथा

चौपाई—श्रीसुखदायक पार्सजिनेश । सुमति सुगति दाता परमेश ॥
सुमिरों शारद पद अखिन्द । तिनकर व्रत प्रगटो सानंद ॥१॥
वाणारस नगरी सुविशाल । प्रजापाल प्रगटो भूपाल ॥ मतिसागर
तहां सेठ सुजान । ताका भूप करे सन्मान ॥ २ ॥ तासु त्रिया
गुणसुन्दरि नाम । सात पुत्र ताके अभिराम ॥ षट् सुत भोग
करें परणीत । बाल रूप गुण धर सुविनीत ॥ ३ ॥ सहस्रकूट
शोभित जिन धाम । आये पति पति खंडित काम ॥ सुनि मुनि
आगम हर्षित भये । सर्व लोग बन्दनको गये ॥ ४ ॥ गुरु वाणी
सुनिके गुणबती । सेठिन तब जो करी बीमती ॥ ५ ॥ करुणा-

निधि भार्ये मुनिराय । सुनो मध्य तुम चित्त लगाय ॥ अब
 आषाढ सुदि पक्ष विचार । तब कीजै अंतिम रविवार ॥ ६ ॥
 अनशन अथवा लघु आहार । लवणादिक जो करे परिहार ॥
 नवफल युत पंचामृत धार । वसु प्रकार पूजो भवहार ॥ ७ ॥
 उत्तम फल इक्यासी जान । नवभ्रावक घर दीजो आन ॥ या
 विधि करो नव वर्ष प्रमाण । याते होय सर्व कल्याण ॥ ८ ॥
 अथवा एक वर्ष एक सार । कीजै रविव्रत मनहिं विचार ॥
 सुन साहुन निज घरको गई । व्रत निन्दासे निन्दित भई ॥ ९ ॥
 व्रत निन्दासे निर्धन भये । सात पुत्र अयोध्यापुर गये ॥ तहाँ
 जिनदत्त सेठ गृह रहे । पूर्वं दुःकृतका फल लहैं ॥ १० ॥ मात
 पितां गृह दुःखित सदा । अवधि सहित मुनि पूछे तदा ॥ दया-
 वन्त मुनि ऐसे कहो । व्रत निन्दासे तुम दुःख लहो ॥ ११ ॥ सुन
 गुरु वचन बहुरि व्रत लयो । पुण्य कियो घरमें धन भयो ॥ भवि-
 जन सुनो कथा सम्बन्ध । जहाँ रहते थे वे सब नन्द ॥ १२ ॥ एक
 दिवस गुणधर सुकुमार । घास ले आये गृह द्वार ॥ क्षुधा वन्त
 भावज पे गयो । दंत बिना नहिं भोजन दयो ॥ १३ ॥ बहुरि गये
 जहाँ भूलों दन्त । देखो तासे अहि लिपटन्त ॥ फणिपतिकी तहाँ
 विनती करी । पद्मावति प्रगटी सुंदरी ॥ १४ ॥ सुन्दर मणि-
 मय पारसनाथ । प्रतिमा पंचरत्न शुभ हाथ ॥ देकर कहो कुंवर
 कर भोग । करो क्षणक पूजा सयोग ॥ १५ ॥ आनखिं ब निज घरमें
 धरो । तिहकर तिनको दारिद्र्य हरो ॥ सुख बिलास सेबे सब
 नन्द । निन प्रति पूजों पार्स जिनेन्द्र ॥ १६ ॥ साकेत नगरी
 अमिराम । जिन प्रसाद राचा शुभ धाम ॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य

मूंकाला । ये मंत्रोंमें मंत्र निराला, सुखसे पूर पूर पूर ॥२॥ सब सुख
लो जैनी भाई, ये छल है बहुत दुख दाई । है निश्चय धरम सदाई,
विपदा चूर चूर चूर ॥ ३ ॥ कोई रंचक दगा न करना, छलियासे
डरते रहना । सब मनमें सदा सुमरना, जिनका नूर नूर नूर ॥४॥
हे सरल स्वभावी जैनी, इस छलकी धारा पैनी । “विद्या” मत
चढ़ये नसेनी, श्रावक शूर शूर शूर ॥ ५ ॥

उत्तम सत्य

जगत में उत्तम सत्य महान !

बुद्धिवान गुणवान ॥ जगतमें ॥ झूठ बचन नहिं मुखसे बोलो, झूठ
महा दुख खान ॥ जगतमें ॥ दुनियामें है सत्यकी महिमा, सत्यही
मंत्र महान ॥ जगतमें ॥ दृढ़ प्रतिज्ञ बन जो सत बोले तो निश्चय
कल्याण ॥ जगतमें ॥ पर विश्वास घात न करना, और न करना
मान ॥ जगतमें ॥ पर वस्तुमें मन न लुभानो, चाहे जावें प्राण
॥ जगतमें ॥ सत्य सत्य सब नित्य ही सुमरो, गाकर उसका
गान ॥ जगतमें ॥ उत्तम सत्यकी माला जपलो, धरकर हृदे ध्यान
॥ जगतमें ॥ हाथ जोड़ सब शीश नवावें, दे प्रभु यह वरदान ॥ जगत
में ॥ विद्या विनय यही है प्रभुजी, पाऊं उच्च स्थान ॥ जगतमें ॥

उत्तम शौच

जैनी धारियो जी, उत्तम शौच आज मन भाया ॥ टेक ॥ दुख दाई ला-
लच दुख देता सुनलो उसका हाल । सच्चे मनसे लोभ त्याग दो
ये जीका जंजाल ॥ १ ॥ टेक ॥ कौन कहत है लोभ बिना तुम, होबोगे
कंगाल । दूर हटाओ दिलसे इसको कैसा रही ल्याल ॥ २ ॥ टेक ॥
निलोभी बननेकी शिक्षा प्रभुसे लेलो आज । उत्तम शौचकी जाय

चाहिये ॥ ४ ॥ नर भव महा दुर्लभ रतन मुश्किलसे “विद्या” है
मिला ॥ तो क्या बिना तपके इसे, योही गमाना चाहिये ॥ ५ ॥

उत्तम त्याग (राग-बंजारा)

मन उत्तम त्याग समाया, नरभव जीवनका पाया । है दान
चार परकारा, दे औषधि दान अहारा ॥ टेक ॥ दिलअभय शास्त्र
मनमाया, नरभव जीवनका पाया । तप, राग द्वेष, निरवारे, मेरे
कर्म शत्रुको मारे । मुनियोंने देह तपाया, मेरे मन त्याग सुहाया ॥ २ ॥
ये जीवन बहु दुखदाई, ये विपदा तप बिन आई । क्यों पाप कूप
खुदवाया, नर भव जीवनका पाया ॥ ३ ॥ दुनिया भी अन्तमें
न्यारी “विद्या” निश्चय है स्वारी । कह प्रभुसे नेह लगाया, मेरे
मन त्याग समाया ॥ ४ ॥

(उत्तम आकिंचन)

(रघुवर कौशल्याके लाल मुनिकी यज्ञ रचाने वाले)

उत्तम आकिंचन व्रतधार जैनी मात्र कहाने वाले । जनी मात्र कहाने
वाले, त्यागका रूप दिखाने वाले ॥ १ ॥ त्यागो चौबिस परिग्रह
भेद । फिर घर तीरथ सिखर सम्भेद करना अवश्यक नहीं खेद,
धर्मकी बाढ़ बढ़ाने वाले ॥ २ ॥ निश्चय जिनबाणी श्रद्धान,
जगमें जैनी धर्म प्रधान । कहते बुद्धिवान गुणवान, जग उपदेश
सिखाने वाले ॥ ३ ॥ ये है दुखदाई संसार, इसमें सुखपाना दुश्वार ।
जीवके दुश्मन कई हजार, पग पग दुःख दिलाने वाले ॥ ४ ॥
है दुनियां निस्सार जायेंगे सब कोई हाथ पसार । “विद्या”
दान चार परकार, मुक्तिकी राह बताने वाले ॥ ५ ॥

नोट—श्री मतो विद्यावतो कृत “विद्याविनोद” नामक बड़ा संग्रह अलग
तैयार हो रहा ।

वह जिय जानै, या प्रभु केवल जानी ॥ कुछ शुभ भावन कर या जियने, सुरगति सुन्दर पाई । पर मन इच्छित सुख नहिं पायो, दुख पायो अधिकाई ॥ रंक भयो, लख सम्पत्त परकी, झुर झुर बदन झिरायो । देख २ सुख भोग पराये, कर चिन्ता, दुख पायो ॥ बहु दुख माना, चिन्ता कीनी, रुदन किया दुःखदाई । जब मृत्युसे मास छः पहिले, गलमाला मुरझाई ॥ हा हा ! यह सुख भोग छुटेंगे अब होगी धिति पूरी । इच्छा मनकी पूरी नाहीं, रह गई हाय अधूरी ॥ कोई पुन्य उदय जब आयो, तब मानुष गति पाई । कर्म उदय कर या गति मांहो, कष्ट अनेक लहाई ॥ पुत्र बिना दुखिया नर कोई, चिन्तत मनमें ऐसे । मम धन संपत्ति कौन भोगवै, नाम चलेगा कैसे ॥ होत पुत्र मरजाय दुखी तब, यह कह रुदन मचावै । जो ना होता तो अच्छा था, कष्ट सहा नहिं जावै ॥ जीयो पुत्र भयो दुर्घ्यसनी धन सम्पत्ति सब खोयो । अब दुख मानत मातपिता सब, कुलका नाम डुबोयो ॥ मित्र स्वारथी स्वारथ सावन कर आंखें दिखलावै । बैरो बनकर धन यश प्राणन, का ग्राहक बन जावै ॥ कुलटा नारी कहल कारणी, कर्कश बचन उचारै । दोऊ कुलकी लाज गंवावै, पतिको विष दे मारे ॥ वेश्या-गामी, परतिय लम्पट, ज्वारी, मांसाहारी । मद मतवाले पतिसे दुखिया हैं पतिबरता नारी ॥ पुत्र पिता पर अरि सम टूटै, चाहै यह मर जावै । पिता पुत्र पर रुष्ट होय कर, घर से दूर करावै ॥ भाई भाई लड़त स्वान सम, हैं प्राणनके लेवा । धार कषाय उपाधि मचावै, हैं दोऊ दुख देवा ॥ विधवा नारि पती बिन दुखिया बिन नारी पति कोई । कोई बाला बूढ़ पती पा,

ऐसा कहिये, नास न जाको होई ॥ जल बुद् बुदवत् जीवन जगमें, आस नहीं इक दिनकी । काल बली मुख खोलत जोई, बाट एक पल छिनकी ॥ फिर जगमें, किससे मोह कीजे, कौन बस्तु धिर कहिये । ऐसे जग जंजाल जालमें, फँसकर बहु दुख लहिये ॥ कूप भांग पड़ीको पीकर, सबने सुध बुध खोई । उत्तम नर भव क्षेत्र पायकर, बेल न सुखकी बोई ॥ धर्म साध, परहित नहिं कीता, योही जन्म गँवाया । मूढ़ पुरुषने रत्न अमोलक, सागर बीच डुबाया ॥ सुख चाहत भी सुख नहिं पावत, दुख पाव संसारी । याका कारण, मोह अज्ञता, अरु मिथ्यात दुखारी ॥ जो चाहे सुख, जिय संसारी, आपा परको जान । हित अनहित अरु पाप पुन्यका, सभी भेद पहिचानै ॥ विश्व प्रेम हिरदय बिच धारै, पर उपकारी होवै । पाप पंक आतम पर लागे संजम जलसे धोवै ॥ दर्शन, ज्ञान, सु चारित्र पालै, इच्छा भाव घटावै । पंख महाव्रत धारण करके, जगसे मोह हटावै ॥ यह जग वस्तु समस्त विनासे, इनसे ममता त्यागै । आतम चिंतवन कर, निजमनमें, आतम हितमें लागै ॥ मैं आतम परमात्म, चिद् आनन्द रूप सुख रूपी । अजर अमर गुण ज्ञान शांतिमय हूँ आनंद स्वरूपी ॥ यह तन रूप स्वरूप न मेरो, मैं चेतन अविनाशी । ज्ञाता दृष्टा सुख अनन्त मय, हूँ शिवपुर का वासी ॥ मेरी केवल ज्ञान ज्योतिसे, भरम तिमर नस जावे । मैं ऐसा शुद्धात्म, चिदानन्द, जब यह जीव लखावे ॥ तब ही कर्म कलंक बिनासे, जीव अमर पद पावै । मिलै निराकुल सुख अविनाशी, परमात्म कहलावै ॥ आवे कब वह शुभ दिन जब मम, ज्ञान “ज्योति” जग जावै । सत्य अमर आतम को पाकर, मम जियरा सुख पावै ॥

‘दोहा—मेरी है यह भावना, सुख पावे संसार ।

मिले निराकुलता मुझे, हो आनन्द अपार ॥